संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
द्वारा निर्धारित

संस्कृतभाषा का प्रमाणपत्रीय पाठ्यक्रम

(निर्धारित ग्रन्थों के मूलपाठ का हिन्दी अनुवाद,
व्याख्या, टिप्पणी तथा निर्धारित
व्याकरण-विषयों का विश्लेषण)

अनुवादिका एवं व्याख्याकर्त्री
डा० (श्रीमती) मधुबाला

प्रकाशक
ईस्टर्न बुक लिंकर्स
: दिल्ली :

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
द्वारा निर्धारित

संस्कृतभाषा का प्रमाणपत्रीय पाठ्यक्रम

(निर्धारित ग्रन्थों के मूलपाठ का हिन्दी अनुवाद, व्याख्या, टिप्पणी तथा निर्धारित व्याकरण-विषयों का विश्लेषण)

अनुवादिका एवं व्याख्याकर्त्री
डा० (श्रीमती) मधुबाला

प्रकाशक
ईस्टर्न बुक लिंकर्स
: दिल्ली :

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्रकाशक :
ईस्टर्न बुक लिंकर्स
५८२५; न्यू चन्द्रावल, जवाहर नगर दिल्ली-११०००७

© लेखक

प्रथम संस्करण : १९८२

मूल्य : रु० ९५/-

मुद्रक : अमर प्रिंटिंग प्रेस (श्याम प्रिंटिंग एजेन्सी);
८/२५, विजय नगर, डबल स्टोरी, दिल्ली-११०००९

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विषय-सूची

(अ) संस्कृत मूल ग्रन्थ — पृ०

(१) श्रीमद्भगवद्गीता—अध्याय १६ — १-२०

(२) पञ्चतन्त्र—अपरीक्षितकारकम् — २१-८१
(आरम्भ से मत्स्यमण्डूक कथा तक)

(ब) व्याकरण

(१) सन्धि—(सामान्य नियम) — ८३-१०६
दीर्घ—गुण—वृद्धि—यण—अयादि — पूर्वरूप—अनुस्वार—पर-सवर्ण—विसर्ग ।

(२) शब्द रूप

(क) पुंल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग — १०६-११६
अकारान्त—इकारान्त—उकारान्त—ऋकारान्त

(ख) स्त्रीलिङ्ग — ११६-११८
आकारान्त—ईकारान्त

(ग) हलन्त—(पुंल्लिङ्ग एवं स्त्रीलिङ्ग) — ११८-१२२
बलवत्—गतवत्—राजन्—आत्मन्—धनिन्—वाक्—सरित्—परिषत्—विपत्—जगत्—नामन् ।

(घ) सर्वनाम—(सभी लिङ्गों में)
सर्व—यत्—तत्—एतत्—किम्—अस्मत्—युष्मत् ।

(३) क्रियारूप—(लट्, लृट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् लकारों में)
वद्—दृश्—हस्—पा—खाद्—जि—नी—सेव्—लभ्—रभ्—ब्रू+प्रस्—हन्—दा—दिव्—नृत्—श्रि+चि—भिद्—छिद्—मुच्—विद्—सिच्—सृज्—कृ—जन्—चुर्—कथ्—गण्—भक्ष् ।

(४) प्रक्रिया — १२८-१६५

(क) णिच् — १६५-१६८

(ख) कृत्प्रत्यय — १६८-१७५
क्त—क्तवतु—क्त्वा(ल्यप्)—तव्यत्—अनीयर्—यत्—तुमुन् ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

श्रीमद्भगवद्गीता

अध्याय १६

दैवासुरसम्पद्विभागयोग

अवतरणिका एवं सार

श्रीमद्भगवद्गीता के सातवें अध्याय के पन्द्रहवें श्लोक में और नवें अध्याय के ग्यारहवें से चौदहवें श्लोक तक दैवी और आसुरी प्रकृतियों का संक्षेप में वर्णन हुआ है, किन्तु उन दोनों का विस्तृत विवेचन सोलहवें अध्याय में किया गया है। इसीलिए इसका नाम 'दैवासुरसम्पद्विभागयोग' रखा गया है।

इस अध्याय में चौबीस श्लोक हैं। तीन प्रकरण हैं। पहला प्रकरण पहले से पाँचवें तक पांच श्लोकों का है जिसमें फलसहित दैवी और आसुरी सम्पदा का कथन है। दूसरा, छठे से बीसवें तक पन्द्रह श्लोकों का है जिसमें आसुरी सम्पदा युक्त पुरुषों के लक्षण और उनकी अधोगति का निरूपण है। और तीसरा, इक्कीसवें से चौबीसवें तक चार श्लोकों का है जिसमें काम-क्रोध-लोभरूप शास्त्रविपरीत आचरणों को त्यागने और शास्त्र के अनुकूल आचरण करने के लिये प्रेरणा की गई है।

पहले श्लोक में नौ, दूसरे में ग्यारह, तीसरे में छः—इस प्रकार दैवी सम्पत्ति के छब्बीस लक्षणों का, चौथे में आसुरी सम्पत्ति के छः लक्षणों का क्रमशः मुक्ति और बन्धन रूप सामान्य फल बतलाया है। छठे में आसुरी सम्पत्ति का विस्तार से वर्णन सुनने की आज्ञा का, सातवें-आठवें में आसुर पुरुषों के अज्ञानपूर्ण सिद्धान्त का, नवें से बारहवें तक उस सिद्धान्त का आश्रय करने वालों के मोहजनित दुराचार का और तेरहवें से पन्द्रहवें तक उनके मनोरथों का वर्णन है। सोलहवें में दुराचार का फल नरक की प्राप्ति बताया गया है। सत्रहवें, अठारहवें में उनके दुर्गुणों का और उन्नीसवें-बीसवें में फलस्वरूप आसुरी योनि और नरक की प्राप्ति का वर्णन है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इक्कीसवें श्लोक में काम-क्रोध और लोभ को नरक के द्वार बतलाकर बाईसवें में उनसे रहित होकर साधन करने से परमात्मा की प्राप्ति बतलायी है। तेईसवें में शास्त्रविधि को त्यागकर स्वेच्छापूर्वक आचरण करने से शुभ फल का अभाव बतलाकर चौबीसवें में शास्त्र की आज्ञानुसार कर्म करने की प्रेरणा करते हुए अध्याय का उपसंहार किया है।

श्रीमद्भगवद्गीता

षोडशोऽध्यायः

अध्याय १६

श्रीभगवानुवाच—

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥१॥

अन्वय—अभयम्, सत्त्वसंशुद्धिः, ज्ञानयोगव्यवस्थितिः, दानम्, दमः, च, यज्ञः, च स्वाध्यायः, तपः, आर्जवम्।

शब्दार्थ—अभयम् = भय का अभाव, सत्त्वसंशुद्धिः = अन्तः करण की शुद्धिः, ज्ञानयोगव्यवस्थितिः = तत्त्वज्ञान के लिए ध्यानयोग में निरन्तर दृढ़ स्थिति, च = और, दानम् = सात्त्विक दान, दमः = इन्द्रियों का दमन, यज्ञः = देव पूजादि और अग्निहोत्रादि उत्तम कर्मों का आचरण, स्वाध्यायः = ऋक् आदि वेदों का अध्ययन करना अथवा वेदशास्त्रों के पठनपाठनपूर्वक भगवान् के नाम और गुणों का कीर्तन, च = तथा, तपः = स्वधर्मपालन के लिए कष्ट सहन करना (एवं), आर्जवम् = शरीर और इन्द्रियों सहित अन्तः-करण की सरलता।

अनुवाद—निर्भयता, अन्तःकरण की शुद्धि, ज्ञान और योग (दोनों) में स्थिर हो जाना, दान, दम, यज्ञ, स्वाध्याय, तप और सरलता।

व्याख्या—सत्त्वसंशुद्धिः = श्रीशंकराचार्य के अनुसार—"सत्त्वसंशुद्धिः सत्त्वस्य अन्तःकरणस्य संव्यवहारेषु परवञ्चनमायानृतादिपरिवर्जनं शुद्धभावेन इत्यर्थः।" अर्थात् अन्तःकरण की शुद्धि, व्यवहार में दूसरे के साथ ठगाई, कपट और झूठ आदि अवगुणों को त्यागकर शुद्धभाव से आचरण करना ही

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सत्त्वसंशुद्धि है। ज्ञानयोगव्यवस्थितिः=परमात्मा के स्वरूप को तत्त्व से जानने के लिए सच्चिदानन्द परमात्मा के स्वरूप में एकीभाव से ध्यान की निरन्तर गाढ़ स्थिति का ही नाम ज्ञानयोग व्यवस्थिति है। शंकराचार्य के मत में शास्त्र और आचार्य से आत्मा आदि पदार्थों को जानना ही "ज्ञान" है और उन जाने हुए पदार्थों का इन्द्रियादि के निग्रह (संयम) से प्राप्त एकाग्रता द्वारा अपनी आत्मा में प्रत्यक्ष अनुभव कर लेना 'योग' है।[1]

"ज्ञानं शास्त्रतः आचार्यतः च आत्मादिपदार्थानाम् अवगमः। अवगतानाम् इन्द्रियाद्युपसंहारेण एकाग्रतया स्वात्मसंवेद्यतापादनं योगः।" ज्ञान और योग दोनों में स्थिर हो जाना 'ज्ञानयोगव्यवस्थिति' है। दान—अपनी शक्ति के अनुसार अन्नादि वस्तुओं का विभाग करना 'दान' कहलाता है—'दानं यथाशक्ति संविभागः अन्नादीनाम् (शांकरभाष्य)।

दम—बाह्य इन्द्रियों का संयम 'दम' है।

इस श्लोक की अन्वय सिद्धि के लिए हमें इसी अध्याय के तृतीय श्लोक से "भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत"[2] इस पद्यांश का अध्याहार करना पड़ता है। अध्याहार करने पर यह अर्थ हुआ कि अभय आदि गुण अथवा लक्षण दैवी संपत्तियुक्त हुए पुरुष में होते हैं और भविष्य में जिसका कल्याण होना निश्चित है, उस पुरुष में ये लक्षण होते हैं।

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥२॥

अन्वय—अहिंसा, सत्यम्, अक्रोधः, त्यागः, शान्तिः, अपैशुनम्, भूतेषु दया, अलोलुप्त्वम्, मार्दवम्, ह्रीः, अचापलम्।

शब्दार्थ—अहिंसा=(मन, वाणी और शरीर से किसी प्रकार भी) किसी को कष्ट न देना, सत्यम्=यथार्थ और प्रिय भाषण, अक्रोधः=(अपना अपकार करने वाले पर भी) क्रोध न करना, त्यागः=कर्मों में कर्तृत्व के अभिमान का त्याग, शान्तिः=अन्तःकरण की उपरामता अर्थात् चित्त की चञ्चलता का अभाव, अपैशुनम्=किसी की निन्दा न करना, भूतेषु दया=सब प्राणियों पर (हेतुरहित) कृपा करना, अलोलुप्त्वम्=(इन्द्रियों का विषयों के साथ संयोग होने पर भी) इन्द्रियों में विकार अथवा आसक्ति का न होना,

---

१. 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'—पातञ्जलयोगसूत्र
२. इस पद्यांश की व्याख्या इसी अध्याय के तृतीय श्लोक में की जायेगी।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मार्दवम्—कोमलता अर्थात् अक्रूरता, ह्रीः=लोक और शास्त्र से विरुद्ध आचरण में लज्जा, अचापलम्=व्यर्थ चेष्टाओं का अभाव ।

अनुवाद—अहिंसा, सत्य, क्रोध न करना, त्याग, शान्ति, निन्दा न करना, प्राणियों पर दया करना, विषयों के साथ संयोग होने पर भी आसक्ति न रखना, कोमलता, लज्जा और चञ्चलता का अभाव दैवी सम्पदा को प्राप्त हुए पुरुष के लक्षण हैं) ।

व्याख्या—सत्यम्—अप्रियता और असत्य से रहित यथार्थ वचन ।

'सत्यम् अप्रियानृतवर्जितं यथाभूतार्थवचनम्' । (शांकर भाष्य) अन्तःकरण और इन्द्रियों द्वारा जैसा निश्चय किया हो वैसे का वैसा प्रिय शब्दों में कहने का नाम सत्य भाषण है ।

अक्रोधः—दूसरों के द्वारा अपशब्द दिये जाने अथवा ताड़ित होने पर उत्पन्न हुए क्रोध को शान्त कर लेना । त्यागः—शंकराचार्य ने 'त्याग' का अर्थ 'संन्यास' किया है । गीता के १८वें अध्याय में संन्यास और त्याग शब्दों का अर्थ स्पष्ट किया गया है—

काम्यानां कर्मणां न्यासं संन्यासं कवयो विदुः ।
सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः ॥

सकाम कर्मों के त्याग को संन्यास और सभी कर्मों के फल त्याग को त्याग कहते हैं । चाहे काम्य कर्मों का स्वरूप से त्याग करना हो और चाहे समस्त कर्मों का फल छोड़ना हो, सभी प्रकार से संन्यास और त्याग शब्दों का अर्थ एकमात्र 'त्याग' ही है ।

अपैशुनम्—"पररन्ध्रप्रकटीकरणं पैशुनं तदभावः अपैशुनम्," (शांकर-भाष्य) ।

दूसरे के छिद्रों को प्रकट करना पिशुनता (चुगली) है, उसका न होना अपिशुनता है ।

अलोलुप्त्वम्—'इन्द्रियाणां विषयसन्निधौ अविक्रिया' (शांकरभाष्य) । विषयों के साथ संयोग होने पर भी इन्द्रियों में विकार न होना ।

अचापलम्—'असति प्रयोजने वाक्पाणिपादादीनाम् अव्यापारयितृत्वम्' (शां० भा०) बिना किसी प्रयोजन के वाणी, हाथ, पैर आदि की व्यर्थ क्रियाओं का न करना ।

इस श्लोक की अन्वयसिद्धि के लिए हमें इसी अध्याय के तृतीय श्लोक से 'भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत' इस पद्यांश का अध्याहार करना पड़ता है । अध्याहार करने से यह अर्थ निकलता है कि अहिंसा आदि गुण दैवी सम्पदा को प्राप्त हुए पुरुष के लक्षण हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥३॥

अन्यव—तेजः, क्षमा, धृतिः, शौचम्, अद्रोहः, नातिमानिता, भारत, दैवीम्, सम्पदम्, अभिजातस्य 'भवन्ति' ।

शब्दार्थ—तेजः=तेज, क्षमा=क्षमा, धृतिः=धैर्य,शौचम्=(बाहर भीतर की) शुद्धि, अद्रोहः=किसी में शत्रुभाव का न होना (और अपने में), नाति-मानिता=पूज्यता के अभिमान का अभाव, भारत=हे अर्जुन, दैवीम्=दैवीं, सम्पदम्=दैवी सम्पदा को, अभिजातस्य=प्राप्त हुए पुरुष के लक्षण, भवन्ति=होते हैं ।

अनुवाद—तेजस्विता, क्षमा, धैर्य, शुद्धि, द्रोह न करना, अपने में अतिशय पूज्यभाव का न होना—(यह सब) हे अर्जुन ! दैवी सम्पदा को प्राप्त हुए पुरुष के लक्षण हैं ।

व्याख्या—तेजः=श्रेष्ठ पुरुषों की उस शक्ति का नाम तेज है, जिसके प्रभाव से उनके सामने विषयासक्त और नीच प्रकृति वाले मनुष्य भी प्रायः दुराचरण से रुककर उनके कथनानुसार श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्त हो जाते हैं । शङ्कराचार्य के अनुसार—"तेजः प्रागल्भ्यं न त्वग्गता दीप्तिः" अर्थात् तेज का अर्थ है प्रागल्भ्य (तेजस्विता), शारीरिक चमक नहीं । क्षमा—'आक्रुष्टस्य ताडितस्य वा अन्तर्विक्रियानुत्पत्तिः' अपशब्द से सम्बोधित अथवा ताड़ना दी जाने पर भी अन्तःकरण में विकार उत्पन्न न होना । उत्पन्न हुए विकार को शान्त कर देना अक्रोध है । क्षमा और अक्रोध में इतना ही भेद है । धृतिः—शंकराचार्य के अनुसार शरीर और इन्द्रियादि में शैथिल्य उत्पन्न होने पर उस शैथिल्य को हटाने वाली अन्तःकरण की वृत्ति का नाम 'धृतिः' है । जिसके द्वारा उत्साहित की हुई इन्द्रियाँ और शरीर कार्य में नहीं थकते ।

'धृतिः देहेन्द्रियेषु अवसादं प्राप्तेषु तस्य प्रतिषेधकः अन्तःकरणवृत्तिविशेषो येन उत्तम्भितानि करणानि देहः च न अवसीदन्ति ।'

शौचम्—बाहर और भीतर की शुद्धि । सत्यतापूर्वक शुद्ध व्यवहार से द्रव्य की और उसके अन्न से आहार की तथा यथायोग्य व्यवहार से आचरणों की और जलमृत्तिकादि से शरीर की शुद्धि को बाहर की शुद्धि कहते हैं तथा राग-द्वेष, कपट आदि विकारों का नाश होकर अन्तःकरण का शुद्ध हो जाना भीतर की शुद्धि कही जाती है । शङ्कराचार्य ने भी दो प्रकार की शुद्धियाँ कही हैं—मिट्टी और जल आदि से बाहर की शुद्धि एवं कपट, रागादि की कालिमा का अभाव होकर मन बुद्धि की निर्मलता रूप भीतर की शुद्धि—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"शौचं द्विविधं मृज्जलकृतं बाह्यम् आभ्यन्तरं च मनोबुद्ध्योः नैर्मल्यं मायारागादिकालुष्याभाव एवं द्विविधं शौचम् ।"

अद्रोहः—"परजिघांसाभावः अहिंसनम् (शां० भा०) । दूसरे का घात करने की इच्छा का अभाव अर्थात् हिंसा न करना 'अद्रोह' है । नातिमानिता—"अत्यर्थं मानः अतिमानः स यस्य विद्यते सः अतिमानी तद्भावः अतिमानिता तदभावो नातिमानिता आत्मनः पूज्यतातिशयभावनाभाव इत्यर्थः ।" (शां०भा०) अपने अतिशय पूज्यभावना का होना 'नातिमानिता' है । दैवीं सम्पदम् अभिजातस्य—प्रथम श्लोक से लेकर तृतीय श्लोक तक कहे गए 'अभय' आदि लक्षण दैवीसम्पत्तियुक्त उत्पन्न हुए पुरुष में होते हैं । जो दैवी सम्पत्ति को साथ लेकर उत्पन्न हुआ है अर्थात् जो देवताओं की विभूति का योग्य पात्र है और भविष्य में जिसका कल्याण होना निश्चित है, उस पुरुष के ये सब लक्षण होते हैं ।

दम्भो दर्पोऽतिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम् ।।४।।

अन्वय—पार्थ, दम्भः, दर्पः, च, अभिमानः, च, क्रोधः, पारुष्यम्, अज्ञानम्, एव, आसुरीम्, सम्पदम्, अभिजातस्य ।

शब्दार्थ—पार्थ =हे पार्थ, दम्भः=पाखण्ड, दर्पः=घमण्ड, च=और, अतिमानः=अपने में अतिशय पूज्यभावना, च=तथा, क्रोधः=क्रोध, पारुष्यम्=कठोर वाणी, अज्ञानम्=अज्ञान, एव=भी (यह सब), आसुरीम्=आसुरी, सम्पदम्=सम्पदा को, अभिजातस्य=प्राप्त हुए पुरुष के लक्षण हैं ।

अनुवाद—हे पार्थ ! पाखण्ड, घमण्ड और अभिमान तथा क्रोध और कठोर वाणी एवं अज्ञान आसुरी सम्पदा को प्राप्त हुए पुरुष के लक्षण हैं ।

व्याख्या—अर्जुन को पृथा (कुन्ती) का पुत्र होने के कारण पार्थ कहा जाता है । अज्ञान=अविवेक । कर्तव्य और अकर्तव्यादि के विषय में उलटा निश्चय करना अज्ञान है । 'अज्ञानं च अविवेकज्ञानं मिथ्याप्रत्ययः कर्तव्याकर्तव्यादिविषयम् ।' (शां० भा०)

दम्भ आदि लक्षण आसुरी सम्पत्ति को ग्रहण करके उत्पन्न हुए मनुष्य के हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दैवी सम्पद्विमोक्षाय निबन्धायासुरो मता ।
मा शुचः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव ।।५।।

अन्वय—दैवी, सम्पत्, विमोक्षाय, आसुरी, निबन्धाय, मता, पाण्डव, मा, शुचः, दैवीम्, सम्पदम्, अभिजातः, असि ।

शब्दार्थ—दैवी सम्पत्=दैवी सम्पदा, विमोक्षाय=मुक्ति के लिए; आसुरी=आसुरी (सम्पदा), निबन्धाय=बान्धने के लिए, मता=मानी गई है, पाण्डव=हे अर्जुन, मा शुचः=शोक मत कर, दैवीम्=देवी, सम्पदम्=सम्पदा को, अभिजातः=प्राप्त हुआ, असि=हो ।

व्याख्या—इस श्लोक में दैवी एवं आसुरी—दोनों सम्पत्तियों का कार्य बतलाया गया है । दैवी सम्पत्ति संसार बन्धन से मुक्त करने के लिए है । आसुरी सम्पत्ति बन्धन के लिए है । इतना करने के पश्चात् अर्जुन के अन्तः-करण में संशययुक्त विचार उत्पन्न हुआ देखकर कि 'क्या मैं आसुरी सम्पत्ति से युक्त हूँ अथवा दैवी सम्पत्ति से श्रीकृष्ण भगवान् बोले—कि हे पाण्डव ! शोक मत कर, तू दैवी सम्पत्ति को लेकर उत्पन्न हुआ है ।

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च ।
दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु ।।६।।

अन्वय—पार्थ, अस्मिन्, लोके, भूतसर्गौ, द्वौ, दैवः, आसुरः एव, च, दैवः, विस्तरशः, प्रोक्तः, आसुरम्, मे, शृणु ।

शब्दार्थ—पार्थ=हे अर्जुन ! अस्मिन्=इस, लोके=संसार में, भूत-सर्गौ=भूतों के स्वभाव, द्वौ=दो प्रकार के माने गये हैं । दैवः=देवों के जैसा, च=और (दूसरा) आसुरः असुरों के जैसा, दैवः=देवों का स्वभाव, एव=हि, विस्तरशः=विस्तारपूर्वक, प्रोक्तः=कहा गया है, आसुरम्=असुरों के स्वभाव को; मे=मेरे से; शृणु=सुनो ।

अनुवाद—हे अर्जुन ! इस संसार में प्राणियों में स्वभाव दो प्रकार के माने गये हैं । देवों के जैसे और असुरों के जैसे । देवों का स्वभाव विस्तार से कहा गया है, असुरों के स्वभाव को मुझ से सुनो ।

व्याख्या—भूतसर्गौ—शंकराचार्य ने सर्ग का अर्थ सृष्टि किया है । इस संसार में दो सृष्टियाँ हैं । जिसकी रचना की जाय वह सृष्टि है, अतः दैवी सम्पत्ति और आसुरी सम्पत्ति से रचे हुए प्राणी भूत सृष्टि के नाम से कहे जाते हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सृष्टि दो प्रकार की होती है—दैवी सृष्टि एवं आसुरी सृष्टि । द्र० बृहदारण्यकोपनिषद् (१.३.१)

'द्वया ह प्राजापत्या देवाश्चासुराश्च' अर्थात् प्रजापति की दो सन्तानें हैं—देव और असुर ।

दैवी सृष्टि का वर्णन प्रारम्भ के 'अभयं सत्त्वसंशुद्धिः' इत्यादि श्लोकों द्वारा विस्तार से किया गया है किन्तु आसुरी सृष्टि का वर्णन विस्तार से नहीं किया गया अतः श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि हे पार्थ ! आसुरी सम्पत्ति का त्याग करने के लिये, उस आसुरी सृष्टि को विस्तारपूर्वक मुझसे सुन । इस अध्याय की समाप्तिपर्यन्त प्राणियों के विशेषणों द्वारा आसुरी सम्पत्ति दिखलाई जाती है, क्योंकि प्रत्यक्ष कर लेने से ही उसका त्याग हो सकता है ।

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः ।
न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते ॥७॥

अन्वय—आसुरा, जनाः, प्रवृत्तिम्, च, निवृत्तिम्, च, न, विदुः, तेषु, न, शौचम्, न, आचारः, च, न, सत्यम्, अपि, विद्यते ।

शब्दार्थ—आसुराः=आसुरी स्वभाव वाले, जनाः=मनुष्य, प्रवृत्तिम्=कर्तव्य कार्य में प्रवृत्त होने को, च=और, निवृत्तिम्=अकर्तव्य कार्य से निवृत्त होने को, च=भी, न=नहीं, विदुः=जानते हैं, तेषु=उनके, न=न, शौचम्=बाहर भीतर की शुद्धि है, न=न, सत्यम्=सत्य भाषण, अपि=ही, विद्यते=है ।

अनुवाद—आसुरी स्वभाव वाले मनुष्य कर्तव्यकार्य में प्रवृत्ति होने को और अकर्तव्यकार्य से निवृत्त होने को नहीं जानते हैं । (इसलिए) उनमें न (तो) बाहर भीतर की शुद्धि है, न श्रेष्ठ आचरण है और न सत्य भाषण है ।

व्याख्या—धर्म, अर्थ काम, मोक्ष—इस पुरुषार्थ चतुष्टय के साधन रूप किये जाने योग्य कार्य में प्रवृत्त होना प्रवृत्ति है, इसके विपरीत किसी अनर्थकारक कार्य से निवृत्त होना निवृत्ति है । आसुरी स्वभाव वाले मनुष्य प्रवृत्ति और निवृत्ति को नहीं जानते । इतना ही नहीं, उनमें न शुद्धि होती है, न सदाचार होता है और न सत्य ही होता है । अर्थात् आसुरी प्रकृति के मनुष्य अशुद्ध, दुराचारी, कपटी और मिथ्यावादी होते हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् ।
अपरस्परसम्भूतं किमन्यत्कामहैतुकम् ॥८॥

अन्वय—ते, आहुः, जगत्, अप्रतिष्ठम्, असत्यम्, अनीश्वरम्, अपरस्पर-सम्भूतम्, कामहैतुकम्, अन्यत्, किम् ।

शब्दार्थ—ते=वे (आसुरी प्रकृति वाले मनुष्य) आहुः=कहते हैं (कि), जगत्=संसार, अप्रतिष्ठम्=आश्रयरहित (और), असत्यम्=सर्वथा झूठा (एवं), अनीश्वरम्=बिना ईश्वर के, अपरस्परसम्भूत=अपने आप स्त्री-पुरुष के संयोग से उत्पन्न हुआ है, (इसलिए) कामहैतुकम्=केवल भोगों को भोगने के लिए है, मन्यत्=इसके अतिरिक्त और किम्=क्या है ।

अनुवाद—वे आसुरी प्रकृति वाले मनुष्य कहते हैं कि संसार आश्रय-रहित और सर्वथा झूठा है एवं बिना ईश्वर के अपने आप स्त्री-पुरुष के संयोग से उत्पन्न हुआ है, (इसलिए) केवल भोगों को भोगने के लिए ही है, इसके अतिरिक्त और क्या है ।

व्याख्या—आसुरी स्वभाव वाले व्यक्ति असत्यवादी होते हैं इसलिए उन्हें यह संसार झूठा प्रतीत होता है । उनके अनुसार धर्म अधर्म आदि इसका कोई आधार नहीं है अतः यह प्रतिष्ठा रहित है । निराधार होने के कारण यह अनीश्वर है । पुण्य पाप की अपेक्षा से इसका शासन करने वाला कोई स्वामी नहीं हैं अतः यह जगत् बिना ईश्वर का है । काम से प्रेरित हुए स्त्री-पुरुषों के संयोग से ही सारा जगत् उत्पन्न हुआ है—अतः इस जगत् का मूल कारण काम ही है, यह मत लोकायतिकों का है । शरीर को ही आत्मा मानने वाले एक सम्प्रदाय विशेष को 'लोकायतिक' कहा जाता है । इनके मत में स्त्री, पुत्र, धन सम्पत्ति से जो सुख होता है, वही स्वर्ग है । लोक में राजा ही परमेश्वर है । देह का नाश हो जाना ही मोक्ष है—मरणमेव मोक्षः । परलोक में होने वाला न तो स्वर्ग है, न मोक्ष और न परलोक में जाने वाली आत्मा ही है । वर्णाश्रम व्यवस्था अपने अपने कर्मानुसार है । जन्मान्तर के लिए कर्मों के फलाफल की कोई उपयोगिता नहीं है । यज्ञानुष्ठान अथवा भस्मावलेपन पाखण्डी तथा पौरुषहीन लोगों की आजीविका के साधन हैं । उनमें कोई तत्त्व तथा सत्य नहीं है । जो प्रत्यक्ष है वही सत्य है । आत्मा का धर्म चैतन्य है, वह शरीर में ही है । शरीर के बिना चैतन्य अन्यत्र नहीं रहता । अतः शरीर ही आत्मा है । शरीर के नष्ट होने पर आत्मा भी नष्ट हो जाती है । इस श्लोक में लोकायत (चार्वाक) मतानुयायियों के नास्तिक-वाद की ओर संकेत किया गया है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः ।
प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः ॥९॥

अन्वय—एताम्, दृष्टिम्, अवष्टभ्य, नष्टात्मानः, अल्पबुद्धयः, अहिताः, उग्रकर्माणः, जगतः, क्षयाय, प्रभवन्ति ।

शब्दार्थ—एताम्=इस, दृष्टिम्=दृष्टि को, अवष्टभ्य=अवलम्बन करके, नष्टात्मानः=नष्ट हो गया है स्वभाव जिनका (तथा), अल्पबुद्धयः=मन्द बुद्धि वाले, अहिताः=अपकार करने वाले, उग्रकर्माणः=क्रूरकर्मी मनुष्य, जगत्,=जगत् का, क्षयाय=नाश करने के लिए ही, प्रभवन्ति=उत्पन्न होते हैं ।

अनुवाद—इस दृष्टि (मिथ्या ज्ञान) को अवलम्बन करके नष्ट हुए स्वभाव वाले, मन्दबुद्धि वाले, (सबका) उपकार करने वाले, क्रूरकर्मी मनुष्य (केवल) जगत् का नाश करने के लिये ही उत्पन्न होते हैं ।

व्याख्या—यह संसार मिथ्या, निराधार तथा अनीश्वर है—इस मिथ्या ज्ञान रूपी दृष्टि का आश्रय लेकर जिनका स्वभाव भ्रष्ट हो गया है, जिनकी बुद्धि केवल भोगों को ही विषय करने वाली है, जो हिंसापरायण, संसार के शत्रु हैं, वे संसार का नाश करने के लिए ही उत्पन्न होते हैं ।

इस श्लोक में चार्वाक मतानुयायियों की ओर संकेत है ।

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः ।
मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः ॥१०॥

अन्वय—दम्भमानमदान्विताः, दुष्पूरम्, कामम्, आश्रित्य, मोहात्, असद्ग्राहान्, गृहीत्वा, अशुचिव्रताः, प्रवर्तन्ते ।

शब्दार्थ—दम्भमानमदान्विताः=दम्भ, मान और मद से युक्त हुए, दुष्पूरम्=किसी प्रकार भी न पूर्ण होने वाली, कामम्=कामना का आश्रित्य=आश्रय लेकर (तथा), मोहात्=अज्ञान से, असद्ग्राहान्=मिथ्या सिद्धान्तों को गृहीत्वा=ग्रहण करके, अशुचिव्रताः=भ्रष्ट आचरणों से युक्त हुए, प्रवर्तन्ते=वर्ताव करते हैं ।

अनुवाद=पाखण्ड, मान और मद से युक्त हुए, कभी पूर्ण न की जा सकने वाली कामना का अवलम्बन कर, अज्ञान से मिथ्या सिद्धान्तों को ग्रहण करके भ्रष्ट आचरणों से युक्त होकर इस संसार में प्रवृत्त होते हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः ।
कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः ॥११॥

अन्वय—प्रलयान्ताम्, अपरिमेयाम्, चिन्ताम्, उपाश्रिताः, च, कामोपभोगपरमाः, एतावत्, इति, निश्चिताः ।

शब्दार्थ—प्रलयान्ताम् = मरणपर्यंन्त रहने वाली, अपरिमेयाम् = अनन्त, चिन्ताम् = चिन्ताओं को, उपाश्रिताः = आश्रय किये हुए, च = और, कामोपभोगपरमाः = विषयभोगों के भोगने में तत्पर हुए, एतावत् = इतना मात्र ही, इति = ऐसे निश्चिताः = मानने वाले हैं ।

अनुवाद—मरणपर्यंन्त रहने वाली चिन्ता के आश्रित हुए तथा कामोपभोग में तत्पर हुए एवं इतना मात्र ही आनन्द है, ऐसा मानने वाले हैं।

व्याख्या—आसुरी प्रकृति वाले मनुष्य मरणपर्यंन्त चिन्ताग्रस्त तथा कामोपभोग के परायण होते हैं। शंकराचार्य के अनुसार शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध विषय काम हैं। इनके उपभोग में ही ये तत्पर रहते हैं तथा विषयों का उपभोग करना ही परम पुरुषार्थ है, ऐसा उनका निश्चय होता है "काम्यन्ते इति कामाः शब्दादयः तदुपभोगपरमाः, अयम् एव परमः पुरुषार्थो यः कामोपभोग इति, एवं निश्चितात्मान एतावद् इति निश्चिताः ।

इस श्लोक में चार्वाक मत की ओर संकेत है। चार्वाक विचारधारा के अनुसार यह जीवन त्याग, तपस्या और कष्ट के लिए नहीं है, बल्कि आनन्द तथा सुखोपभोग के लिए है। काम ही एक पुरुषार्थ है मोक्षादि नहीं। बृहस्पतिप्रोक्त सूत्र है—'काम एवैकः पुरुषार्थः' । उनका मत है कि—

यावज्जीवेत्सुखं जीवेदृणं कृत्वा घृतं पिबेत् ।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः ? ॥

अर्थात् जब तक जियो सुख पूर्वक जियो, ऋण लेकर भी घी पियो, इस शरीर के नष्ट हो जाने पर इसका पुनः आगमन कहाँ ?

चार्वाक लोग शरीर के साथ ही आत्मा का अस्तित्व मानते हैं। शरीर के नष्ट हो जाने पर आत्मा भी नष्ट हो जाती है। इसलिए वे सांसारिक भोगों की पूर्ति में लगे रहते हैं क्योंकि उन्हें परलोक की चिन्ता नहीं होती। इसी बात को यहाँ आसुरी प्रकृति वाले मनुष्यों के सम्बन्ध में बताया है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः ।
ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान् ॥१२॥

अन्वय—आशापाशशतैः, बद्धाः, कामक्रोधपरायणाः कामभोगार्थम्, अन्यायेन, अर्थसञ्चयान्, ईहन्ते ।

शब्दार्थ—आशापाशशतैः=आशारूपी सैंकड़ों पाशों से, बद्धाः=बन्धे हुए, कामक्रोधपरायणाः=काम क्रोध के परायण हुए, कामभोगार्थम्=विषय-भोगों (की पूर्ति) के लिए, अन्यायेन=अन्यायपूर्वक, अर्थसञ्चयान्=धनादिक पदार्थों को संग्रह करने की, ईहन्ते=चेष्टा करते हैं ।

अनुवाद—आशारूपी सैंकड़ों पाशों से जकड़े हुए, काम-क्रोध का आश्रय लिए हुए, विषय-भोगों की पूर्ति के लिए अन्यायपूर्वक धन-समुदाय को इकट्ठा करने की चेष्टा करते हैं ।

व्याख्या—आसुरी प्रकृति वाले मनुष्य सभी वस्तुओं को प्राप्त करने की आशा में लगे रहते हैं और कामक्रोध के वश में होते हैं । ऐसे पुरुष धर्म कर्म के लिए नहीं अपितु भोग्य वस्तुओं का उपभोग करने के लिए, दूसरे के धन का अपहरण आदि अनेक प्रकार की पापमय युक्तियों द्वारा धन इकट्ठा करने की चेष्टा में लगे रहते हैं ।

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम् ।
इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥१३॥

अन्वय—मया, अद्य, इदम्, लब्धम्, इमम्, मनोरथम्, प्राप्स्ये, मे, इदम्, धनम्, अस्ति, पुनः, अपि, इदम्, भविष्यति ।

शब्दार्थ—मया=मैंने, अद्य=आज, इदम्=यह, लब्धम्=पाया है, इमम्=इस, मनोरथम्=मनोरथ को, प्राप्स्ये=प्राप्त करूँगा, मे=मेरे पास, इदम्=यह (इतना), धनम्=धन, अस्ति=है, पुनः=फिर, अपि=भी, इदम्=यह, भविष्यति=होगा ।

अनुवाद—मैंने आज यह (धन) प्राप्त किया है तथा अमुक मनोरथ को प्राप्त करूँगा । मेरे पास इतना धन है; फिर भी यह (धन) (मेरे पास) होगा ।

व्याख्या—आसुरी जन यह आशा करते हैं कि मेरा धन उत्तरोत्तर बढ़ेगा । आज जितना धन मेरे पास है, उतना आने वाले वर्षों में भी हो जाएगा । उनकी धनलिप्सा बनी ही रहती है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि ।
ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी ॥१४॥

अन्वय—असौ, शत्रुः मया, हतः, अपरान्, अपि, अहम्, हनिष्ये, अहम्, ईश्वरः च, भोगी, अहम्, सिद्धः बलवान्, सुखी ।

शब्दार्थ—असौ=वह, शत्रुः=शत्रु, मया=मेरे द्वारा, हतः=मारा गया, अपरान्=दूसरे को, अपि=भी, अहम्=मैं, हनिष्ये=मारूँगा, अहम्=मैं, ईश्वरः=ईश्वर, च=और, भोगी=भोगने वाला, अहम्=मैं, सिद्धः=सिद्धियों से युक्त, बलवान्=बलयुक्त, सुखी=सुखी ।

अनुवाद—वह (अमुक नामक) शत्रु मेरे द्वारा मारा गया (और) दूसरे (शत्रुओं) को भी मैं मारूँगा । मैं ईश्वर और (ऐश्वर्य को) भोगने वाला हूँ (और) मैं सिद्धियों से युक्त, बलशाली (और) सुखी हूँ ।

व्याख्या=आसुरी जन अनुभव करते हैं कि वे छल कपटादि से धन संचय करके ऐश्वर्यशाली हो जायेंगे और वे दूसरे निर्बल शत्रुओं को मार डालेंगे । वे अपने को भोगी, सिद्ध, बलवान् और सुखी समझते हैं । इससे उनका ईश्वरत्व सिद्ध है ।

आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योस्ति सदृशो मया ।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः ॥१५॥

अन्वय—आढ्यः, अभिजनवान्, अस्मि, मया, सदृशः, अन्यः, कः, अस्ति, यक्ष्ये, दास्यामि, मोदिष्ये, इति, अज्ञानविमोहिताः ।

शब्दार्थ—आढ्य=धनवान्, अभिजनवान्=उच्च कुटुम्ब वाला, अस्मि=हूँ, मया=मेरे, सदृशः=समान, अन्यः=अन्य, दूसरा, कः=कौन, अस्ति=है, यक्ष्ये=यज्ञ करूँगा, दास्यामि=(दान) दूंगा, मोदिष्ये=हर्ष प्राप्त करूँगा, इति=इस प्रकार के, अज्ञान-विमोहिताः=अज्ञान से मोहित हैं ।

अनुवाद—(मैं) धनवान् और बड़े परिवार वाला हूँ, मेरे जैसा अन्य कौन है ? मैं यज्ञ करूँगा, दान दूंगा, हर्ष प्राप्त करूँगा—इस प्रकार (आसुरी जन) अज्ञान से मोहित होते हैं ।

व्याख्या—आसुरी लोग स्वयं को धनी, कुलीन समझते हैं । उनके मत में कोई अन्य उनकी समता नहीं कर सकता । वे यज्ञ द्वारा भी दूसरों का अपमान

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

करेंगे, नर्तकों को धन आदि देंगे और नर्तकों के साथ आनन्द मनायेंगे। इस प्रकार वे अपने विवेकाभाव से नाना प्रकार की भ्रान्तियों में पड़े रहते हैं।

अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः।
प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥१६॥

अन्वय—अनेकचित्तविभ्रान्ताः, मोहजालसमावृताः, कामभोगेषु प्रसक्ताः, अशुचौ, नरके, पतन्ति।

शब्दार्थ—अनेकचित्तविभ्रान्ताः=अनेक प्रकार से भ्रान्त हुए चित्त वाले, मोहजालसमावृताः=मोहरूप जाल में फंसे हुए, कामभोगेषु=विषय-भोगों में, प्रसक्ताः=अत्यन्त आसक्त हुए, अशुचौ=अपवित्र, नरके=नरक में, पतन्ति=गिरते हैं।

अनुवाद—अनेक प्रकार से भ्रान्त हुए चित्त वाले, मोह (अज्ञान) रूप जाल में फंसे हुए, विषय भोगों में अत्यन्त आसक्त हुए, अपवित्र नरक में गिरते हैं।

व्याख्या—आसुरी लोग अपने चित्त को विभिन्न कल्पनाओं द्वारा भ्रान्त कर लेते हैं। वे अज्ञानी अर्थात् इष्ट अनिष्ट वस्तु विवेचन शक्ति शून्य होते हैं। यह अज्ञान ही बन्धन का कारण बन जाता है। सदा काम भोगों में तत्पर रहने से पापों से युक्त होकर अशुद्ध नरक में पड़ते हैं।

आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः।
यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम् ॥१७॥

अन्वय—ते, आत्मसम्भाविताः, स्तब्धाः, धनमानमदान्विताः, अविधिपूर्वकम्, नामयज्ञैः, दम्भेन, यजन्ते।

शब्दार्थ—आत्मसम्भाविताः=अपने आपको श्रेष्ठ मानने वाले, स्तब्धाः=विनय रहित, धनमानमदान्विताः=धन और मान के मद से युक्त हुए, ते=वे दम्भेन=पाखण्ड से, अविधिपूर्वकम्=शास्त्रविधि से रहित, नामयज्ञैः=नाममात्र के यज्ञों द्वारा, यजन्ते=पूजन करते हैं।

अनुवाद—अपने को श्रेष्ठ मानने वाले, अविनीत, धन और मान के मद से युक्त हुए, वे (आसुर जन) पाखण्ड से विधि विहीन रीति से नाममात्र के यज्ञों द्वारा पूजन करते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व्याख्या— आसुरी जन अपने को सर्वगुणयुक्त मानते हैं। उनके अनुसार दर्शपौर्णमास, सोम आदि यज्ञ नाममात्र ही है, वास्तविक भाग नहीं। ये यज्ञ फल प्राप्ति के लिए नहीं क्योंकि उनका उनमें विश्वास ही नहीं है अतएव विधि रहित यज्ञ करते हैं। जैसे शास्त्र में विभिन्न यागों के लिए भिन्न-भिन्न कर्तव्यों का विधान है वैसे वे केवल पाखण्ड अर्थात् ढोंग से ही यज्ञ करते हैं, श्रद्धा से नहीं, इसी कारण तत्फलभागी नहीं होते। 'अश्रद्धया हुतं दत्तम्' वचन द्वारा श्रद्धारहित पुरुष सविधि कर्मानुष्ठान करने पर भी तत्फलभागी नहीं होता क्योंकि शास्त्र उस कृत को अकृत ही कहता है। आसुर जनों की यज्ञों के प्रति श्रद्धा न होने के कारण वे तत्फलभागी नहीं होते।

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः ॥१८॥

अन्वय—अहङ्कारम्, बलम्, दर्पम्, कामम्, च, क्रोधम्, संश्रिताः, अभ्यसूयकाः, आत्मपरदेहेषु, माम्, प्रद्विषन्तः।

शब्दार्थ—अहङ्कारम् = अहङ्कार, बलम् = बल, दर्पम् = घमण्ड, कामम् = कामना, च = और, क्रोधम् = क्रोध, संश्रिताः = परायण हुए, अभ्यसूयकाः = दूसरों की निन्दा करने वाले पुरुष, आत्मपरदेहेषु = अपने और दूसरे के शरीर में स्थित, माम् = मुझ से, प्रद्विषन्तः = द्वेष करने वाले।

अनुवाद—अहङ्कार, बल, घमण्ड, कामना, और क्रोध के परायण हुए, दूसरों की निन्दा करने वाले (पुरुष) और दूसरे के शरीर में स्थित मुझ (अन्तर्यामी) से द्वेष करते हैं।

व्याख्या—अहङ्कार—'हम' 'हम' करने का नाम ही अहङ्कार है— 'अहंकरणम् अहङ्कारः' (शां० भा०)। अपने में आरोपित हुए गुणों से अपने को युक्त मानकर मनुष्य 'हम हैं' ऐसा मानता है, उसे अहङ्कार कहते हैं। शंकराचार्य ने इसे अविद्या नामक दोष कहा है। यह अहङ्कार समस्त दोषों का और समस्त अनर्थमय प्रवृत्तियों का मूल कारण है—

'अहङ्कारः अविद्याख्यः कष्टतमः सर्वदोषाणां मूलं सर्वानर्थप्रवृत्तीनां च।' (शां० भा०) बल—दूसरे के तिरस्कार करने का हेतु शरीरवृत्ति शक्ति विशेष को बल कहते हैं।

'बलं परपरिभवनिमित्तं शरीरगतसामर्थ्यविशेषम्' (मधुसूदनी टीका)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दर्प—जिसके उत्पन्न होने पर मनुष्य धर्म का अतिक्रमण कर जाता है, अन्तः-करण के आश्रित उस दोष विशेष का नाम दर्प है।

'दर्पो नाम यस्य उद्भवे धर्ममतिक्रामति सः अयम् अन्तःकरणाश्रयो दोषविशेषः' (शां० भा०) काम='कामं स्त्र्यादिविषयम्' (शां-भा०)। स्त्री आदि के विषय में होने वाला काम। क्रोध—'क्रोधम् अनिष्टविषयम्' (शां-भा०)। किसी प्रकार का अनिष्ट होने से होने वाला क्रोध।
अभ्यसूयकाः=सन्मार्ग में स्थित पुरुषों के गुणों को सहन न करके उनकी निन्दा करने वाले होते हैं।

आसुर जन उपर्युक्त दोषों का अवलम्बन करते हैं। वे अपने और दूसरों के शरीर में स्थित, उनकी बुद्धि और कर्म के साक्षीभूत, मुझ ईश्वर से द्वेष करने वाले होते हैं। ईश्वराज्ञा का उल्लङ्घन ही ईश्वर से द्वेष करना है। कि मूढ़ जन ईश्वर को साधारण मनुष्य मानते हैं। क्योंकि योगमाया से ईश्वर संसार के उद्धार के लिए मनुष्य रूप धारण करते हैं। इस मनुष्यत्वादि भ्रान्ति से वे ईश्वर से द्वेष करते हैं। भगवद्गीता (९.११-१२) में अन्यत्र कहा है—

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्॥

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः।
राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥

तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान्।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ॥१९॥

अन्वय—तान्, द्विषतः अशुभान्, क्रूरान्, नराधमान्, अहम्, संसारेषु, अजस्रम्, आसुरीषु, योनिषु, एव, क्षिपामि।

शब्दार्थ—तान्=उन, द्विषतः=द्वेष करने वाले, अशुभान्=पापचारी, क्रूरान्=क्रूरकर्मी, नराधमान्=नीच वृत्ति वाले मनुष्यों को, अहम्=मैं, संसारेषु=संसार में, अजस्रम्=बारम्बार, आसुरीषु=आसुरी, योनिषु=योनियों में, एव=ही, क्षिपामि=गिराता हूँ।

अनुवाद—उन द्वेष करने वाले, पापचारी, क्रूरकर्मी, नीच पुरुषों को मैं संसार में बारम्बार आसुरी योनियों में ही गिराता हूँ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व्याख्या—जो मनुष्य ईश्वर से और साधुपुरुषों से द्वेष करते हैं उन अशुभकर्मकारी, क्रूर नराधमों को ईश्वर बारम्बार संसार में नरकप्राप्ति कराने वाली व्याघ्र-सिंह तथा अन्य शूकर-कूकर आदि नीच योनियों में ही उत्पन्न करता है।

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि ।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम् ॥२०॥

अन्वय—कौन्तेय, मूढाः, जन्मनि, जन्मनि, आसुरीम्, योनिम्, आपन्नाः, माम्, अप्राप्य, ततः, अधमाम्, गतिम्, एव, यान्ति ।

शब्दार्थ—कौन्तेय=हे कुन्तीपुत्र (अर्जुन), मूढाः=मूर्ख पुरुष, जन्मनि=जन्म, जन्मनि=जन्म में, आसुरीम्=आसुरी, योनिम्=योनि को, आपन्नाः=प्राप्त हुए, माम्=मुझको, अप्राप्य=न प्राप्त होकर, ततः=उससे भी, अधमाम्=अति नीच, गतिम्=गति को, एव=ही, यान्ति=प्राप्त होते हैं।

अनुवाद—हे अर्जुन ! (वे) अविवेकी जन, प्रत्येक जन्म में आसुरी योनि को प्राप्त करते हुए, मुझ (ईश्वर) को न पाकर, उससे भी अधम गति को ही प्राप्त होते हैं।

व्याख्या—माम् अप्राप्य=मुझे प्राप्त न होकर। ऐसा कहने का तात्पर्य है कि मेरे द्वारा कहे हुए श्रेष्ठ मार्ग को न पाकर। अज्ञानी पुरुष काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह आदि के जाल में फंसा रहता है जिनमें तमोगुण की बहुलता है इसी कारण वे आसुरी योनि को प्राप्त करते हैं। किन्तु यदि वे आसुरी योनि को प्राप्त करके भी श्रेष्ठ मार्ग को नहीं अपनाते तो वे पूर्वप्राप्त योनियों की अपेक्षा अधिक अधम गति को प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरक में पड़ते हैं।

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥२१॥

अन्वय—कामः, क्रोधः, तथा, लोभः, इदम्, त्रिविधम्, नरकस्य, द्वारम्, आत्मनः, नाशनम्, तस्मात् एतत्, त्रयम्, त्यजेत् ।

शब्दार्थ—कामः=काम, क्रोधः=क्रोध, तथा=तथा, लोभः=लालच, इदम्=यह, त्रिविधम्=तीन प्रकार के, नरकस्य=नरक के, द्वारम्=द्वार,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आत्मनः=आत्मा का, नाशनम्=नाश करने वाले, तस्मात्=इससे, एतत्=इन, त्रयम्=तीनों को, त्यजेत्=त्याग देना चाहिए ।

अनुवाद—काम, क्रोध तथा लोभ—यह तीन प्रकार के नरक के द्वार हैं (ये) आत्मा का नाश करने वाले हैं, इससे इन तीनों को त्याग देना चाहिए ।

व्याख्या—सब अनर्थों का मूल और नरक की प्राप्ति में हेतु होने से काम, क्रोध और लोभ को नरक का द्वार कहा है । आत्मा नित्य है उसका नाश नहीं होता, फिर काम, क्रोध, लोभ को आत्मा का नाश करने वाला क्यों कहा गया है ? यहाँ 'आत्मा के नाश' से तात्पर्य है कि काम, क्रोध और लोभ में प्रवेश करने मात्र से मनुष्य किसी पुरुषार्थ के योग्य नहीं रहता । इसलिए ये तीनों आत्मा का नाश करने वाले द्वार कहलाते हैं ।

एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः ।
आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ॥२२॥

अन्वय—कौन्तेय, एतैः, त्रिभिः, तमोद्वारैः, विमुक्तः, नरः, आत्मनः, श्रेयः, आचरति, ततः, पराम्, गतिम्, याति ।

शब्दार्थ—कौन्तेय=हे अर्जुन, एतैः=इन, त्रिभिः तीनों, तमोद्वारैः=अन्धकारमय नरक के द्वारों से, विमुक्तः, मुक्त हुआ, नरः=पुरुष, आत्मनः=अपने, श्रेयः=कल्याण (का) आचरति=आचरण करता है, ततः=इससे, पराम्=परम, गतिम्=गति को, याति=जाता है ।

अनुवाद—हे अर्जुन ! इन तीनों (काम, क्रोध, लोभ) अन्धकारमय नरक के द्वारों से मुक्त हुआ पुरुष अपने कल्याण का आचरण करता है; इससे (वह) परम गति को जाता है (प्राप्त करता है) ।

व्याख्या—काम, क्रोध और लोभ के वश में हुआ व्यक्ति आत्मकल्याण का साधन नहीं कर पाता है । किन्तु इन अवगुणों से अस्पृष्ट व्यक्ति आत्म-कल्याण का साधन अपनाता है । अपने उद्धार के लिए भगवद् आज्ञानुसार आचरण ही 'आत्मकल्याण का आचरण' करना है । आत्म-कल्याण से वह मोक्ष को प्राप्त कर लेता है ।

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥२३॥

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अन्वय—यः, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, कामकारतः, वर्तते, सः, न, सिद्धिम्, न, पराम्, गतिम्, न, सुखम्, अवाप्नोति ।

शब्दार्थ—यः=जो, शास्त्रविधिम्=शास्त्र की विधि को, उत्सृज्य=त्यागकर, कामकारतः=अपनी इच्छा से, वर्तते=आचरण करता है, सः=वह, न=न, गतिम्=गति को, न=न, सुखम्=सुख को, अवाप्नोति=प्राप्त करता है ।

अनुवाद—जो (मनुष्य) शास्त्र की विधि को त्यागकर अपनी इच्छा से आचरण करता है वह न (तो) सिद्धि को, न परम गति को (और) न सुख को (ही) प्राप्त होता है ।

व्याख्या—कर्तव्याकर्तव्य बोधक विधिनिषेधात्मक आदेश ही शास्त्र विधि है जो मनुष्य क्या करना है ? और क्या नहीं करना ? इसका विवेक नहीं करता और अपनी इच्छा से विहित अथवा अविहित आचरण करता है वह कर्म करता हुआ भी न तो पुरुषार्थ की योग्यता को प्राप्त करता है न इस लोक में सुख पाता है और न परम गति अर्थात् स्वर्ग या मोक्ष को ही पाता है ।

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि ।।२४।।

अन्वय—तस्मात्, ते, इह, कार्याकार्यव्यवस्थितौ, शास्त्रम्, प्रमाणम्, ज्ञात्वा, शास्त्रविधानोक्तम्, कर्म, कर्तुम् अर्हसि ।

शब्दार्थ—तस्मात्=इससे, ते=तेरे लिए, इह=इस, कार्याकार्यव्यवस्थितौ=कर्तव्य और अकर्तव्य की व्यवस्था में, शास्त्रम्=शास्त्र, प्रमाणम्=प्रमाण, ज्ञात्वा=जानकर, शास्त्रविधानोक्तम्=शास्त्रविधि से नियत किये हुए, कर्म=कर्म को, कर्तुम्=करने के लिए, अर्हसि=योग्य है ।

अनुवाद—इससे तेरे लिए इस कर्तव्य और अकर्तव्य की व्यवस्था में शास्त्र (ही) प्रमाण (है), (ऐसा) जानकर (तू) शास्त्रविधि से नियत किये हुए कर्म को (ही) करने के लिए योग्य है ।

व्याख्या—शास्त्र विधि रहित स्वेच्छा से कर्मों में प्रवृत्ति ऐहलौकिक और पारलौकिक पुरुषार्थों के अयोग्य है अतः कल्याण के इच्छुक व्यक्ति को कर्तव्याकर्तव्य की अवस्था में वेद, स्मृति, पुराणादि शास्त्रों को ही

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्रमाण मानना चाहिए। 'कुर्याद् न कुर्याद्' —'यह कार्य कर', 'यह कार्य मत कर' इस प्रवर्तक और निवर्तक रूप शब्दों से विहित और निषिद्ध कर्मों को जानकर निषिद्ध का त्याग करना चाहिए और शास्त्र विहित कर्मों का आचरण करना चाहिए। इस प्रकार आसुरी सम्पत्ति के कारणभूत काम, क्रोध, लोभ, आदि का त्याग कर कल्याणार्थियों को श्रद्धायुक्त होकर, शास्त्र विहित कर्मों का अनुष्ठान करना चाहिए।

———

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पञ्चतन्त्रम्

संस्कृत कथा साहित्य में ही नहीं, अपितु विश्व के कथा साहित्य में पञ्चतन्त्र का विशिष्ट स्थान है। पञ्चतन्त्र में पाँच तन्त्र (भाग) हैं अतः इसे पञ्चतन्त्र कहा जाता है। ये पाँच तन्त्र हैं—मित्रभेद, मित्रलाभ, सन्धि-विग्रह, लब्धप्रणाश और अपरीक्षितकारक। सभी तन्त्रों में एक मुख्य कथा है, जिसकी पुष्टि करने के लिए अन्य अनेक कथाओं का संग्रह है। श्रीविष्णु शर्मा ने सर्वत्र कथाओं के माध्यम से जन सामान्य को नीति एवं सदाचार की शिक्षा देने का प्रयत्न किया है।

प्रस्तुत पुस्तक पञ्चतन्त्र के पञ्चम तन्त्र 'अपरीक्षितकारक' की केवल प्रारम्भिक छः कथाओं को ही समाविष्ट करती है। बिना विचारे कोई काम नहीं करना चाहिए, इस तथ्य को प्रतिपादित करने वाली कथाओं का संग्रह होने के कारण, इस तन्त्र को अपरीक्षितकारक कहा जाता है।

अपरीक्षितकारकं पञ्चमं तन्त्रम्

अपरीक्षितकारक पाँचवाँ तन्त्र

क्षपणक-कथा

अथेदमारभ्यतेऽपरीक्षितकारकं नाम पञ्चमं तन्त्रं, यस्यायमादिमः श्लोकः—

शब्दार्थ—अथ=इसके पश्चात्, आरभ्यते=प्रारम्भ किया जाता है, अपरीक्षिकारकम्=अपरीक्षितकारक नाम=नामक, पञ्चमं=पांचवां, तन्त्रम्=प्रकरण, यस्य=जिसका, अयम्=यह, आदिमः=प्रथम, श्लोकः=पद्य।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अनुवाद—इसके पश्चात् अपरीक्षितकारक नामक पाँचवाँ प्रकरण प्रारम्भ किया जाता है जिसका प्रथम श्लोक इस प्रकार है—

टिप्पणी—पञ्चतन्त्र कथाग्रन्थ है। इसमें पाँच तन्त्र (प्रकरण) हैं। इसी कारण इसे पञ्चतन्त्र कहा जाता है। 'अपरीक्षितकारक' पाँचवाँ तन्त्र है। बिना परीक्षा किए हुए कोई कार्य नहीं करना चाहिए—यही इस पञ्चम तन्त्र की कथाओं से ज्ञात होता है। इसी कारण इस तन्त्र का नाम 'अपरीक्षितकारक' (न परीक्षितम् अपरीक्षितम्, अपरीक्षितस्य कारकः, अपरीक्षितकारकः, तमधिकृत्य कृतम् अपरीक्षितकारकम्) है। इस प्रकरण का आरम्भ 'अथ' से किया गया है। प्रकरण के आरम्भ में प्रयुक्त 'अथ' शब्द मङ्गलार्थक है। किन्तु प्रकरणान्तर्गत प्रयुक्त 'अथ' शब्द नए प्रकरण के आरम्भ को सूचित करता है।

कुदृष्टं कुपरिज्ञातं कुश्रुतं कुपरीक्षितम्।
तन्नरेण न कर्तव्यं नापितेनात्र यत्कृतम् ॥१॥

अन्वय—कुदृष्टम्, कुपरिज्ञातम्, कुश्रुतम्, कुपरीक्षितम् तत्, नरेण, न, कर्तव्यम्, यत्, अत्र, नापितेन, कृतम्।

शब्दार्थ—कुदृष्टम्=(विचार बुद्धि से अच्छी तरह) न देखे गए, कुपरिज्ञातम्=बिना जाने हुए, कुश्रुतम्=(ध्यानपूर्वक) न सुने गए, कुपरीक्षितम्=विना परीक्षा किए, तत्=उस (कार्य को), नरेण=मनुष्य द्वारा, न=नहीं, कार्यम्=करना चाहिए, यत्=जो (कार्य) अत्र=यहाँ (इस कथा में) नापितेन=नाई द्वारा, कृतम्=किया गया।

अनुवाद—(विचार बुद्धि द्वारा सम्यग् रूप से) न देखे गए, विना जाने हुए, (ध्यानपूर्वक) न सुने गए, विना परीक्षा किए मनुष्य को कोई कार्य नहीं करना चाहिए जैसा (कार्य) यहाँ (इस कथा में) नाई ने किया था।

व्याख्या—कुदृष्टम् में 'दृश्' का अर्थ है—विचार-रूपी बुद्धि से अनालोचित। अर्थात् विना विचारे हुए। भारवि ने 'किरातार्जुनीयम्' में कहा है कि विना विचारे कोई कार्य नहीं करना चाहिए—'सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।

तन्नरेण=तत्+नरेण। नापितेनात्र=नापितेन+अत्र।

तद्यथानुश्रूयते—अस्ति दाक्षिणात्ये जनपदे पाटलिपुत्रं नाम नगरम्।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तत्र मणिभद्रो नाम श्रेष्ठी प्रतिवसति स्म। तस्य च धर्मार्थकाममोक्षकर्माणि कुर्वतो विधिवशाद्धनक्षयः सञ्जातः। ततो विभवक्षयादपमानपरम्परया परं विषादं गतः। अथाऽन्यदा रात्रौ सुप्तश्चिन्तितवाद्--अहो, धिगियं दरिद्रता।

शब्दार्थ—तत्=वह, यथा=ऐसा, अनुश्रूयते=सुना जाता है, अस्ति=है, दाक्षिणात्ये=दक्षिण, जनपदे=जनपद में, पाटलिपुत्रं=पाटलिपुत्र, नाम=नामक, नगरम्=नगर। तत्र=वहाँ, मणिभद्रः=मणिभद्र, नाम=नामक, श्रेष्ठी=सेठ, प्रतिवसति स्म=रहता था, तस्य=उसके, च=और; धर्मार्थकाममोक्षकर्माणि=धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष कर्मों को, कुर्वतः=करते हुए, विधिवशात्=भाग्यवश, धनक्षयः=धन का नाश, सञ्जातः=हो गया। ततः=इसके बाद, विभवक्षयात्=धन नष्ट हो जाने से, अपमानपरम्परया=निरन्तर तिरस्कार से, परम्=अत्यधिक, विषादम्=दुःख को, गतः=प्राप्त हुआ। अथ=तत्पश्चात्, अन्यदा=अन्य (किसी) दिन, रात्रौ=रात में, सुप्तः=सोते समय, चिन्तितवान्=सोचने लगा, अहो=आश्चर्य, धिग्=धिक्कार, इयम्=इस, दरिद्रता=गरीबी (को)।

अनुवाद—जैसा सुना जाता है कि दक्षिण जनपद में पाटलिपुत्र नामक नगर है। वहाँ मणिभद्र नामक सेठ रहता था। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष (के लिए) कर्मों को करते हुए भी भाग्यवश उसके धन का नाश हो गया। इसके अनन्तर धन नष्ट हो जाने से, निरन्तर तिरस्कार से (वह) अत्यधिक दुःखी हुआ। तत्पश्चात् किसी दिन रात में सोते समय सोचने लगा कि इस दरिद्रता को धिक्कार है।

टिप्पणी—तद्यथानुश्रूयते=तत्+यथा+अनुश्रूयते। विधिवशाद्धनक्षयः विधिवशात्+धनक्षयः। विभवक्षयादपमानपरम्परया=विभवक्षयात्+अपमानपरम्परया। अथान्यदा=अथ+अन्यदा। सुप्तश्चिन्तितवान्=सुप्तः+चिन्तितवान्। धिगियं=धिक्+इयम्।

उक्तञ्च--
कहा भी गया है--

शीलं शौचं क्षान्तिर्दाक्षिण्यं मधुरता कुले जन्म।
न विराजन्ति हि सर्वे वित्तविहीनस्य पुरुषस्य ॥२॥

अन्वय—शीलम्; शौचम्, क्षान्तिः, दाक्षिण्यम्, मधुरता; कुले; जन्म, सर्वे, हि, वित्तविहीनस्य, पुरुषस्य, न, विराजन्ति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शब्दार्थ—शीलम्=स्वभाव, शौचम्=पवित्रता, क्षान्तिः=क्षमा, दाक्षिण्यम्=उदारता, मधुरता=प्रिय भाषण, कुले=(उत्तम) कुल में, जन्म=जन्म, सर्वे=(ये) सभी (गुण), वित्तविहीनस्य=धन रहित, पुरुषस्य=मनुष्य को, न=नहीं, विराजन्ति=शोभा देते हैं ।

अनुवाद—स्वभाव, पवित्रता, क्षमा, उदारता, प्रिय बोलना, (उत्तम) कुल में जन्म (ये) सभी (गुण) धनरहित मनुष्य को शोभा नहीं देते हैं ।

व्याख्या—शील, शुचिता, क्षमा आदि गुणों के रहने पर भी मनुष्य के निर्धन हो जाने पर उसके प्रति कोई आकृष्ट नहीं होता । जैसा कहा जाता है कि—

सन्तोऽपि न विराजन्ते हीनार्थस्येतरे गुणाः ।
आदित्य इव भूतानां श्रीर्गुणानां प्रकाशिनी ॥

धनहीन व्यक्ति के गुण रहते हुए भी प्रकाश में नहीं आते । जैसे सूर्य जगत् का प्रकाशक है वैसे ही लक्ष्मी गुणों की प्रकाशिका है ।

दरिद्रता सभी गुणों का अपहरण करती है—

एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोरिति यो बभाषे ।
न तेन दृष्टं कविना समस्तं दारिद्र्यमेकं गुणकोटिहारि ॥

कवि कालिदास के अनुसार एक दोष गुणों में छिप जाता है किन्तु कवि ने यह नहीं सोचा कि दरिद्रता एक ऐसा दोष है जो गुणों में नहीं छिपता वरन् समस्त गुणों का नाश कर देता है ।

मानो वा दर्पो वा विज्ञानं विभ्रमः सुबुद्धिर्वा ।
सर्वं प्रणश्यति समं वित्तविहीनो यदा पुरुषः ॥३॥

अन्वय—यदा, पुरुषः, वित्तविहीनः, मानः, वा, दर्पः, वा, विज्ञानम्, विभ्रमः, वा, सुबुद्धिः, सर्वम्, समम्, प्रणश्यति ।

शब्दार्थ—यदा=जब, पुरुषः=मनुष्य, वित्तविहीनः=धनरहित, मानः=आदर, वा=तथा, दर्पः=अभिमान, वा=तथा, सुबुद्धिः=सुमति, सर्वम्=सभी, समम्=साथ ही, प्रणश्यति=नष्ट हो जाते हैं ।

अनुवाद—जब मनुष्य धनरहित हो जाता है (तो) ज्ञान, अभिमान तथा विशिष्ट (कलाओं का) ज्ञान, विलास तथा सुमति (ये) सभी साथ ही नष्ट हो जाते हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व्याख्या--निर्धनता ऐसी विपत्ति है जिसके आने पर सब कुछ नष्ट हो जाता है। कहा गया है—

अर्थेन तु विहीनस्य पुरुषस्याल्पमेधसः।
क्रियाः सर्वा विनश्यन्ति ग्रीष्मे कुसरितो यथा॥

धन रहित पुरुष और अल्प बुद्धि वाले पुरुष की सभी क्रियायें नष्ट हो जाती है जैसे ग्रीष्म में तालाब।

निर्धन व्यक्ति का सब कुछ नष्ट हो जाता है--

शून्यमपुत्रस्य गृहं चिरशून्यं नास्ति यस्य सन्मित्रम्।
मूर्खस्य दिशः शून्याः सर्वं शून्यं दरिद्रस्य॥

प्रतिदिवसं याति लयं वसन्तवाताहतेव शिशिरश्रीः।
बुद्धिर्बुद्धिमतामपि कुटुम्बभरचिन्तया सततम्॥४॥

अन्वय—बुद्धिमताम्, अपि, बुद्धिः, सततम्, कुटुम्बभरचिन्तया, वसन्तवाताहता शिशिरश्रीः, इव, प्रतिदिवसम्, लयम् याति।

शब्दार्थ—बुद्धिमताम्=बुद्धिमानों की अपि=भी, बुद्धिः=बुद्धि, सततम्=निरन्तर, कुटुम्बभरचिन्तया=परिवार के भरणपोषण की चिन्ता से, वसन्तवाताहता=वसन्तकालीन वायु से प्रताड़ित, शिशिरश्रीः इव=शिशिर ऋतु की शोभा के समान, प्रतिदिवसम्=प्रतिदिन, लयम्=विनाश को, याति=प्राप्त करती है।

अनुवाद—बुद्धिमान पुरुषों की बुद्धि भी परिवार के भरण पोषण की निरन्तर (रहने वाली) चिन्ता से, वसन्तकालीन वायु से प्रताडित शिशिर ऋतु की शोभा के समान, प्रतिदिन क्षीण होती है।

व्याख्या—पारिवारिक चिन्ताओं से पीडित मनुष्य अपनी बुद्धि का सदुपयोग नहीं कर पाता और उसकी बुद्धि दैनिक समस्याओं से क्षीण हो जाती है।

नश्यति विपुलमतेरपि बुद्धिः पुरुषस्य मन्दविभवस्य।
घृतलवणतैलतण्डुलवस्त्रेन्धनचिन्तया सततम्॥५॥

अन्वय—मन्दविभवस्य, विपुलमतेः पुरुषस्य अपि, बुद्धिः, सततम्, घृतलवणतैलतण्डुलवस्त्रेन्धनचिन्तया नश्यति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शब्दार्थ—मन्दविभवस्य=धनरहित, विपुलमतेः=प्रचुर बुद्धि वाले, पुरुषस्य=मनुष्य की, अपि=भी, बुद्धिः=बुद्धि, सततम्=निरन्तर, घृत-लवणतैलतण्डुलवस्त्रेन्धनचिन्तया=घी, नमक, तेल, वस्त्र तथा इन्धन की चिन्ता से, नश्यति=नष्ट हो जाती है।

अनुवाद—धनरहित (किन्तु) प्रचुर बुद्धि वाले मनुष्य की भी बुद्धि, निरन्तर घी, नमक, तेल, चावल, वस्त्र (एवं) इन्धन (आदि परिवार के भरण योग्य आवश्यक वस्तुओं) की चिन्ता से, नष्ट हो जाती है।

गगनमिव नष्टतारं शुष्कमिव सरः श्मशानमिव रौद्रम्।
प्रियदर्शनमपि रूक्षं भवति गृहं धनविहीनस्य ॥६॥

अन्वय—धनविहीनस्य, गृहम्, प्रियदर्शनम्, अपि, नष्टतारम्, गगनम्, इव, शुष्कम्, सरः, इव, रौद्रम्, श्मशानम्, इव, रूक्षम् भवति।

शब्दार्थ—धनविहीनस्य=निर्धन का, गृहम्=घर, प्रियदर्शनम्=देखने में सुन्दर, अपि=भी, नष्टतारम्=नक्षत्र रहित, गगनम्=आकाश, इव=समान, शुष्कम्=सूखे, सरः=जलाशय, इव=समान, रौद्रम्=भयानक, श्मशानम्=श्मशान, इव=समान, रूक्षम्=अशोभनीय, भवति=होता है।

अनुवाद—निर्धन (व्यक्ति) का घर अत्यन्त सुन्दर होने पर भी, नक्षत्र रहित आकाश के समान, सूखे जलाशय के समान, भयङ्कर श्मशान भूमि के समान, अशोभनीय होता है।

व्याख्या—इस श्लोक में दारिद्रय की तुलना नक्षत्र रहित आकाश, सूखे जलाशय यौर भयङ्कर श्मशानभूमि से की गई हैं। अन्यत्र शास्त्रों में भी दारिद्रय की तुलना जलहीन जलाशय से की गई है—

पक्षविकलश्च पक्षी शुष्कश्च तरुः सरश्च जलहीनम्।
सर्पश्चोद्धृतदंष्ट्रस्तुल्यं लोके दरिद्रस्य ॥

न विभाव्यन्ते लघवो वित्तविहीनाः पुरोऽपि निवसन्तः।
सततं जातविनष्टाः पयसामिव बुद्बुदाः पयसि ॥७॥

अन्वय—वित्तविहीनाः, लघवः, पुरः निवसन्तः, अपि, पयसि, सततम्, जातविनष्टाः, पयसाम्, बुद्बुदा इव न विभाव्यन्ते।

शब्दार्थ—वित्तविहीनाः=धनरहित, लघवः=तुच्छ, पुरः=सामने,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

निवसन्तः=रहते हुए, अपि=भी, पयसि=जल में, सततम्=निरन्तर, जातविनष्टाः=उत्पन्न और विनष्ट होने वाले पयसाम्=जलों के; बुद्बुदाः=बुलबुले, इव=समान, न=नहीं, विभाव्यन्ते=दिखाई देते हैं।

अनुवाद—धन रहित (होने से) तुच्छ (व्यक्ति) सामने रहते हुए जल में निरन्तर उत्पन्न और विनष्ट होने वाले जल के बुलबुलों के समान, दिखाई नहीं पड़ते हैं।

व्याख्या—यहाँ निर्धन व्यक्ति की जल के बुलबुलों के साथ तुलना की गई है। जिस प्रकार जल में बुलबुले उत्पन्न और विनष्ट होते हैं और वे दिखाई देने पर भी दृष्टि में नहीं आते हैं उसी प्रकार निर्धन व्यक्ति को देखते हुए भी लोग उसकी उपेक्षा कर देते हैं। कहा गया है—

हे दारिद्रय नमस्तुभ्यं सिद्धोऽहं त्वत्प्रसादतः।
पश्याम्यहं जगत्सर्वं न मां पश्यति कश्चन॥

निर्धन व्यक्ति संसार को देखता है किन्तु संसार उसे नहीं देखता।

सुकुलं कुशलं सुजनं विहाय कुलकुशलशीलविकलेऽपि।
आढ्ये कल्पतराविव नित्यं रज्यन्ति जननिवहाः॥८॥

अन्वय—जननिवहाः, सुकुलम्, कुशलम्, सुजनम्, विहाय, कुलकुशलशील-विकले, अपि, आढ्ये, कल्पतरौ, इव, नित्यम्, रज्यन्ति।

शब्दार्थ—जननिवहाः=जनसमुदाय, सुकुलम्=श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न, कुशलम्=प्रवीण, सुजनम्=सज्जन को, विहाय=त्याग कर, कुलकुशल-शीलविकले=कुलकुशलता सुन्दर स्वभाव से रहित, अपि=भी, आढ्ये=धनी व्यक्ति पर, कल्पतरौ=कल्पवृक्ष, इव=समान, नित्यम्=सर्वदा, रज्यन्ति=प्रसन्न होते हैं।

अनुवाद—लोग श्रेष्ठ कुलोत्पन्न, प्रवीण (एवं) सज्जन (पुरुष) को त्याग कर कुल, कुशलता (एवं) सुन्दर स्वभाव से रहित भी धनी व्यक्ति से ही कल्पवृक्ष के समान सर्वदा प्रसन्न होते हैं।

व्याख्या—निर्धन व्यक्ति कितना ही कुलीन एवं कुशल हो कोई उसको नहीं चाहता जब कि अकुलीन, अकुशल होने पर भी धनी व्यक्ति सर्वत्र प्रशंसा का पात्र होता है। धनी व्यक्ति के अवगुण भी गुण पक्ष में रखे जाते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विफलमिह पूर्वसुकृतं विद्यावन्तोऽपि कुलसमुद्भूताः ।
यस्य यदा विभवः स्यात्तस्य तदा दासतां यान्ति ॥९॥

अन्वय—इह, पूर्वसुकृतम्, विफलम्, कुलसमुद्भूताः, विद्यावन्तः, अपि, यदा, यस्य, विभवः, स्यात्, तदा, तस्य दासतां यान्ति ।

शब्दार्थ—इह=इस संसार में, पूर्वसुकृतम्=पूर्वोपार्जित पुण्य, विफल=व्यर्थ, कुलसमुद्भूताः=अच्छे कुल में उत्पन्न होने वाले, विद्यावन्तः=विद्वान्, अपि=भी, यदा=जब, यस्य=जिसके, विभवः=धन, तस्य=उसकी, दासताम्=दासता को यान्ति=स्वीकार करते हैं ।

अनुवाद—इस संसार में पूर्वोपार्जित पुण्य व्यर्थ (हैं), अच्छे कुल में उत्पन्न विद्वान् भी जब जिसके पास धन होता है, उसकी दासता स्वीकार कर लेते हैं ।

कर्मों द्वारा मनुष्य उच्च कुल और विद्वत्ता को प्राप्त कर लेता है किन्तु वे पुण्य भी व्यर्थ हो जाते हैं क्योंकि कुलीन और विद्वान् होने पर भी वे अकुलीन तथा मूर्ख धनी व्यक्ति की दासता को स्वीकार करते हैं ।

लघुरयमाह न लोकः कामः कामं गर्जन्तमपि पतिं पयसाम् ।
सर्वमलज्जाकरमिह यत्कुर्वन्तीह परिपूर्णाः ॥१०॥

अन्वय—लोकः, कामम्, गर्जन्तम्, पयसाम्, पतिम्, अपि, अयम् लघुः, न, आह, इह, परिपूर्णाः यत्, यत्, कुर्वन्ति, सर्वम्, अलज्जाकरम् ।

शब्दार्थ—लोकः=लोग, कामम्=इच्छानुसार, गर्जन्तम्=गर्जते हुए, पयसाम्=जलों के, पतिम्=स्वामी को (समुद्र अथवा मेंघ को), अपि=भी, अयम्=यह, लघुः=क्षुद्र है, न=नहीं, आह=कहता है । इह=यहां (संसार में), परिपूर्णाः=सम्पन्न मनुष्य, यत्=जो, यत्=जो, कुर्वन्ति=करते हैं, सर्वम्=सम्पूर्ण, अलज्जाकरम्=अलज्जाकर ।

अनुवाद—लोग इच्छानुसार गजंते हुए भी मेघ (अथवा समुद्र) को यह क्षुद्र है' नहीं कहते हैं । यहां (संसार में) सम्पन्न व्यक्ति जो जो कार्य करते हैं वह लज्जास्पद नहीं कहा जाता है ।

व्याख्या—धनसम्पन्न व्यक्ति अनुचित कार्य करने पर भी निन्दनीय नहीं समझा जाता है । अनुचित कार्य करने पर भी वह लज्जित नहीं होता

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है जिस प्रकार स्वेच्छा से गर्जते हुए मेघ की 'यह तुच्छ' है, इस प्रकार कहकर निन्दा नहीं की जाती है। किन्तु निर्धन व्यक्ति शुभ कार्य कर लेने पर भी प्रशंसा को प्राप्त नहीं करता है। उपर्युक्त नौ श्लोकों में मणिभद्र ने दरिद्रता को जीवन का अभिशाप कहा है और निर्धनों एवं धनवानों को इस संसार में किस रूप में देखा जाता है, यह भी बताया है।

एवं सम्प्रधार्य भूयोऽप्यचिन्तयत्—तदहमनशनं कृत्वा प्राणानुत्सृजामि। किमनेन नो व्यर्थजीवितव्यसनेन? एवं निश्चयं कृत्वा सुप्तः। अथ तस्य स्वप्ने पद्मनिधिः क्षपणकरूपो दर्शनं दत्त्वा प्रोवाच—भोः श्रेष्ठिन्! मा त्वं वैराग्यं गच्छ। अहं पद्मनिधिस्तव पूर्वपुरुषोपार्जितः। तदनेनैव रूपेण प्रातस्त्वद्गृहमागमिष्यामि। तत्त्वयाऽहं लगुडप्रहारेण शिरसि ताडनीयः, येन कनकमयो भूत्वाऽक्षयो भवामि।

शब्दार्थ—एवम्=इस प्रकार, सम्प्रधार्य=सोचकर, भूयः=फिर, अपि=भी, अचिन्तयत्=सोचा, तत्=तो, अहम्=मैं, अनशनम्=अनशन (भोजन छोड़ना), कृत्वा=करके, प्राणान्=प्राणों को, उत्सृजामि=त्याग दूंगा, किम्=क्या, अनेन=इस, व्यर्थजीवितव्यसनेन=व्यर्थ जीने की आशा से, एवम्=इस प्रकार, निश्चयम्=निश्चय, कृत्वा=करके, सुप्तः=सो गया, अथ=तत्पश्चात्, तस्य=उसके, स्वप्ने=स्वप्न में, पद्मनिधिः=पद्मनिधि (नामक), क्षपणकरूपः—जैन संन्यासी (क्षपणक) के रूप (में), दर्शनम्=दर्शन, दत्त्वा=देकर, प्रोवाच=बोला, भोः=हे, श्रेष्ठिन्=सेठ, मा=नहीं, त्वम्=तुम, वैराग्यम्=जीवन से विरक्त, गच्छ=होओ, अहम्=मैं, पद्मनिधिः=पद्म नामक निधि (खजाना), तव=तुम्हारे, पूर्वपुरुषोपार्जितः=पूर्वजों द्वारा उपार्जित, तत्=तो, अनेन=इस, रूपेण=रूप में, प्रातः=प्रातः काल, त्वत्=तुम्हारे, गृहम्=घर, आगमिष्यामि=आऊँगा, तत्=उस (प्रकार का) त्वया तुम्हारे=द्वारा, अहम्=मैं, लगुडप्रहारेण=लाठी के प्रहार (चोट) से, शिरसि=शिर पर ताडनीयः=मारा जाऊँगा, येन=जिस (प्रहार) से कनकमयः=सुवर्णमय, भूत्वा=होकर, अक्षयः=अक्षय (कभी नष्ट न होने वाली निधि) भवामि=बन जाऊँगा।

अनुवाद—इस (पूर्वोक्त) प्रकार से विचार कर (मणिभद्र ने) पुनः सोचा—तो मैं अनशन करके प्राणों को त्याग दूंगा। इस (निर्धनावस्था में) व्यर्थ जीने की आशा से क्या (लाभ)? ऐसा निश्चय करके सो गया। तत्पश्चात् स्वप्न में क्षपणक के रूप में पद्मनिधि ने दर्शन देकर उससे कहा—हे सेठ,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तुम विषण्ण मत होओ। मैं तुम्हारे पूर्वजों द्वारा उपार्जित पद्म नामक निधि (खजाना) हूँ। मैं इसी रूप में प्रातः तुम्हारे घर आऊँगा। तब तुम मेरे सिर पर लाठी का प्रहार करना जिस (प्रहार) से मैं सुवर्णमय होकर अक्षय हो जाऊँ।

टिप्पणी—क्षपणक=जैन संन्यासी; पूर्वपुरुषोपार्जितः=पूर्व पुरुषों द्वारा कमाया हुआ।

अथ प्रातः प्रबुद्धः सन् स्वप्नं स्मरंश्चिन्ताचक्रमारूढस्तिष्ठति—अहो, सत्योऽयं स्वप्नः किं वा असत्यो भविष्यति, न ज्ञायते। अथवा नूनं मिथ्याऽनेन भाव्यम्। यतोऽहमहर्निशं केवलं वित्तमेव चिन्तयामि।

शब्दार्थ—अथ=तत्पश्चात्, प्रातः=प्रातःकाल, प्रबुद्धः सन्=उठकर, स्वप्नम्=स्वप्न को, स्मरन्=स्मरण करते हुए, चिन्ताचक्रम्=चिन्ता रूपी चक्र पर, आरूढः तिष्ठति=चढ़ गया, अहो=अरे, सत्यः=सत्य, अयम्=यह, स्वप्नः=स्वप्न, किम्=क्या, वा=अथवा, असत्यः=असत्य, भविष्यति=होगा, न=नहीं, ज्ञायते=जाना जा सकता। अथवा=अथवा, नूनम्=निश्चय-पूर्वक, मिथ्या=असत्य, अनेन=यह, भाव्यम्=होगा, यतः=क्योंकि अहम्=मैं, अहः=दिन, निशम्=रात, केवलम्=केवल, वित्तम्=धन की, एव=ही, चिन्तयामि=चिन्ता करता हूँ।

अनुवाद—तदनन्तर (स्वप्न के पश्चात्) प्रातः काल उठकर, स्वप्न को याद करके चिन्ताग्रस्त हो जाता है। अरे, क्या यह स्वप्न सत्य होगा अथवा असत्य, नहीं जाना जा सकता। अथवा यह असत्य होगा, निश्चयपूर्वक (कहा जा सकता है), क्योंकि रात-दिन मैं धन की ही चिन्ता करता हूँ।

उक्तं च—
और कहा गया है—

व्याधितेन सशोकेन चिन्ताग्रस्तेन जन्तुना।
कामार्तेनाऽथ मत्तेन दृष्टः स्वप्नो निरर्थकः ॥११॥

अन्वय—व्याधितेन, सशोकेन, चिन्ताग्रस्तेन, कामार्तेन, अथ, मत्तेन, जन्तुना, दृष्टः, स्वप्नः, निरर्थकः।

शब्दार्थ—व्याधितेन=रोगी, सशोकेन=शोकाकुल, चिन्ताग्रस्तेन=चिन्ता मग्न द्वारा, अथ=और भी, कामार्तेन=(विषयासक्त) कामी,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मत्तेन=मतवाले, जन्तुना=व्यक्ति द्वारा, दृष्टः=देखा गया, स्वप्नः=स्वप्न, निरर्थकः=व्यर्थ (होता है)।

अनुवाद—रोगी, शोकाकुल, चिन्तामग्न, और कामत्रस्त (एवं) मतवाले व्यक्ति द्वारा देखा गया स्वप्न व्यर्थ होता है।

व्याख्या—यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि व्यक्ति जिस बात को हमेशा सोचता रहता है वही बात वह स्वप्न में देखता है। दरिद्र मणिभद्र रात-दिन धन की चिन्ता में व्याकुल रहता था। स्वप्न में उसने पद्मरूपी निधि (खजाने) को देखा, किन्तु उसे सन्देह हुआ कि यह स्वप्न सत्य है अथवा असत्य ! क्योंकि चिन्ता ग्रस्त व्यक्ति के स्वप्न सदा व्यर्थ होते हैं।

एतस्मिन्नन्तरे तस्य भार्यया कश्चिन्नापितः पादप्रक्षालनायाहूतः। अत्रान्तरे च यथानिर्दिष्टः क्षपणकः सहसा प्रादुर्बभूव। अथ स तमालोक्य प्रहृष्टमना यथासन्नकाष्ठदण्डेन तं शिरस्यताडयत्। सोऽपि सुवर्णमयो भूत्वा तत्क्षणाद्भूमौ निपतितः। अथ तं स श्रेष्ठी निभृतं स्वगृहमध्ये कृत्वा नापितं सन्तोष्य प्रोवाच—तदेतद्धनं, वस्त्राणि च मया दत्तानि गृहाण। भद्र ! पुनः कस्यचिन्नाख्येयोऽयं वृत्तान्तः।

शब्दार्थ—एतस्मिन्=इसी, अन्तरे=अन्तराल में, तस्य=उस (सेठ) की, भार्यया=पत्नी द्वारा, कश्चित्=कोई, नापितः=नाई, पादप्रक्षालनाय=पैर धोने के लिए, आहूतः=बुलाया गया, अत्रान्तरे=इसी बीच, च=और, यथानिर्दिष्टः=(स्वप्न में दिये गये) निर्देश के अनुसार, क्षपणकः=क्षपणक (जैन संन्यासी) सहसा=अचानक, प्रादुर्बभूव=प्रकट हुआ। अथ=तत्पश्चात् सः=उसने, (मणिभद्र ने) तम्=उसको, आलोक्य=देखकर, प्रहृष्टमनाः=प्रसन्न मन से, यथासन्नकाष्ठदण्डेन=समीप रखे लकड़ी के डण्डे से, तम्=उस (क्षपणक) को, शिरसि=सिर पर आताडयत्=मारा, सः=वह (क्षपणक), अपि=भी, सुवर्णमयः=स्वर्ण-मूर्ति, भूत्वा=होकर, तत्=उस, क्षणात्=समय, भूमौ=पृथ्वी पर, निपतितः=गिर पड़ा, अथ=तत्पश्चात्, तम्=उस (क्षपणक) को, सः=उस, श्रेष्ठी=सेठ ने, निभृतम्=गुप्त रूप से, स्वगृहमध्ये=अपने घर के अन्दर, कृत्वा=करके, नापितम्=नाई को, सन्तोष्य=सन्तुष्ट करके, प्रोवाच=कहा, तत्, एतत्=इस, धनम्=धन, वस्त्राणि=वस्त्रों, च=और, मया=मेरे द्वारा, दत्तानि=दिए गए, गृहाण=लो, भद्र=मित्र,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पुनः=फिर, कस्यचित्=किसी से, न=नहीं आख्येयः=कहना, अयम्=यह, वृत्तान्तः=वृत्तान्त (समाचार)।

अनुवाद—इसी बीच उस (सेठ) की पत्नी द्वारा कोई नाई पैर धोने के लिए बुलाया गया। उसी समय जैसा निर्देश दिया था, उस प्रकार का क्षपणक अचानक प्रकट हुआ। तत्पश्चात् उस (सेठ) ने उसको देखकर प्रसन्न मन से पास पड़े हुए लकड़ी के डण्डे से उसके सिर पर प्रहार किया। वह स्वर्णमय होकर उसी क्षण पृथ्वी पर गिर पड़ा। तदनन्तर उस सेठ ने उसको अपने घर के अन्दर गुप्त रूप से रखकर, नाई को सन्तुष्ट करके कहा—मित्र! मेरे द्वारा दिए गए इस धन और वस्त्रों को रख लो। फिर किसी से इस वृत्तान्त को न कहना।

नापितोऽपि स्वगृहं गत्वा व्यचिन्तयत्—नूनमेते सर्वेऽपि नग्नकाः शिरसि ताडिताः काञ्चनमया भवन्ति। तदहमपि प्रातः प्रभूतानाहूय लगुडैः शिरसि हन्मि, येन प्रभूतं हाटकं मे भवति। एवं चिन्तयतो महता कष्टेन निशा व्यतिचक्राम। अथ प्रभातेऽभ्युत्थाय बृहल्लगुडमेकं प्रगुणीकृत्य, क्षपणकविहारं गत्वा जिनेन्द्रस्य प्रदक्षिणत्रयं विधाय, जानुभ्यामवनिं गत्वा वक्त्रद्वारन्यस्तोत्तरीयाञ्चलस्तारस्वरेणेमं श्लोकमपठत्—

शब्दार्थ—नापितः=नाई ने, अपि=भी, स्वगृहम्=अपने घर, गत्वा=जाकर व्यचिन्तयत्=सोचा, नूनम्=निश्चित ही, एते=ये, सर्वे=सभी, अपि=भी, नग्नकाः, क्षपणक (भिक्षु), शिरसि=सिर पर, ताडिताः=प्रहार किये गए, काञ्चनमयाः=स्वर्णमय (सोने के) भवन्ति=हो जाते हैं। तत्=तो, अहम्=मैं, अपि=भी, प्रातः=प्रातःकाल, प्रभूतान्=बहुतों (क्षपणकों) को आहूय=बुलाकर, लगुडैः=लाठियों से, शिरसि=सिर पर, हन्मि=मारता हूँ, येन=जिससे, प्रभूतम्=अधिक, हाटकम्=सुवर्ण, मे=मेरा, भवति=हो जाएगा। एवम्=इस प्रकार, चिन्तयतः=सोचते हुए की, महता=अत्यन्त, कष्टेन=कष्ट के साथ, निशा=रात, व्यतिचक्राम=व्यतीत हुई। अथ=तदनन्तर, प्रभाते=प्रातः काल अभि+उत्थाय=उठकर, बृहत्=बड़ी, लगुडम्=लाठी, एकम्=एक, प्रगुणीकृत्य=तैयार करके, क्षपणकविहारम्=क्षपणकों (जैन भिक्षुओं) के मठ (निवास स्थान) को, गत्वा=जाकर, जिनेन्द्रस्य=जिन भगवान् की, प्रदक्षिणत्रयम्=तीन बार प्रदक्षिणा, विधाय=करके, जानुभ्याम्=घुटनों से, अवनिम्=पृथ्वी पर, गत्वा=जाकर (गिरकर), वक्त्रद्वारन्यस्तोत्तरी-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

याञ्चलः=उत्तरीय (वस्त्र के एक भाग) से मुख को ढक कर, तारस्वरेण= ऊँचे स्वर से, श्लोकम्=पद्य, अपठत्=पढ़ा।

अनुवाद—नाई ने भी अपने घर जाकर सोचा—निश्चित ही ये सभी सन्यासी सिर पर प्रहार करने से सुवर्णमय हो जाते हैं। तो मैं भी प्रातः-काल बहुतों को बुलाकर लाठियों से सिर पर मारूँगा, जिससे मेरे पास बहुत सुवर्ण हो जाएगा। इस प्रकार—सोचते हुए (उसकी) अत्यन्त कष्ट से रात्रि व्यतीत हुई। तदनन्तर प्रातः काल उठकर एक बड़ी लाठी तैयार करके क्षपणकों के मठ जाकर भगवान् जिन की तीन बार प्रदक्षिणा करके घुटनों से (घुटनों के बल) पृथ्वी पर गिरकर मुख को वस्त्र के एक भाग से ढककर ऊँचे स्वर से इस श्लोक को पढ़ा—

टिप्पणी—नग्नकाः=जैन भिक्षु! जैनियों के दो संप्रदाय हैं—श्वेताम्बर और दिगम्बर। जो वस्त्रादि धारण करते हैं उन्हें श्वेताम्बर और जो नग्न अर्थात् वस्त्रादि धारण नहीं करते, उन्हें दिगम्बर कहते हैं। यहां 'नग्न' शब्द से जैनियों के दिगम्बर सम्प्रदाय का बोध होता है।

जयन्ति ते जिना येषां केवलज्ञानशालिनाम्।
आजन्मनः स्मरोत्पत्तौ मानसेनोषरायितम्॥१२॥

अन्वय—केवलज्ञानशालिनाम्, येषाम्, आजन्मनः, स्मरोत्पत्तौ, मानसेन, ऊषरायितम्, ते, जिनाः, जयन्ति।

शब्दार्थ—केवलज्ञानशालिनाम्=केवल ज्ञानयुक्त, येषाम्=जिनके, (जैन क्षपणकों के), आजन्मनः=जन्म से ही, स्मरोत्पत्तौ=काम भावना की उत्पत्ति में, मानसेन=मन से, ऊषरायितम्=ऊपर के समान कठोर, ते=वे, जिनाः=जैनसाधु, जयन्ति=जय हो।

अनुवाद—केवल ज्ञान से युक्त (एवं) जिनका मन जन्म से ही काम वासना की उत्पत्ति के लिए ऊसर सदृश कठोर है, उन जैन भिक्षुओं की जय हो।

अन्यच्च—

और अन्य—

सा जिह्वा या जिनं स्तौति तच्चित्तं यज्जिने रतम्।
तावेव च करौ श्लाघ्यौ यौ तत्पूजाकरौ करौ॥१३॥

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अन्वय—सा, जिह्वा, या, जिनम्, स्तौति, तत्, चित्तम्, यत्, जिने, रतम्, तौ, एव, च, करौ, श्लाघ्यौ, यौ, करौ, तत्, पूजाकरौ ।

शब्दार्थ—सा=वह, जिह्वा=जिह्वा (जीभ), या=जो, जिनम्=भगवान् जिन की, स्तौति=प्रार्थना करती है, तत्=वह, चित्तम्=मन, यत्=जो, जिने=भगवान् जिन में, रतम्=अनुरक्त है, तौ=वे दोनों, एव=ही, च=और, करौ=हाथ, श्लाघ्यः=प्रशंसनीय, यौ=जो दोनों, तत्=उसकी, पूजाकरौ=पूजा करने वाले, करौ=हाथ ।

अनुवाद—वही जिह्वा (प्रशंसनीय है) जो (भगवान्) जिन की स्तुति करती है, वही मन (स्तुत्य) है, जो भगवान् जिन में (सदा) अनुरक्त है, और वे ही हाथ प्रशंसनीय हैं जो हाथ उनकी पूजा करने वाले हैं ।

टिप्पणी—जिनाः=जिन या अर्हंत् । जैन शब्द जिन से बना है । जो साधक जैन दर्शन के द्वारा मोक्ष को प्राप्त हो जाते हैं उन्हें जिन कहा जाता है । ऋषभदेव, पार्श्वनाथ, महावीर आदि जिन हो चुके हैं ।

तथा च—

ध्यानव्याजमुपेत्य चिन्तयसि कामुन्मील्य चक्षुः क्षणं
पश्यानङ्गशरातुरं जनमिमं त्राताऽपि नो रक्षसि ।
मिथ्याकारुणिकोऽसि निर्घृणतरस्त्वत्तः कुतोऽन्यः पुमान्
सेर्ष्यं मारवधूभिरित्यभिहितो बौद्धो जिनः पातु वः॥१४॥

अन्वय—ध्यानव्याजम्, उपेत्य, काम्, चिन्तयसि, क्षणम्, चक्षुः, उन्मील्य, पश्य, त्राता, अपि, अनङ्गशरातुरम्, इमम्, जनम्, न, रक्षसि, मिथ्याकारुणिकः, असि, त्वत्तः, अन्यः, निर्घृणतरः, पुमान्, कुतः, इति, सेर्ष्यम्, मारवधूभिः, अभिहितः, बौद्धः, जिनः, वः, पातु ।

शब्दार्थ—ध्यानव्याजम्=ध्यान का बहाना, उपेत्य=बनाकर, काम्=किसका, चिन्तयसि=चिन्तन कर रहे हो, क्षणम्=क्षण भर, चक्षुः=नेत्र को, उन्मील्य=खोलकर, पश्य=देखो, त्राता=रक्षक (होकर), अपि=भी, अनङ्गशरातुरम्=कामदेव के बाणों से पीड़ित, इमम्=इस, जनम्=मनुष्य (को), न=नहीं, रक्षसि=रक्षा करते हो, मिथ्याकारुणिकः=व्यर्थ ही दयालु, असि=हो, त्वत्तः=तुमसे, अन्यः=अतिरिक्त, निर्घृणतरः=निर्दयी, पुमान्=मनुष्य, कुतः=कौन होगा; इति=इस प्रकार, मारवधूभिः=कामदेव

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

की स्त्रियों द्वारा, अभिहितः=कहे गये, बौद्धः जिनः=बौद्धभिक्षु अथवा भगवान् बुद्ध, वः=आप लोगों की, पातु=रक्षा करें।

अनुवाद—ध्यान (समाधि) के बहाने किस (कामिनी) का ध्यान कर रहे हो? क्षण भर नेत्र खोलकर काम के बाणों से पीड़ित इस व्यक्ति को देखो। (तुम) रक्षक होने पर भी रक्षा नहीं करते। (तुम) व्यर्थ ही दयालु हो, तुमसे अतिरिक्त निर्दयी व्यक्ति और कौन होगा। ईर्ष्या से युक्त कामदेव की स्त्रियों द्वारा कहे गये बौद्ध जिन आप लोगों की रक्षा करें।

एवं संस्तुत्य, ततः प्रधानक्षपणकमासाद्य क्षितिनिहितजानुचरणः 'नमोऽस्तु वन्दे' इत्युच्चार्य, लब्धधर्मवृद्धयाशीर्वादः सुखमालिकाऽनुग्रहलब्ध-व्रतादेश उत्तरीयनिबद्धग्रन्थिः सप्रश्रयमिदमाह—भगवन्! अद्य विहरण-क्रिया समस्तमुनिसमेतेनास्मद्गृहे कर्तव्या।

शब्दार्थ—एवम्=इस प्रकार, संस्तुत्य=स्तुति करके, ततः=पश्चात्, प्रधानक्षपणकम्=प्रमुख क्षपणक (के), आसाद्य=पास जाकर, क्षितिनिहित-जानुचरणः=भूमि पर घुटनों को टेककर, नमः=नमस्कार, अस्तु=हो, वन्दे=वन्दना करता हूँ, इति=इस प्रकार, उच्चार्य=कहकर, लब्धधर्म-वृद्धया=धर्म वृद्धि के लिए प्राप्त हुए, आशीर्वादः=आशीर्वाद, सुखमालि-काऽनुग्रहलब्धव्रतादेशः=माला की प्राप्ति रूप कृपा से व्रत दीक्षा को पाकर, उत्तरीयनिबद्धग्रन्थिः=दुपट्टे की गाँठ को बाँधकर, सप्रश्रयम्=नम्रतापूर्वक, इदम्=यह, आह=कहा, भगवन्=हे भगवन्!, अद्य=आज, विहरण-क्रिया=अशन क्रिया (भोजन), समस्तमुनिसमेतेन=समस्त भिक्षुओं के साथ, अस्मद्=हमारे, गृहे=घर पर, कर्त्तव्या=किया जाए।

अनुवाद—इस प्रकार स्तुति करके प्रमुख क्षपणक के पास पहुँचकर, भूमि पर घुटनों को टेककर (आपको) 'नमस्कार हो, (आपकी) वन्दना करता हूँ' इस प्रकार उच्चारण करके, धर्मवृद्धि के लिए आशीर्वाद प्राप्त करके, माला की प्राप्ति रूप कृपा से व्रतदीक्षा को पाकर, दुपट्टे की गाँठ को बाँधकर नम्रतापूर्वक बोला—हे भगवन्! आज सभी भिक्षुओं के साथ भोजन हमारे घर पर किया जाए।

स आह—भोः श्रावक! धर्मज्ञोऽसि किमेवं वदसि, किं वयं ब्राह्मण-समानाः यत आमन्त्रणं करोषि? वयं सदैव तत्कालपरिचर्यया भ्रमन्तो भक्तिभाजं श्रावकमवलोक्य तस्य गृहे गच्छामः। तेन कृच्छ्रादभ्यर्थितास्तद्-गृहे प्राणधारणमात्रामशनक्रियां कुर्मः। तद् गम्यताम्, नैवं भूयोऽपि वाच्यम्।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शब्दार्थ—सः=उसने, आह=कहा, भोः=हे, श्रावक=(जैनधर्म में विश्वास रखने वाले) भक्त, धर्मज्ञः=धर्म को जानते हुए, अपि=भी, किम्=क्यों, एवम्=इस प्रकार, वदसि=कहते हो, किम्=क्या, वयम्=हम, ब्राह्मणसमानाः=ब्राह्मण के समान (हैं), यतः=जिससे, आमन्त्रणम्=निमन्त्रण, करोषि=कर रहे हो, वयम्=हम, सदा=हमेशा, एव=ही, तत्=उस, कालपरिचर्यया=काल की परिचर्या से, भ्रमन्तः=घूमते हुए, भक्तिभाजम्=भक्ति से युक्त, श्रावकम्=भक्त को, अवलोक्य=देखकर, तस्य=उसके, गृहे=घर पर, गच्छामः=जाते हैं। तेन=उसके द्वारा, कृच्छ्रात्=बहुत, अभ्यर्थिताः=आग्रह करने पर, तत्=उसके गृहे=घर पर, प्राणधारणमात्राम्—जीवन निर्वाह के लिए अपेक्षित, अशनक्रियाम्=भोजन, कुर्मः=करते हैं, तत्=इसलिए, गम्यताम्=चले जाएँ, न=नहीं, एवम्=इस प्रकार, भूयः=फिर, अपि=भी, वाच्यम्=कहिएगा।

अनुवाद—उसने (प्रमुख भिक्षुक ने) कहा—हे श्रावक ! धर्मज्ञ होने पर भी इस प्रकार क्यों कहते हो, क्या हम ब्राह्मणों के समान हैं जिससे निमन्त्रण कर रहे हो ? हम सदा ही तत्काल की परिचर्या से घूमते हुए भक्ति से युक्त श्रावक (भक्त) को देखकर उसके घर जाते हैं। उसके द्वारा बहुत आग्रह करने पर उसके घर पर जीवन निर्वाह के लिए अपेक्षित भोजन करते हैं। इसलिए (आप) जाइए, इस प्रकार पुनः नहीं कहिएगा।

तच्छ्रुत्वा नापित आह—भगवन्। वेद्म्यहं युष्मद्धर्मम्। परं भवतो बहुश्रावका आह्वयन्ति। साम्प्रतं पुनः पुस्तकाच्छादनयोग्यानि कर्पटानि बहुमूल्यानि प्रगुणीकृतानि। तथा पुस्तकानां लेखनार्थं लेखकानां च वित्तं सञ्चितमास्ते। तत्सर्वथा कालोचितं कार्यम्।

शब्दार्थ—तत्=उस (को), श्रुत्वा=सुनकर, नापितः=नाई ने, आह=कहा, भगवन्=हे भगवन्! वेद्मि=जानता हूं, युष्मत्=तुम्हारे, धर्मम्=धर्म को, परम्=किन्तु; भवतः=आपको, बहुश्रावकाः=अनेक भक्त, आह्वयन्ति=बुलाते हैं, साम्प्रतम्=इस समय, पुनः=फिर, पुस्तकाच्छादन-योग्यानि=पुस्तकों को ढकने योग्य, कर्पटानि=वस्त्रों को, बहुमूल्यानि=बहुमूल्य, प्रगुणीकृतानि=इकट्ठा किया हुआ, तथा=और, पुस्तकानाम्=ग्रन्थों को, लेखनार्थम्=लिखने के लिए, लेखकानाम्=लेखकों का, च=और वित्तम्=धन, सञ्चितम्=इकट्ठा, आस्ते=(किया) हुआ है, तत्=इसलिए, सर्वथा=सब प्रकार से, कालोचितम्=समयानुकूल, कार्यम्=कार्य करें।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अनुवाद—उसे सुनकर नाई ने कहा—हे भगवन् ! मैं तुम्हारे धर्म को जानता हूँ, किन्तु आपको बहुत भक्त बुलाते रहते हैं। फिर इस समय पुस्तकों को बांधने के योग्य बहुमूल्य वस्त्रों को इकट्ठा किया हुआ है तथा पुस्तकों को लिखने के लिए लेखकों के लिए धन इकट्ठा किया हुआ है। तो सर्वथा समयानुकूल कार्य करना चाहिए।

ततो नापितोऽपि स्वगृहं गतः तत्र च गत्वा खदिरमयं लगुडं सज्जीकृत्य कपाटयुगलं द्वारि समाधाय सार्द्धप्रहरैकसमये भूयोऽपि विहारद्वारमाश्रित्य सर्वान्क्रमेण निष्क्रामतो गुरुप्रार्थनया स्वगृहमानयत्। तेऽपि सर्वे कर्पटवित्त-लोभेन भक्तियुक्तानपि परिचितश्रावकान् परित्यज्य प्रहृष्टमनसस्तस्य पृष्ठतो ययुः।

अथवा साध्विदमुच्यते—

शब्दार्थ—ततः=अनन्तर, नापितः=नाई, अपि=भी, स्वगृहम्=अपने घर, गतः=चला गया। तत्र=वहाँ, च=और, खदिरमयम्=खैर की बनी हुई, लगुडम्=लाठी को, सज्जीकृत्य=तैयार करके, कपाटयुगलम्=दोनों दरवाजे, समाधाय=बन्द करके, सार्द्धप्रहरैकसमये=डेढ़ प्रहर बीत जाने पर, भूयः=फिर, अपि=भी, विहारद्वारम्=विहार(मठ) के द्वार पर, आश्रित्य=पहुँचकर, सर्वान्=सभी को, क्रमेण=क्रम से, निष्क्रामतः=बाहर निकलते हुए, गुरुप्रार्थनया=बहुत अधिक प्रार्थना के द्वारा, स्वगृहम्=अपने घर, आनयत्=लाया, ते=वे, अपि=भी, सर्वे=सब, कर्पटवित्तलोभेन=वस्त्र और धन के लोभ से, भक्तियुक्तान्=भक्ति से युक्त, अपि=भी, परिचितश्रावकान्=परिचित भक्तों को, परित्यज्य=छोड़कर, प्रहृष्टमनसः=प्रसन्न मन से, तस्य=उसके, पृष्ठतः=पीछे, ययुः=चलने लगे, अथवा=अथवा, साधु=उचित, इदम्=यह, उच्यते=कहा गया है।

अनुवाद—तदनन्तर नाई भी अपने घर चला गया और वहाँ जाकर खैर (लकड़ी) की बनी हुई लाठी को तैयार करके, दोनों द्वार बन्द करके डेढ प्रहर बीत जाने पर फिर भी विहार (मठ) के द्वार पर पहुंचकर क्रम से निकलते हुए सभी (भिक्षुओं को) अत्यन्त आग्रह द्वारा अपने घर ले आया। वे सभी वस्त्र, धन के लोभ से भक्तियुक्त (एवं) परिचित भक्तों को छोड़कर प्रसन्न मन से उसके (नाई के) पीछे गये। अथवा उचित ही कहा गया है—

एकाकी गृहसन्त्यक्तः पाणिपात्रो दिगम्बरः।
सोऽपि संवाह्यते लोके तृष्णया पश्य कौतुकम् ॥१५॥

अन्वय—एकाकी, गृहसन्त्यक्तः, पाणिपात्रः, दिगम्बरः, सः, अपि, लोके तृष्णया, संवाह्यते, कौतुकम्, पश्य।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शब्दार्थ—एकाकी=अकेला, गृहसन्त्यक्तः=घर को छोड़ने वाला, पाणिपात्रः=हाथ को ही पात्र समझने वाला, सः=वह, अपि=भी, लोके=संसार में, तृष्णया=लोभ द्वारा, संवाह्यते=आकृष्ट हो जाता है, कौतुकम्=आश्चर्य, पश्य=देखो।

अनुवाद—अकेला रहने वाला, घर को त्याग देने वाला, हाथ को ही पात्र समझने वाला, नग्न रहने वाला (जैन भिक्षु)—वह (मनुष्य) भी संसार में लोभ द्वारा आकृष्ट हो जाता है—(इस) आश्चर्य को देखो।

जीर्यन्ते जीर्यतः केशाः दन्ता जीर्यन्ति जीर्यतः।
चक्षुः श्रोत्रे च जीर्येते तृष्णैका तरुणायते ॥१६॥

अन्वय—जीर्यतः, केशाः, जीर्यन्ते, जीर्यतः दन्ताः, जीर्यन्ति, चक्षुः, श्रोत्रे, च, जीर्येते, एका, तृष्णा तरुणायते।

शब्दार्थ—जीर्यतः=वृद्ध व्यक्ति के, केशाः=बाल, जीर्यन्ते=पक जाते हैं, जीर्यतः=वृद्ध के, दन्ताः=दाँत, जीर्यन्ति=गिर जाते हैं, चक्षुः=आँखें, श्रोत्रे=कान, च=और, जीर्येते=शिथिल हो जाते हैं, एका=एक, तृष्णा=लोभ, तरुणायते=युवा हो जाता है।

अनुवाद—वृद्ध (व्यक्ति) के बाल पक जाते हैं, वृद्ध (व्यक्ति) के दांत गिर जाते हैं, आंख और कान शिथिल हो जाते हैं, (केवल) एक लोभ ही युवा होता है।

ततः परं गृहमध्ये तान् प्रवेश्य, द्वारं निभृतं पिधाय, लगुडप्रहारैः शिरस्यताडयत्। तेऽपि ताडयमाना एके मृताः अन्ये भिन्नमस्तकाः फूत्कर्तुमुपचक्रमिरे। अत्रान्तरे तमाक्रन्दमाकर्ण्य कोटरक्षपालेनाऽभिहितम्—भो भोः! किमयं कोलाहलो नगरमध्ये? तद्गम्यताम्।

शब्दार्थ—ततः परम्=तत्पश्चात्, गृहमध्ये=घर के भीतर, तान्=उन (भिक्षुओं) को, प्रविश्य=प्रवेश करा कर, द्वारम्=द्वार को, निभृतम्=धीरे से, पिधाय=बन्द करके, लगुडप्रहारैः=लाठी के प्रहार से, शिरसि=सिर पर, अताडयत्=मारा, ते=वे, अपि=भी, ताडयमानाः=मारे जाते हुए, एके=कुछ, मृताः=मर गए, अन्ये=शेष, भिन्नमस्तकाः=सिर फूटने पर, फूत्कर्तुमुपचक्रमिरे=चिल्लाने लगे। अत्र=इसी, अन्तरे=समय, तम्=उनके, आक्रन्दम्=कोलाहल को, आकर्ण्य=सुनकर, कोटरक्षपालेन=कोतवाल ने, अभिहितम्=कहा, भोः, भोः=अरे, अरे, किम्=कैसा, अयम्=यह,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कोलाहलः=कोलाहल, नगरमध्ये=नगर में, तत्=इसलिए, गम्यताम्=जाओ।

अनुवाद—तत्पश्चात् घर के भीतर उन्हें (भिक्षुओं को) प्रवेश करा कर, लाठी के प्रहार से सिर पर मारा। मारे जाने पर (उनमें से) कुछ मर गये, शेष सिर फूटने पर चिल्लाने लगे। इसी समय उनके कोलाहल को सुनकर, कोतवाल ने कहा—अरे, अरे, नगर में यह कैसा कोलाहल है, इसलिए जाओ (मालूम करो)।

ते च सर्वे तदादेशकारिणस्तत्सहिता वेगात्तद्गृहं गता यावत् पश्यन्ति तावद्रुधिरप्लावितदेहाः पलायमाना नग्नकाः दृष्टाः। पृष्टाश्च भोः, किमेतत्? ते प्रोचुर्यथाऽवस्थितं नापितवृत्तम्।

शब्दार्थ—ते=वे, च=और, सर्वे=सभी, तत्=उसके, आदेशकारिणः=आदेश का पालन करने वाले, तत्=उस (कोतवाल) के, सहिताः=साथ, वेगात्=शीघ्रता से, तत्=उसके, गृहम्=घर, गताः=गए हुए, यावत्=जैसे ही, पश्यन्ति=देखते हैं, तावत्=तभी, रुधिरप्लावितदेहाः=खून से लथपथ शरीर वाले, पलायमानाः=भागते हुए, नग्नकाः=दिगम्बर जैन भिक्षु, दृष्टाः=दिखाई दिए। पृष्टाः=पूछा गया, च=और, भोः=अरे, किम्=क्या, एतत्=यह, ते=वे, प्रोचुः=बोले, यथा=जैसा, अवस्थितम्=घटित हुआ, नापितवृत्तम्=नापित वृत्तान्त को।

अनुवाद—उसके (कोतवाल के) आदेश का पालन करने वाले वे सभी (सिपाही) उसके साथ शीघ्रता से घर पहुंच कर जैसे ही देखते है तभी (उन्हें) खून से लथपथ शरीर वाले दिगम्बर जैन भिक्षु भागते हुए दिखाई दिए। और (उनसे) पूछे जाने पर (कि)—अरे, यह क्या हुआ? उन्होंने (जैन भिक्षुओं ने) नाई के घर घटित वृत्तान्त को कहा (सुनाया)।

तैरपि स नापितो बद्धो हतशेषैः सह धर्माधिष्ठानं नीतः। तैर्नापितः पृष्टः—भोः, किमेतद्भवता कुकृत्यमनुष्ठितम्? स आह—किं करोमि। मया श्रेष्ठिमणिभद्रगृहे दृष्टः एवंविधो व्यतिकरः। सोऽपि सर्वं मणिभद्रवृत्तान्तं यथादृष्टमकथयत्। ततः श्रेष्ठिनमाहूय, ते भणितवन्तः=भोः श्रेष्ठिन्। किं त्वया कश्चित्क्षपणको व्यापादितः? ततस्तेनाऽपि सर्वः क्षपणकवृत्तान्तस्तेषां निवेदितः। अथ तैरभिहितम्—अहो, शूलमारोप्यतामसौ दुष्टात्मा कुपरीक्षितकारी नापितः।
तथाऽनुतिष्ठते तैरभिहितम्—

शब्दार्थ—तैः=उनके द्वारा (सिपाहियों द्वारा), अपि=भी, सः=वह,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नापितः=नाई, बद्धः=बँधा हुआ, हतशेषैः=मृत्यु से बचे हुओं के, सह=साथ, धर्माधिष्ठानम्=न्यायालय, नीतः=लाया गया, तैः=उनके (न्यायाधीशों द्वारा,) नापितः=नाई, पृष्टः=पूछा गया, भोः—अरे, किम्=क्या, एतत्=यह, भवता=आपके द्वारा, कुकृत्यम्=कुकृत्य (अशोभनीय कार्य), अनुष्ठितम्=किया गया, सः=उस (नाई) ने, आह=कहा, किम्=क्या, करोमि=करूँ, मया=मेरे द्वारा, श्रेष्ठिमणिभद्रगृहे=सेठ मणिभद्र के घर में, दृष्टः=देखा गया, एवंविधः=इस प्रकार, व्यतिकरः=विपरीत आचरण, सः=उस (नाई) ने, अपि=भी, सर्वम्=सारा, मणिभद्रवृत्तान्तम्=मणिभद्र का वृत्तान्त, यथादृष्टम्=जैसा देखा था, अकथयत्=कहा, ततः=तदनन्तर, श्रेष्ठिनम्=सेठ को, आहूय=बुलाकर, भणितवन्तः=कहा, किम्=क्या, त्वया=तुम्हारे द्वारा, कश्चित्=कोई, क्षपणक=जैन भिक्षु, व्यापादितः=मारा गया, ततः=तदनन्तर, तेन=उस (सेठ) द्वारा, अपि=भी, सर्वः=सारा, क्षपणकवृत्तान्तः—(स्वप्न में दृष्ट) क्षपणक के वृत्तान्त को, तेषाम्=उनको, निवेदितः=कह दिया। अथ=तत्पश्चात्, तैः=उन (न्यायाधीशों) द्वारा, अभिहितम्=कहा गया, शूलम्=शूली पर, आरोप्यताम्=चढ़ा दो, असौ=इस, दुष्टात्मा=दुष्ट, कुपरीक्षितकारी=बिना परीक्षा किए हुए कार्य करने वाले (अविवेकी), नापितः=नाई को, तथा=ऐसा, अनुष्ठिते=किये जाने पर, तैः=उन्होंने (न्यायाधीशों ने), अभिहितम्=कहा,

अनुवाद—उनके (सिपाहियों के) द्वारा भी वह नाई बाँध कर मृत्यु से बचे हुए (भिक्षुओं) के साथ न्यायालय लाया गया। उन (लोगों) के द्वारा नाई पूछा गया—अरे, आपके द्वारा यह कैसा कुकृत्य किया गया? उसने कहा (मैं) क्या करूँ? मेरे द्वारा इस प्रकार का विपरीत कार्य सेठ मणिभद्र के घर देखा गया। उसने भी मणिभद्र के वृत्तान्त को, जैसा देखा था, कह (सुनाया)। तदनन्तर सेठ को बुलाकर उन्होंने (न्यायाधीशों ने) कहा—सेठ, क्या तुम्हारे द्वारा कोई भिक्षु मारा गया? तत्पश्चात् उस (सेठ) ने भी, (स्वप्न में देखा गया) क्षपणक का सारा वृत्तान्त कह दिया। तदनन्तर उन्होंने (न्यायाधीशों ने) अभिहितम्=कहा, अरे! इस दुष्ट एवं अविवेकी नाई को शूली पर चढ़ा दो। ऐसा किये जाने पर उन्होंने (न्यायाधीशों ने) कहा—

कुदृष्टं कुपरिज्ञातं कुश्रुतं कुपरीक्षितम्।
तन्नरेण न कर्तव्यं नापितेनात्र यत्कृतम् ॥१७॥

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अन्वय—अत्र, नापितेन, कुदृष्टम्, कुपरिज्ञातम्, कुश्रुतम्, कुपरीक्षितम्, यत्, कृतं, तत् नरेण, न, कर्तव्यम्।

शब्दार्थ—अत्र=यहाँ (इस प्रकरण में), नापितेन=नाई ने, कुदृष्टम्=विचार बुद्धि से अनालोचित, कुपरिज्ञातम्=बिना जाने हुए, कुश्रुतम्=बिना अच्छी तरह सुने, कुपरीक्षितम्=बिना ठीक से विचार किए हुए, यत्=जो, कृतम्=किया, तत्=वह, नरेणः=मनुष्य द्वारा, न=नहीं, कर्तव्यम्=करना चाहिए।

अनुवाद—यहां (इस प्रकरण में) नाई ने (विचार बुद्धि से) अनालोचित, बिना जाने हुए, बिना अच्छी तरह सुने, बिना ठीक से विचार किये हुए, जो किया, वह मनुष्य द्वारा नहीं करना चाहिए।

अथवा साध्विदमुच्यते—

अथवा यह उचित कहा गया है—

अपरीक्ष्य न कर्तव्यं कर्तव्यं सुपरीक्षितम्।
पश्चाद् भवति सन्तापो ब्राह्मण्या नकुले यथा ॥१८॥

अन्वय—अपरीक्ष्य, न, कर्तव्यम्, सुपरीक्षितम्, कर्तव्यम्, पश्चात्, सन्तापः भवति, यथा, ब्राह्मण्या, नकुले।

शब्दार्थ—अपरीक्ष्य=बिना परीक्षा किए हुए, न=नहीं, कर्तव्यम्=करना चाहिए, सुपरीक्षितम्=अच्छी तरह परीक्षा किए, कर्तव्यम्=करना चाहिए, पश्चात्=अन्त में, सन्तापः=पश्चात्ताप, भवति=होता है, यथा=जैसा, ब्राह्मण्या=ब्राह्मणी द्वारा, नकुले=नेवले (के मरने) पर।

अनुवाद—बिना परीक्षा किए हुए (कार्य) को नहीं करना चाहिए, अच्छी तरह परीक्षा करके ही करना चाहिए। (अन्यथा) अन्त में पश्चात्ताप होता है जैसा कि ब्राह्मणी को नेवले (के मरने) पर (पश्चात्ताप हुआ) था।

मणिभद्र आह—कथमेतत्?

ते धर्माधिकारिणः प्रोचुः—

अनुवाद—मणिभद्र ने पूछा—यह कैसे? उन्होंने (न्यायाधीशों) ने कहना प्रारम्भ किया—

(२) ब्राह्मणीनकुल-कथा

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने देवशर्मा नाम ब्राह्मणः प्रतिवसति स्म। तस्या भार्या प्रसूता सुतमजनयत्। तस्मिन्नेव दिने नकुली नकूलं प्रसूय मृता। अथ सा

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सुतवत्सला दारकवत्तमपि नकुलं स्तन्यदानाऽभ्यङ्गमर्दनादिभिः पुपोष। परं तस्य न विश्वसति। अपत्यस्नेहस्य सर्वस्नेहातिरिक्ततया सततमेवमाशङ्कते यद्—कदाचिदेष स्वजातिदोषवशादस्य दारकस्य विरुद्धमाचरिष्यति इति।

शब्दार्थ—कस्मिश्चित्=किसी, अधिष्ठाने=प्रदेश में; देवशर्मा नाम=देवशर्मा नामक, ब्राह्मणः=ब्राह्मण, प्रतिवसति स्म=रहता था। तस्य=उस (ब्राह्मण) की, भार्या=पत्नी, प्रसूता=गर्भवती, सुतम्=पुत्र को, अजनयत्=उत्पन्न किया, तस्मिन् एव=उसी, दिने=दिन, नकुली=नेवली, नकुलम्=नेवले को, प्रसूय=उत्पन्न कर, मृता=मर गई, अथ=तत्पश्चात्, सा=उसने, सुतवत्सला=पुत्र स्नेह से युक्त (ब्राह्मणी) ने, दारकवत्=पुत्र की तरह, तम्=उसको, अपि=भी, नकुलम्=नेवले को, स्तन्यदानाभ्यङ्गमर्दनादिभिः=स्तन पान एवं उबटन आदि के द्वारा, पुपोष=पाला। परम्=लेकिन, तस्य=उस पर, न=नहीं, विश्वसति=विश्वास करती थी। अपत्यस्नेहस्य=पुत्र स्नेह के, सर्वस्नेहातिरिक्तया=(अन्य की अपेक्षा) अधिक स्नेह के कारण, सततम्=निरन्तर, एव=ही, आशङ्कते=सन्देह करती थी, यत्=कि, कदाचित्=कभी, एष=यह, स्वजातिदोषवशात्=अपने जातिगत दोष (हिंसा स्वभाव) के कारण, दारकस्य=पुत्र का, विरुद्धम्=अनिष्ट, आचरिष्यति=कर सकता है, इति=इस प्रकार।

अनुवाद—किसी प्रदेश में देवशर्मा नामक ब्राह्मण रहता था। उसकी गर्भवती पत्नी ने पुत्र को उत्पन्न किया। उसी दिन ही नेवली नेवले को जन्म देकर मर गई। तत्पश्चात् पुत्र स्नेह युक्त उस (ब्राह्मणी) ने पुत्र के समान इस नकुल को भी स्तन पान एवं उबटन आदि के द्वारा पाला। लेकिन उस पर विश्वास नहीं करती थी। पुत्र स्नेह के, अन्य स्नेहों से सर्वोपरि होने के कारण निरन्तर ही सन्देह करती थी कि यह कभी अपने जातिगत दोष (हिंसक वृत्ति) के कारण पुत्र का अनिष्ट कर सकता है।

उक्तं च

और कहा भी गया है—

कुपुत्रोऽपि भवेत्पुंसां हृदयानन्दकारकः।
दुर्विनीतः कुरूपोऽपि, मूर्खोऽपि व्यसनी खलः ॥१६॥

अन्वय—दुर्विनीतः, कुरूपः, मूर्खः, व्यसनी, खलः, कुपुत्रः, अपि; पुसाम्; हृदयानन्दकारकः, भवति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शब्दार्थ—दुर्विनीतः=अविनम्र, कुरूपः=असुन्दर, मूर्खः=अशिक्षित, व्यसनी=बुरे स्वभाव वाला, खलः=दुष्ट, कुपुत्रः=कुपुत्र, अपि=भी, पुंसाम्=पुरुषों के, हृदयानन्दकारकः=हृदय को आह्लादित करने वाला, भवति=होता है ।

अनुवाद—अविनम्र, असुन्दर, अशिक्षित, बुरे स्वभाव वाला, दुष्ट कुपुत्र भी पुरुषों के हृदय को आह्लादित करने वाला होता है ।

एवं च भाषते लोकश्चन्दनं किल शीतलम् ।
पुत्रगात्रस्य संस्पर्शश्चन्दनादतिरिच्यते ॥२०॥

अन्वय—लोकः, एवम्, भाषते, चन्दनम्, किल, शीतलम्, भवति, पुत्र-गात्रस्य, संस्पर्शः, चन्दनात्, अतिरिच्यते ।

शब्दार्थ—लोकः=लोग, एवम्=इस प्रकार, भाषते=कहते हैं, चन्दनम्=चन्दन, किल=निश्चित ही, शीतलम्=शीतल, भवति=होता है, पुत्रगात्रस्य=पुत्र के शरीर का, संस्पर्शः=स्पर्श, चन्दनात्=चन्दन से, अतिरिच्यते=अतिरिक्त होता है ।

अनुवाद—लोग कहते हैं (कि) निश्चित ही चन्दन शीतल होता है, (किन्तु) पुत्र के शरीर का स्पर्श चन्दन से अधिक शीतल होता है ।

सौहृदस्य न वाञ्छन्ति जनकस्य हितस्य च ।
लोकाः प्रपालकस्यापि यथा पुत्रस्य बन्धनम् ॥२१॥

अन्वय—लोकाः, यथा, पुत्रस्य, बन्धनम्, वाञ्छन्ति, सौहृदस्य, जनकस्य, हितस्य, प्रपालकस्य, अपि, न ।

शब्दार्थ—लोकाः=लोग, यथा—जिस प्रकार, पुत्रस्य=पुत्र के, बन्धनम्=(स्नेह के) बन्धन को, वाञ्छन्ति=स्वीकार करते हैं । (उस तरह से) मित्र, माता-पिता, हित-चिन्तक और पालन पोषण करने वाले का भी नहीं (चाहते हैं) ।

अथ सा कदाचिच्छय्यायां पुत्रं शाययित्वा जलकुम्भमादाय पतिमुवाच—ब्राह्मण ! जलार्थमहं तडागे यास्यामि । त्वया पुत्रोऽयं नकुलाद्रक्षणीयः ।

अथ तस्यां गतायां पृष्ठे ब्राह्मणोऽपि शून्यं गृहं मुक्त्वा भिक्षार्थं क्वचिन्निर्गतः । अत्रान्तरे दैववशात् कृष्णसर्पो बिलान्निष्क्रान्तः नकुलोऽपि तं

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्वभाववैरिणं मत्वा भ्रातुः रक्षणार्थं सर्पेण सह युद्ध्वा सर्पं खण्डशः कृतवान् । ततो रुधिराप्लावितवदनः सानन्दं स्वव्यापारप्रकाशनार्थं मातुः सम्मुखे गतः । माताऽपि तं रुधिरक्लिन्नमुखमालोक्य शङ्कितचित्ता नूनमनेन दुरात्मा दारको भक्षितः इति विचिन्त्य कोपात्तस्योपरि तं जलकुम्भं चिक्षेप ।

शब्दार्थ—अथ=तदनन्तर, सा=उस (ब्राह्मणी) ने, कदाचित्=कभी, शय्यायाम्=शय्या पर, पुत्रम्=पुत्र को, शाययित्वा=सुलाकर, जल-कुम्भम्=जल के घड़े को, आदाय=लेकर, पतिम्=पति को, उवाच=कहा, ब्राह्मण=हे ब्राह्मण ! तडागे=तालाब को, यास्यामि=जा रही हूं । त्वया=तुम्हारे द्वारा, पुत्रः=पुत्र, अयम्=यह, नकुलात्=नेवले से, रक्षणीयः=रक्षित होना चाहिए । अथ=तत्पश्चात्, तस्याम्=उसके, गतायाम्=जाने पर, पृष्ठे=पीछे से, ब्राह्मणः=ब्राह्मण, अपि=भी, शून्यम्=निर्जन, गृहम्=घर को, मुक्त्वा=छोड़कर, भिक्षार्थम्=भिक्षा के लिए, क्वचित्=कहीं, निर्गतः=निकल गया, अत्र अनन्तरे=इसी बीच, दैववशात्=भाग्यवश, कृष्णसर्पः=काला सांप, बिलात्=बिल से, निष्क्रान्तः=निकला, नकुलः=नेवला, अपि=भी, तम्=उसको, स्वभाव-वैरिणम्=सहज शत्रु, मत्वा=समझकर, भ्रातुः=भाई की, रक्षणार्थम्=रक्षा के लिए, सर्पेण=सांप के, सह=साथ, युद्ध्वा=युद्ध करके, सर्पम्=सांप को, खण्डशः=टुकड़े-टुकड़े, कृतवान्=कर दिया । ततः=तत्पश्चात्, रुधिराप्लावितवदनः=खून से लिप्त मुख वाला, सानन्दम्=प्रसन्नतापूर्वक, स्वव्यापारप्रकाशनार्थम्=अपने कृत्य को अभिव्यक्त करने के लिए, मातुः=माता के, सम्मुखः=पास, गतः=गया, माता=माता, अपि=भी, तम्=उसको, रुधिरक्लिन्नमुखम्=खून से आर्द्र मुख वाले को, आलोक्य=देखकर, शङ्कितचित्ता=शंकालु होकर, नूनम्=निश्चित ही, अनेन=इस, दुरात्मना=दुष्ट द्वारा, दारकः=पुत्र, भक्षितः=खा लिया गया, इति=इस प्रकार, विचिन्त्य=सोचकर, कोपात्=क्रोध से, तस्य=उस (नेवले के), उपरि=ऊपर, तम्=उस, जलकुम्भम्=जल के घड़े को, चिक्षेप=फेंक दिया ।

अनुवाद—तदनन्तर उसने कभी शय्या पर पुत्र को सुलाकर पानी के घड़े को लेकर पति को कहा—हे ब्राह्मण ! मैं जल (लेने) के लिए तालाब जा रही हूँ, तुम नेवले से इस पुत्र की रक्षा करना । तत्पश्चात् उसके जाने पर पीछे ब्राह्मण भी निर्जन घर को छोड़कर भिक्षा के लिए कहीं चला गया । इसी समय भाग्यवश एक काला सांप बिल से निकला । नेवले ने भी उसे सहज शत्रु मानकर, भाई की रक्षा के लिए सांप से युद्ध करके सांप को टुकड़े-टुकड़े कर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दिया। तदनन्तर खून से लथपथ मुख वाला होकर प्रसन्नतापूर्वक अपने कृत्य को अभिव्यक्त करने के लिए माता के पास गया। माता ने भी खून से लिप्त मुख वाले को देखकर चित्त से शंकालु होकर 'निश्चित ही इस दुष्ट ने पुत्र को खा लिया' इस प्रकार सोचकर क्रोध से उसके ऊपर जल के घड़े को फेंक दिया।

एवं स नकुलं व्यापाद्य यावत्प्रलपन्ती गृहे आगच्छति, तावत्सुतस्तथैव सुप्तस्तिष्ठति। समीपे कृष्णसर्पं खण्डशः कृतमवलोक्य पुत्रवधशोकेनात्मशिरो वक्षःस्थलं च ताडितुमारब्धा। अत्रान्तरे ब्राह्मणो गृहीतनिर्वापः समायातो यावत्पश्यति, तावत्पुत्रशोकाऽभितप्ता ब्राह्मणी प्रलपति—भो भो लोभात्मन्! लोभाऽभिभूतेन त्वया न कृतं मद्वचः। तदनुभव साम्प्रतं पुत्रमृत्युदुःखवृक्षफलम्। अथवा साध्विदमुच्यते—

शब्दार्थ—एवम्=इस प्रकार, सा=वह, नकुलम्=नेवले को, व्यापाद्य=मार कर, यावत्=जैसे ही, प्रलपन्ती=विलाप करती हुई, गृहे=घर, आगच्छति=आती है, तावत्=त्यों ही, सुतः=पुत्र, तथा एव=वैसे ही, सुप्तः=सोया हुआ, तिष्ठति=रहता है। समीपे=पास में, कृष्णसर्पम्=काले सांप को, खण्डशः=टुकड़े-टुकड़े, कृतम्=किया हुआ, अवलोक्य=देखकर, पुत्रवधशोकेन=पुत्र वध के शोक से, आत्मशिरः=अपने सिर को, च=और, वक्षःस्थलम्=वक्षस्थल को, ताडितुम्=पीटना, आरब्धा=आरम्भ कर देती है, अत्रान्तरे=इसी समय, ब्राह्मणः=ब्राह्मण, गृहीतनिर्वापः=भिक्षा लेकर, समायातः=आया हुआ, यावत्=जैसे ही, पश्यति=देखता हुआ, तावत्=पुत्रशोकाऽभितप्ता=पुत्र शोक से संतप्त, ब्राह्मणी=ब्राह्मणी, प्रलपति=प्रलाप करती है, भोः भोः=हे, लोभात्मन्=लालची! लोभाऽभिभूतेन=लालच से युक्त होकर, त्वया=तुमने, न=नहीं, कृतम्=माना, मत्=मेरा, वचः=कहना। तत्=तो, अनुभव=भोगो, साम्प्रतम्=अब, पुत्रमृत्युदुःखवृक्षफलम्=पुत्रमृत्युरूप दुःख-वृक्ष के फल को, अथवा=अथवा, साधु=उचित, इदम्=यह, उच्यते=कहा गया है।

अनुवाद—इस प्रकार नेवले को मारकर विलाप करती हुई वह जैसे ही घर आती है, त्यों ही (उसका) पुत्र वैसे ही सोया हुआ रहता है। पास (ही) काले साँप को टुकड़े-टुकड़े किया हुआ देखकर पुत्रवधरूपी शोक से अपने सिर और वक्षस्थल को पीटना आरम्भ कर देती है। इसी समय भिक्षा

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लेकर जब ब्राह्मण आकर देखता है तो पुत्र शोक से संतप्त ब्राह्मणी विलाप करती है—हे लालची ! लालच से युक्त होकर तुमने मेरी बात नहीं मानी । तो अब पुत्र मृत्यु रूप दुःखवृक्ष के फल को भोगो । अथवा यह ठीक (ही) कहा गया है—

अतिलोभो न कर्तव्यो लोभं नैव परित्यजेत् ।
अतिलोभाऽभिभूतस्य चक्रं भ्रमति मस्तके ।।२२।।

अन्वय—अतिलोभः न, कर्त्तव्यः, लोभम्, एव, न, परित्यजेत्, अतिलोभाभिभूतस्य, मस्तके, चक्रम्, भ्रमति ।

शब्दार्थ—अतिलोभः=अधिक लोभ, न=नहीं, कर्तव्यः=करना चाहिए, लोभम्=लोभ, एव=ही, न=नहीं, परित्यजेत्=छोड़ना चाहिए, अतिलोभाभिभूतस्य=बहुत अधिक लोभ से युक्त (व्यक्ति) के, मस्तके=मस्तक पर, चक्रम्=चक्र, भ्रमति=घूमता है ।

अनुवाद—अधिक लोभ नहीं करना, लोभ छोड़ना भी नहीं चाहिए । बहुत अधिक लोभ से युक्त (व्यक्ति) के मस्तक पर (आपत्ति रूप) चक्र घूमता है ।

ब्राह्मण आह—कथमेतत् ? सा प्राह—

अनुवाद—ब्राह्मण ने कहा—यह कैसे ? उस (ब्राह्मणी) ने कहा—

३. लोभाविष्टचक्रधर-कथा

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने चत्वारो ब्राह्मणपुत्राः परस्परं मित्रतां गता वसन्ति स्म । ते चाऽपि दारिद्र्योपहताः परस्परं मन्त्रं चक्रुः—अहो, धिगियं दरिद्रता ।

शब्दार्थ—कस्मिंश्चित्=किसी, अधिष्ठाने=प्रदेश में, चत्वारः=चार, ब्राह्मणपुत्राः=ब्राह्मण के पुत्र, परस्परम्=आपस में, मित्रताम्=मैत्री को, गताः=प्राप्त करके, वसन्ति स्म=रहते थे, ते=उन्होंने, च=और, अपि=भी, दरिद्रयोपहताः=दरिद्रता से पीड़ित, परस्परम्=आपस में, मन्त्रम्=विचार, चक्रुः=किया, धिक्=धिक्कार, इयम्=इस, दरिद्रता=दरिद्रता ।

अनुवाद—किसी प्रदेश में चार ब्राह्मण पुत्र आपस में मित्रता करके रहते थे और उन्होंने भी दरिद्रता से पीड़ित होकर आपस में विचार किया—अहो, इस दरिद्रता को धिक्कार है ।

उक्तं च—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

और कहा गया है—

वरं वनं व्याघ्रगजादिसेवितं
जनेन हीनं बहुकण्टकावृतम् ।
तृणानि शय्या परिधानवल्कलं
न बन्धुमध्ये धनहीनजीवितम् ॥२३॥

अन्वय—व्याघ्रगजादिसेवितम्, जनेन, हीनम्, बहुकण्टकावृतम्, तृणानि, शय्या, परिधानवल्कलम्, वरम्, बन्धुमध्ये, धनहीनजीवितम्, न ।

शब्दार्थ—व्याघ्रगजादिसेवितम्=व्याघ्र, गजादि हिंस्र पशुओं से युक्त, जनेन=मनुष्यों से, हीनम्=रहित, बहुकण्टकावृतम्=बहुत कांटों से युक्त, वनम्=वन, तृणानि=तृणों की, शय्या=शय्या, परिधानवल्कलम्=पहनने के लिए वल्कल, वरम्=अच्छा, बन्धुमध्ये=भाईयों के बीच में, धनहीन-जीवितम्=निर्धन होकर जीना, न=नहीं ।

अनुवाद—व्याघ्र, गज आदि हिंस्र पशुओं से युक्त, निर्जन तथा कांटों से युक्त वन में (रहना), तृणों की शय्या (और) वल्कल (वस्त्र) धारण करना अच्छा है, (किन्तु) भाईयों के बीच में निर्धन होकर जीवित रहना (उचित) नहीं ।

तथा च—

और भी—

स्वामी द्वेष्टि सुसेवितोऽपि सहसा प्रोज्झन्ति सद्बाधवाः
राजन्ते न गुणास्त्यजन्ति तनुजाः स्फारीभवन्त्यापदः ।
भार्या साधु सुवंशजाऽपि भजते नो यान्ति मित्राणि च
न्यायारोपितविक्रमाण्यपि नृणां येषां न हि स्याद्धनम् ॥२४॥

अन्वय—येषाम्, धनम्, न, हि, स्यात्, सुसेवितः, अपि, स्वामी, द्वेष्टि, सद्बान्धवाः, सहसा, प्रोज्झन्ति, गुणाः, न, राजन्ते, तनुजाः त्यजन्ति, आपदः, स्फारीभवन्ति, साधु, सुवंशजा, अपि, भार्या, न भजते, न्यायारोपितविक्रमाणि, मित्राणि, अपि, यान्ति ।

शब्दार्थ—येषाम्=जिनके, धनम्=सम्पत्ति, न=नहीं, स्यात्=होती, सुसेवितः=अच्छी तरह सेवा किये जाने पर, अपि=भी, स्वामी=स्वामी,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

द्वेष्टि=द्वेष करता है, सद्बान्धवाः=अच्छे बान्धव, सहसा=अचानक, प्रोज्झन्ति=छोड़ देते हैं, गुणाः=गुण, न=नहीं, राजन्ते=शोभित होते हैं, तनुजाः=पुत्र, त्यजन्ति=छोड़ देते हैं, आपदः=विपत्तियाँ, स्फारीभवन्ति=बढ़ जाती हैं, साधु=साधु, सुवंशजा=अच्छे कुल में उत्पन्न, अपि=भी, भार्या=पत्नी, न=नहीं, भजते=सेवा करती है, न्यायारोपितविक्रमाणि=नीति का अनुसरण करने वाले (नीतिपरायण), मित्राणि=मित्र, अपि=भी, यान्ति=चले जाते हैं।

अनुवाद—जिनके (पास) धन नहीं होता (उन लोगों से) अच्छी तरह सेवा किये जाने पर भी स्वामी द्वेष करता है, अचानक ही अच्छे बान्धव भी छोड़ देते हैं, गुण शोभित नहीं होते, पुत्र छोड़ देते हैं, विपत्तियाँ बढ़ जाती हैं, साधु (एवं) अच्छे कुल में उत्पन्न पत्नी भी सेवा नहीं करती, नीतिपरायण मित्र भी चले जाते हैं।

शूरः सुरूपः सुभगश्च वाग्मी,
शस्त्राणि शास्त्राणि विदाङ्करोतु।
अर्थं विना नैव यशश्च मानं,
प्राप्नोति मर्त्योऽत्र मनुष्यलोके ॥२५॥

अन्वय—शूरः, सुरूपः, सुभगः, वाग्मी, शस्त्राणि, शास्त्राणि, को, विदाङ्करोतु, मर्त्यः, अत्र, मनुष्यलोके, अर्थम्, विना, यशः, मानम्, च, न, एव, प्राप्नोति।

शब्दार्थ—शूरः=वीर, सुरूपः=सुन्दर, सुभगः=सौभाग्यशाली, वाग्मी=वाक्पटु, शस्त्राणि=शस्त्रों को, शास्त्राणि=शास्त्रों को, विदाङ्करोतु=जानें, मर्त्यः=व्यक्ति, अत्र=यहाँ, मनुष्यलोके=मर्त्यलोक में, अर्थम्=धन, बिना=बिना, यशः=कीर्ति, मानम्=आदर, न=न, एव=ही, प्राप्नोति=प्राप्त करता है।

अनुवाद—वीर, सुन्दर, सौभाग्यशाली और वाक्पटु शस्त्रों एवं शास्त्रों को (जानने वाला) जानें (कि) इस मनुष्य लोक में मनुष्य बिना धन के यश और आदर प्राप्त नहीं करता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तानीन्द्रियाण्यविकलानि तदेव नाम
सा बुद्धिरप्रतिहता वचनं तदेव ।
अर्थोष्मणा विरहितः पुरुषः स एव
वाह्यः क्षणेन भवतीति विचित्रमेतत् ॥२५॥

अन्वय—अविकलानि, इन्द्रियाणि, तानि, तत्, एव, नाम, अप्रतिहता, बुद्धिः, सा, तत्, एव, वचनम्, सः, एव, पुरुषः, अर्थोष्मणा, विरहितः, क्षणेन; एव, बाह्यः, भवति, इति, एतत्, विचित्रम् ।

शब्दार्थ—अविकलानि=शक्तिसम्पन्न, इन्द्रियाणि=(चक्षु आदि इन्द्रियां) तानि=वे; तत्=तव, एव=ही, नाम=नाम, अप्रतिहता=अनवरुद्ध, बुद्धि—मति, सा=वह, तत् एव=वही, वचनम्=वाणी, स=वह, एव=ही, पुरुषः=मनुष्य, अर्थोष्मणा=धन की गर्मी से, विरहितः=वियुक्त, क्षणेन—क्षण मात्र, एव=ही, बाह्यः=उपेक्षणीय, भवति=हो जाता है, इति=इस प्रकार, एतत्=यह, विचित्रम्=अद्भुत है ।

अनुवाद—शक्तिसम्पन्न इन्द्रियां वे ही हैं, वही नाम है, नहीं रुकने वाली मति वही है, वाणी वही है (किन्तु) वही पुरुष धन की गर्मी से हीन हो जाने पर क्षण भर में ही उपेक्षणीय हो जाता है, यह आश्चर्य है ।

तद्गच्छामः कुत्रचिदर्थाय इति सम्मन्त्र्य स्वदेशं पुरं च स्वसुहृत्सहितं गृहं च परित्यज्य प्रस्थिताः । अथवा साध्विदमुच्यते—

शब्दार्थ—तत्=अतः, गच्छामः=हम जाते हैं, कुत्रचित् कहीं, अर्थाय=धनोपार्जन के लिए, इति=इस प्रकार, सम्मन्त्र्य=विचार करके, स्वदेशम्=अपने देश, पुरम्=नगर, च=और, सुहृत्=अपने मित्र, सहितम्=साथ; गृहम्=घर, च=और, परित्यज्य=छोड़कर, प्रस्थिताः=निकल गए । अथवा=अथवा, साधु=उचित, इदम्=यह, उच्यते=कहा गया है ।

अनुवाद—अतः हम कहीं धनोपार्जन के लिए जाते हैं, इस प्रकार विचार करके अपने देश, नगर और मित्रों सहित घर को छोड़कर (वे चारों ब्राह्मण पुत्र) गए । अथवा उचित कहा गया है—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सत्यं परित्यजति मुञ्चति बन्धुवर्गं
शीघ्रं विहाय जननीमपि जन्मभूमिम् ।
सन्त्यज्य गच्छति विदेशमभीष्टलोकं
चिन्ताकुलीकृतमतिः पुरुषोऽत्र लोके ॥२६॥

अन्वय—अत्र, लोके, चिन्ताकुलीकृतमतिः, पुरुषः, सत्यम्, परित्यजति, बन्धुवर्गम्, मुञ्चति, जननीम्, जन्मभूमिम्, अपि, विहाय, अभीष्टलोकम्, सन्त्यज्य, शीघ्रम्, विदेशम्, गच्छति ।

शब्दार्थ—अत्र=यहाँ, लोके=संसार में, चिन्ताकुलकृतमतिः=चिन्ता से व्याकुल बुद्धि वाला, पुरुषः=व्यक्ति, सत्यम्=सत्य को, परित्यजति=छोड़ देता है, बन्धुवर्गम्=बन्धु-बान्धवों को, मुञ्चति=छोड़ देता है, जननीम्=जननी, जन्मभूमिम्=जन्मभूमि को, अपि=भी, शीघ्रम्=शीघ्र, विहाय=छोड़कर, अभीष्टलोकम्=प्रिय स्थान को, सन्त्यज्य=छोड़कर, विदेशम्=विदेश, गच्छति=चला जाता है ।

अनुवाद—इस संसार में चिन्ता से व्याकुल बुद्धि वाला व्यक्ति सत्य को छोड़ता है, बन्धु-बान्धवों को छोड़ता हैं, जननी जन्मभूमि को शीघ्र छोड़कर, प्रिय स्थान को त्यागकर विदेश चला जाता है ।

एवं क्रमेण गच्छन्तोऽवन्तीं प्राप्ताः । तत्र क्षिप्राजले कृतस्नानाः महाकालं प्रणम्य यावन्निर्गच्छन्ति तावद् भैरवानन्दो नाम योगी सम्मुखो बभूव । ततस्तं ब्राह्मणोचितविधिना सम्भाव्य तेनैव सह तस्य मठं जग्मुः । तेन ते पृष्टाः—कुतो भवन्तः समायाताः ? क्व यास्यथ ? किं प्रयोजनम् ? ततस्तैरभिहितम्—वयं सिद्धियात्रिकाः । तत्र यास्यामो यत्र धनाप्तिर्मृत्युर्वा भविष्यतीत्येव निश्चयः ।

शब्दार्थ—एवम्=इस प्रकार, क्रमेण=क्रम से, गच्छन्तः=जाते हुए, अवन्तीम्, अवन्ती (उज्जयिनी) को, प्राप्ताः=पहुंचे, तत्र=वहाँ, क्षिप्राजले=क्षिप्रा (नदी) के जल में, कृतस्नान=स्नान करके, महाकालम्=महाकाल को, प्रणम्य=प्रणाम करके, यावत्=जैसे ही, निर्गच्छन्ति=निकलते हैं, तावत्=तभी, भैरवानन्दः=भैरवानन्द, नाम=नामक, योगी=योगी, सम्मुखः=सामने, बभूव=हुआ, ततः=तदनन्तर, तम्=उसे, ब्राह्मणोचितविधिना=ब्राह्मणोचित विधि से, सम्भाव्य=आदर करके, तेन=उसके, एव=ही, सह=साथ, तस्य=उसके, मठम्=मठ में, जग्मुः=गए, अथ=तत्पश्चात्,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तेन=उन से, ते=उन्होंने, पृष्टाः=पूछा, कुतः=कहाँ से, भवन्तः=आप लोग, समायाताः=आए हैं, क्व=कहाँ यास्यथ=जाएँगे, किम्=क्या, प्रयोजनम्=प्रयोजन, ततः=तदनन्तर, तैः=उन्होंने, अभिहितम्=कहा, वयम्=हम, सिद्धियात्रिकाः=कार्य सिद्धि के लिए यात्री, तत्र=वहाँ, यास्यामः=जायेंगे, यत्र=जहाँ धनाप्तिः=धन की प्राप्ति, मृत्युः=मृत्यु, वा=अथवा, भविष्यति=होगी, इति=इस प्रकार, एव=ही, निश्चयः=निश्चय।

अनुवाद—इस तरह क्रम से जाते हुए वे उज्जयिनी पहुंचे। वहाँ क्षिप्रा (नदी) के जल में स्नान करके, महाकाल को प्रणाम करके जैसे ही निकलते हैं, तभी भैरवानन्द नामक योगी सामने आया। तत्पश्चात् उसका ब्राह्मणोचित विधि से आदर कर उसके साथ ही उसके मठ को गए। तदनन्तर उसने उन (लोगों से) पूछा—आप लोग कहाँ से आए हैं? जायेंगे? क्या प्रयोजन है? तत्पश्चात् उन्होंने कहा—हम लोग कार्य सिद्धि के लिए (निकले हुए) यात्री है। वहाँ जायेंगे जहाँ धन की प्राप्ति होगी अथवा मृत्यु—इस प्रकार का ही निश्चय है।

उक्तं च—

और कहा गया है—

> दुष्प्राप्याणि बहूनि च लभ्यन्ते वाञ्छितानि द्रविणानि।
> अवसरतुलिताभिरलं तनुभिः साहसिकपुरुषाणाम् ॥२७॥

अन्वय—अवसरतुलिताभिः, तनुभिः, साहसिकपुरुषाणाम्, बहूनि, दुष्प्राप्याणि, च, वाञ्छितानि, द्रविणानि, अलम्, लभ्यन्ते।

शब्दार्थ—अवसरतुलिताभिः=अवसर आने पर प्रेरित, तनुभिः=शरीर द्वारा, साहसिकपुरुषाणाम्=साहसी व्यक्तियों को, बहूनि=अनेक, दुष्प्राप्याणि=दुष्प्राप्य वस्तुएँ, च=और, वाञ्छितानि=इच्छित, द्रविणानि=सम्पत्तियाँ, अलम्=पर्याप्त रूप में, लभ्यन्ते=प्राप्त हो जाती हैं।

अनुवाद—अवसर आने पर प्रेरित शरीर द्वारा साहसी व्यक्तियों को अनेक दुष्प्राप्य वस्तुएँ और इच्छित धर पर्याप्त रूप में प्राप्त हो जाते हैं।

तथा च—

और भी—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पतति कदाचिन्नभसः खाते पातालतोऽपि जलमेति ।
दैवमचिन्त्यं बलवद् बलवान्ननु पुरुषकारोऽपि ॥२८॥

अन्वय—कदाचित्, जलम्, नभसः, खाते, पतति, पातालतः, अपि, जलम्, एति, अचिन्त्यम्, दैवम्, बलवत्, ननु, पुरुषकारः; अपि, बलवान् ।

शब्दार्थ—कदाचित्=कभी, जलम्=जल, नभसः=आकाश से, खाते=जलाशय में, पतति=गिरता हैं, पातालतः=पाताल से, जलम्=जल, एति=आता है, अचिन्त्यम्=अचिन्त्य, दैवम्=भाग्य, बलवत्=बलवान्, ननु=किन्तु, पुरुषकारः=पुरुषार्थ, अपि=भी, बलवान्=बलवान् ।

अनुवाद—कभी जल आकाश से जलाशय में गिरता है, कभी जल पाताल से निकलता है । अचिन्त्य भाग्य बलवान् होता है, किन्तु पुरुषार्थ भी बलवान् होता है ।

अभिमतसिद्धिरशेषा भवति हि पुरुषस्य पुरुषकारेण ।
दैवमिति यदपि कथयसि पुरुषगुणः सोऽप्यदृष्टाख्यः ॥२९॥

अन्वय—पुरुषकारेण, हि, अशेषा, पुरुषस्य, अभिमतसिद्धिः, भवति, यत्, अपि, दैवम्, इति, कथयसि, सः, अपि, अदृष्टाख्यः, पुरुषगुणः ।

शब्दार्थ—पुरुषकारेण=पुरुषार्थ द्वारा, हि=क्योंकि, पुरुषस्य=मनुष्य की, अशेषा=सभी, अभिमतसिद्धिः=इच्छित वस्तुओं की सिद्धि, भवति=होती है, यत्=जिसको, अपि=भी, दैवम्=भाग्य, इति=इस प्रकार, कथयसि=कहते हो, सः=वह, अपि=भी, अदृष्टाख्यः=अदृष्ट नामक, पुरुषगुणः=पुरुष का गुण ।

अनुवाद—क्योंकि पुरुषार्थ द्वारा मनुष्य की सभी इच्छित वस्तुओं की सिद्धि होती है । जिसको भी 'भाग्य' कहते हैं वह भी अदृष्ट नामक पुरुष का गुण है । (अर्थात् पुरुषार्थ का दूसरा नाम भाग्य है) ।

द्वयमतुलं गुरु लोकात्तृणमिव तुलयन्ति साधु साहसिकाः ।
प्राणानद्भुतमेतच्चरितं चरितं ह्युदाराणाम् ॥३०॥

अन्वय—साहसिकाः, प्राणान्, तृणमिव, साधु, तुलयन्ति, एतत्, अद्भुतम्, चरितम्, हि, उदाराणाम्, चरितम्, च, द्वयम्, लोकात्, गुरु, अतुलम्, च, भवति ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शब्दार्थ—साहसिकाः=साहसी व्यक्ति, प्राणान्=प्राणों को, तृणम्-इव=तिनके के समान, तुलयन्ति=तोलते हैं, एतत्=यह, अद्भुतम्=विचित्र, चरितम्=चरित्र, उदाराणाम्=उदार व्यक्तियों का, चरितम्=चरित्र, च=और, द्वयम्=दोनों, लोकात्=संसार (की अन्य वस्तुओं) से, गुरु=श्रेष्ठ, अतुलम्=अतुलनीय, च=और, भवति=होता है।

अनुवाद—साहसी व्यक्ति प्राणों को तिनके के समान तोलते (समझते) हैं। (साहसी व्यक्तियों का) यह अद्भुत चरित्र, और उदार व्यक्तियों का चरित्र—दोनों संसार (की अन्य वस्तुओं) से श्रेष्ठ और अतुलनीय होते हैं।

क्लेशस्याऽङ्गमदत्वा सुखमेव सुखानि नेह लभ्यन्ते।
मधुभिन्मथनायस्तैराश्लिष्यति बाहुभिर्लक्ष्मीम् ॥३१॥

अन्वय—इह अङ्गम्, क्लेशस्य, अदत्वा, सुखम्, एव, सुखानि, न, लभ्यन्ते, मधुभित्, मथनायस्तैः, बाहुभिः, लक्ष्मीम्, आश्लिष्यति।

शब्दार्थ—इह=इस संसार, में अङ्गम्=शरीर को, कष्टस्य=कष्ट के, अदत्वा=विना देकर, सुखम्=सुख पूर्वक, एव=ही, सुखानि=सुख, न=नहीं, लभ्यन्ते=प्राप्त होते हैं, मधुभित्=मधु नामक दैत्य को मारने वाले, विष्णु, मथनायस्तैः=(समुद्र) मन्थन से श्रान्त, बाहुभिः=भुजाओं से लक्ष्मीम्=लक्ष्मी को आश्लिष्यति आलिङ्गन करते हैं।

अनुवाद=इस संसार में शरीर को कष्ट दिये बिना सुखपूर्वक ही सुखों की प्राप्ति नहीं हो जाती है। मधु दैत्य को मारने वाले विष्णु मन्थन से श्रान्त भुजाओं से लक्ष्मी का आलिङ्गन करते हैं।

तस्य कथं न चला स्यात् पत्नी विष्णोर्नृसिंहकस्यापि।
मासांश्चतुरो निद्रां यः सेवति जलगतः सततम् ॥३२॥

अन्वय—यः, जलगतः, चतुरः, मासान्, सततम्, निद्राम्, सेवति, नृसिंहकस्य, अपि, तस्य, विष्णोः, पत्नी, चला कथं न स्यात्।

शब्दार्थ—यः=जो, जलगतः=जल (सागर) में, चतुरः=चार, मासान्=मास, सततम्=निरन्तर, निद्राम्=शयन, सेवति=सेवन करते हैं, नृसिंहकस्य=नृसिंह रूप धारी, अपि=भी, तस्य=उसकी, विष्णोः=विष्णु की, पत्नी=स्त्री, चला=चञ्चला, कथन्=क्यों, न=न, स्यात्=हो जाए।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अनुवाद—जो सागर में चार मास तक निरन्तर शयन करते हैं, (उस) नृसिंह रूपधारी विष्णु की भी स्त्री चञ्चला क्यों न हो जाए ?

अन्वय—यावत्, पुरुषेण, साहसम्, न कृतम्, परभागः, दुरधिगमः, इह, भास्वान्, तुलाम्, अधिरूढः, जलदपटलानि, जयति ।

दुरधिगमः परभागो यावत्पुरुषेण साहसं न कृतम् ।
जयति तुलामधिरूढो भास्वानिह जलदपटलानि ॥३३॥

शब्दार्थ—यावत्=जब तक, पुरुषेण=व्यक्ति द्वारा, साहसम्=साहस, न=नहीं, कृतम्=किया गया, परभागः=विजय, दुरधिगमः=दुष्प्राप्य, इह=(इस संसार में), भास्वान्=सूर्य, तुलाम्=तुला राशि पर, अधिरूढः= आरूढ़ होकर, जलदपटलानि=मेघ समूहों को, जयति=जीतता है ।

अनुवाद—जब तक मनुष्य साहस नहीं करता, (तब तक) विजय दुष्प्राप्य है, यहाँ (इस संसार में) सूर्य तुला (राशि) पर आरूढ होकर मेघ समूह को जीतता है । (भावार्थ यह है कि साहस से ही कार्य की सिद्धि होती है) ।

तत्कथ्यतामस्माकं कश्चिद् धनोपायो विवरप्रवेशशाकिनीसाधनश्मशान-सेवनमहामांसविक्रयसाधकवर्तिप्रभृतीनामेकतम इति । अद्भुतशक्तिर्भवान् श्रूयते । वयमप्यतिसाहसिकाः ।

शब्दार्थ—तत्=तो, कथ्यताम्=बताओ, अस्माकम्=हमें, कश्चित्= कोई, धनोपायः=धन प्राप्ति का उपाय, विवरप्रवेशः=पाताल में प्रवेश, शाकिनीसाधनम्=प्रेत सिद्धि, श्मशानसेवनम्=श्मशान का सेवन करना, महामांसविक्रयः=मनुष्य के मांस का विक्रय, साधकवर्तिः=साधकीय गुटिका, प्रभृतीनाम्=आदिओं में से, एकतमः=(कोई भी) एक, अद्भुतशक्तिः= अद्भुत शक्ति वाले, भवान्=आप, श्रूयते=सुने जाते हैं, वयम्=हम अपि=भी, अतिसाहसिकाः=बहुत साहसी ।

अनुवाद—तो हमें कोई धन प्राप्ति का उपाय बताया जाए—पाताल में प्रवेश, प्रेतसिद्धि, श्मशान में जाना—मनुष्य के मांस का विक्रय—साधकीय गुटिका बनाना आदियों में से कोई एक । आप अद्भुतशक्ति वाले सुने जाते हैं ।

टिप्पणी—

महामांस विक्रय—मनुष्यों के मांस को वेचना । योगी भैरवानन्द

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कापालिक शैव संन्यासी है। शैव सिद्धान्त के दो भेद हैं—कापालिक तथा कालामुख सिद्धान्त। इस सिद्धान्त में मनुष्य के मांस-भक्षण का विधान है। कापालिक और कालामुख सिद्धान्तों में पंच मकार--मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन— के सेवन को आवश्यक माना जाता है। मांस में भी महामांस का भक्षण श्रेष्ठ माना गया है। साधकवर्त्ति—उस बत्ती को कहते हैं जिसे लेकर साधक आगे बढ़ता है, जहाँ वह बत्ती गिर जाती है, वहाँ पृथ्वी के भीतर से धनादि की प्राप्ति होती है।

उक्तं च—

और कहा गया है—

महान्त एव महतामर्थं साधयितुं क्षमाः।
ऋते समुद्रादन्यः को बिभर्ति बडवानलम् ॥३४॥

अन्वय—महान्तः, एव, महताम्, अर्थम्, साधयितुम्, क्षमाः, समुद्रात्, ऋते, अन्यः, कः, बडवानलम् विभर्ति।

शब्दार्थ—महान्तः=महापुरुष, एव=ही, महताम्=महापुरुषों के, अर्थम्=कार्य को, साधयितुम्=सिद्ध करने के लिए, क्षमाः=समर्थ (हैं), समुद्रात्=समुद्र के, ऋते=विना, अन्यः=दूसरा, कः=कौन, बडवानलम्=समुद्राग्नि को, विर्भात=धारण कर सकता है।

अनुवाद—महापुरुष ही महापुरुषों के कार्य को सिद्ध करने में समर्थ हैं। समुद्र के विना दूसरा कौन समुद्राग्नि को धारण कर सकता है।

टिप्पणी—बडवानलम्—समुद्र की अग्नि को बड़वाग्नि कहते हैं। पेट की अग्नि को जठराग्नि और जंगल की अग्नि को दावाग्नि कहते हैं।

भैरवानन्दोऽपि तेषां सिद्धयर्थं बहूपायं सिद्धवर्तिचतुष्टयं कृत्वाऽऽर्पयत्। आह च—गम्यतां हिमालयदिशि। तत्र सम्प्राप्तानां यत्र वर्तिः पतिष्यति तत्र निधानमसन्दिग्धं प्राप्स्यथ। तत्र स्थानं खनित्वा निधिं गृहीत्वा व्याघुटयताम्।

शब्दार्थ—भैरवानन्दः=भैरवानन्द ने, अपि=भी, तेषाम्=उनकी, सिद्धि+अर्थन्=सिद्धि के लिए, बहु+उपायम्=बहुत उपाय, सिद्धिवर्ति-चतुष्टयम्=चार सिद्ध वत्तियाँ, कृत्वा=करके, अर्पयत्=अर्पित कीं, आह=कहा, च=और गम्यताम्=जाओ, हिमालयदिशि=हिमालय की दिशा में, तत्र=वहाँ, सम्प्राप्तानाम्=प्राप्त हो जाने पर, यत्र=जहाँ, वर्तिः=बत्ती,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पतिष्यति=गिर जाएगी, तत्र=वहाँ निधानम्=निधि को, असन्दिग्धम्=अवश्य, प्राप्स्यथ=पाओगे, तत्र=वहाँ, स्थानम्=स्थान को, खनित्वा=खोदकर, निधिम्=निधि को, गृहीत्वा=लेकर, व्याघुट्यताम्=लौट आना।

अनुवाद—भैरवानन्द ने भी उनकी सिद्धि के लिये बहुत उपाय करके चार सिद्ध-बत्तियां अर्पित कीं और कहा—हिमालय की दिशा में जाओ। वहाँ जाने पर जहाँ बत्ति गिर जाएगी वहाँ निधि को अवश्य पाओगे, उस स्थान को खोदकर निधि को लेकर लौट आना।

तथानुष्ठिते तेषां गच्छतामेकतमस्य हस्ताद्वर्तिर्निपपात। अथासौ यावत्त प्रदेशं खनति तावत्ताम्रमयी भूमिः। ततस्तेनाभिहितम्—अहो! गृह्यतां स्वेच्छया ताम्रम्। अन्ये प्रोचुः—भो मूढ! किमनेन क्रियते। तत्प्रभूतमपि दारिद्र्यं न नाशयति। तदुत्तिष्ठ। अग्रतो गच्छामः। सोऽब्रवीत्—यान्तु भवन्तः। नाहमग्रे यास्यामि। एवमभिधाय ताम्रं यथेच्छया गृहीत्वा प्रथमो निवृत्तः।

शब्दार्थ—तथा=इस प्रकार, अनुष्ठिते=करने पर (पहुंचने पर), तेषाम्=उनके, गच्छताम्=जाते समय, एकतमस्य=(उनमें से) एक के, हस्तात्=हाथ से, वर्तिः=बत्ती, निपपात=गिर गई, अथ=तत्पश्चात्, असौ=वह, यावत्=जब, तम्=उस, प्रदेशम्=स्थान को, खनति=खोदता है, तावत्=तभी, ताम्रमयी=ताम्बा से युक्त, भूमि=पृथ्वी, ततः=तदनन्तर, तेन=उसने, अभिहितम्=कहा, अहो=अरे, गृह्यताम्=ले लो, स्वेच्छया=इच्छानुसार, ताम्रम्=ताम्बा, अन्ये=दूसरों ने, प्रोचुः=कहा, भो मूढ=अरे मूर्ख, किम्=क्या, अनेन=इससे, क्रियते=करेंगे। तत्=यह, प्रभूतम्=बहुत होने पर, अपि=भी, दारिद्र्यम्=दरिद्रता को, न=नहीं, नाशयति=मिटा सकता है, तत्=अतः, उत्तिष्ठ=उठो, अग्रतः=आगे, गच्छामः=चलते हैं, सः=वह, अब्रवीत्=बोला, यान्तु=जाएँ, भवन्तः=आप, न=नहीं, अहम्=मैं, अग्रे=आगे, यास्यामि=जाऊंगा, एवम्=इस प्रकार, अभिधाय=कहकर, ताम्रम्=ताम्बा को, यथा+इच्छया=इच्छानुसार, गृहीत्वा=लेकर, प्रथमः=पहला, निवृत्तः=लौट गया।

अनुवाद—इस प्रकार से करने पर उनके जाते समय उनमें से एक के हाथ से बत्ती गिर पड़ी। तत्पश्चात् जैसे ही वह जमीन को खोदता है तो ताम्बा से युक्त भूमि (दिखाई पड़ी)। तदनन्तर उसने कहा—अहो! अपनी इच्छानुसार ताम्बा ले लो। दूसरों ने कहा—अरे मूर्ख! इससे (हम) क्या करेंगे? यह बहुत होने पर भी दरिद्रता को नहीं मिटा सकेगा। इसलिए

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उठो आगे चलते हैं। उसने कहा—आप जाएँ। मैं आगे नहीं जाऊँगा, ऐसा कहकर इच्छानुसार ताम्बा लेकर पहला लौट गया।

ते त्रयोऽपि अग्रे प्रस्थिताः। अथ किञ्चिन्मात्रं गतस्याऽग्रेसरस्य वर्तिर्निपपात। सोऽपि यावत्खनितुमारब्धस्तावद् रूप्यमयी क्षितिः। ततः प्रहर्षितः प्राह—यत्—भो, भो, गृह्यतां यथेच्छया रूप्यम्। नाऽग्रे गन्तव्यम्। तावूचतुः—भोः, पृष्ठतस्ताम्रमयी भूमिः अग्रतो रूप्यमयी। तन्नूनमग्रे सुवर्णमयी भविष्यति। किञ्चाऽनेन प्रभूतेनाऽपि दरिद्रयनाशो न भवति। तदावामग्रे यास्यावः। एवमुक्त्वा द्वावप्यग्रे प्रस्थितौ। सोऽपि स्वशक्त्या रूप्यमादाय निवृत्तः।

शब्दार्थ—ते=वे, त्रयः=तीनों, अपि=भी, अग्रे=आगे, प्रस्थिताः=चले गए, अथ=तदनन्तर, किञ्चित्+मात्रम्=कुछ ही, गतस्य=गए हुए के, अग्रेसरस्य=आगे (जाने) वाले की, वर्तिः=बत्ती, निपपात=गिर गई, सः=उसने, अपि=भी, यावत्=जैसे ही, खनितुम्=खोदना, आरब्धः=आरम्भ किया, तावत्=वैसे ही, रूप्यमयी=चांदी युक्त, क्षितिः=भूमि, ततः=तत्पश्चात्, प्रहर्षितः=प्रसन्न होकर, प्राह=कहा, यद्=कि, भोः भो=अरे, अरे गृह्यताम्=ले लो, यथेच्छया=इच्छानुसार, रूप्यम्=चाँदी, न=नहीं, अग्रे=आगे, गन्तव्यम्=जाना चाहिए, तौ=उन दोनों ने ऊचतुः=कहा, भोः—अरे, पृष्ठतः=पीछे, ताम्रमयी=ताम्बायुक्त, अग्रतः=सामने रुप्यमयी=चांदीमयी तद्=अतः, नूनम्=निश्चय ही, अग्रे=आगे, सुवर्णमयी=सुवर्ण युक्त, भविष्यति=होगी, किम्=क्या, च=और, अनेन=इससे, प्रभूतेन=बहुत से, दारिद्रयनाशः=दरिद्रता का नाश, न=नहीं, भवति=होगा, तदा=तब, आवाम्=हम दोनों, अग्रे=आगे, यास्यावः=जायेंगे, एवम्=इस प्रकार, उक्त्वा=कहकर, द्वौ=दोनों, अपि=भी, अग्रे=आगे, प्रस्थितौ=चले गए, सः=वह, अपि=भी, स्वशक्त्या=अपनी शक्ति के अनुसार, रूप्यम्=चांदी, आदाय=लेकर, निवृत्तः=लौट गया।

अनुवाद—वे तीनों भी आगे चले गए। तत्पश्चात् कुछ ही (दूर) जाने पर उनमें से आगे वाले की बत्ती गिर पड़ी। उसने भी जैसे खोदना आरम्भ किया तब चांदी युक्त भूमि (दिखाई पड़ी)। तब प्रसन्न होकर कहा अरे, इच्छानुसार चांदी ले लो। आगे नहीं जाना चाहिए। उन दोनों ने कहा—अरे, पीछे ताम्बायुक्त भूमि थी। सामने चांदी युक्त है। अतः निश्चय ही आगे सुवर्ण युक्त भूमि होगी। तो इसकी अधिकता से भी दरिद्रता का नाश नहीं हो सकता है। तो हम दोनों आगे जायेंगे। इस प्रकार कहकर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दोनों ही आगे चले गए। वह भी अपनी शक्ति के अनुसार चाँदी लेकर लौट गया।

अथ तयोरपि गच्छतोरेकस्याग्रे वर्तिः पपात। सोऽपि प्रहृष्टो यावत्खनति, तावत्सुवर्णमयीं भूमिं दृष्ट्वा द्वितीयं प्राह—भोः! गृह्यतां स्वेच्छया सुवर्णम्। सुवर्णादन्यन्न किञ्चिदुत्तमं भविष्यति। स प्राह—मूढ! न किञ्चिद् वेत्सि। प्राक्ताम्रं, ततो रूप्यं, ततः सुवर्णम्। तन्नूनमतः परं रत्नानि भविष्यन्ति, येषामेकतमेनाऽपि दारिद्र्यनाशो भवति। तदुत्तिष्ठ, अग्रे गच्छावः। किमनेन भारभूतेनाऽपि प्रभूतेन? स आह गच्छतु भवान्। अयमत्र स्थितस्त्वां प्रतिपालयिष्यामि। तथाऽनुष्ठिते सोऽपि गच्छन्नेकाकी, ग्रीष्माऽर्कप्रतापसन्तप्ततनुः पिपासाकुलितः सिद्धिमार्गच्युत इतश्चेतश्च बभ्राम। अथ भ्राम्यन् स्थलोपरि पुरुषमेकं रुधिरप्लावितगात्रं भ्रमच्चक्रमस्तकमपश्यत्। ततो द्रुततरं गत्वा तमवोचत्—भोः, को भवान्? किमेवं चक्रेण भ्रमता शिरसि तिष्ठसि? तत्कथय मे यदि कुत्रचिज्जलमस्ति।

शब्दार्थ—अथ=तत्पश्चात्, तयोः=उन दोनों के अपि=भी, गच्छतः=जाते हुओं के, एकस्य=एक की, अग्रे=आगे, वर्ति,=बत्ती, पपात=गिर गई, सः=वह, अपि=भी, प्रहृष्टः=प्रसन्न होकर, यावत्=जैसे ही, खनति खोदता है, तावत्=तभी, सुवर्णमयी=सुवर्णयुक्त, भूमिम्=भूमि को, दृष्ट्वा=देखकर, द्वितीयम् दूसरे को, प्राह=कहा, भोः=अरे, गृह्यताम्=ले लो, स्वेच्छया=अपने इच्छानुसार, सुवर्णम् सुवर्ण, सुवर्णात्=सुवर्ण से, अन्यत्=अतिरिक्त, न=नहीं, किञ्चित्=कुछ, उत्तमम्=श्रेष्ठ, भविष्यति=होगी, सः=वह, प्राह=बोला, मूढ=मूर्ख, न=नहीं, किञ्चित्=कुछ, वेत्सि=जानते हो, प्राक्=पहले, ताम्रम्=ताँबा, ततः=फिर, रूप्यम्=चाँदी, ततः=फिर, सुवर्णम्=सुवर्ण, तत्=तो, नूनम्=निश्चय ही, अतः=इससे, परम्=आगे, रत्नानि=रत्न, भविष्यन्ति=होंगे, येषाम्=जिनमें से, एकतमेन=एक के द्वारा, अपि=भी, दारिद्र्यनाशः=दरिद्रता का नाश, भवति=होगा, तत्=तो, उत्तिष्ठ=उठो, अग्रे=आगे, गच्छावः=चलते हैं, किम्=क्या, अनेन=इससे, भारभूतेन=भार स्वरूप, प्रभूतेन=अधिक, सः=उसने, आह=कहा, गच्छतु=जाइए, भवान्=आप अहम्=मैं, अत्र=यहाँ, स्थितः=रहकर, त्वाम्=तुम्हारी, प्रतिपालयिष्यामि=प्रतीक्षा करूँगा, तथा=ऐसा करके, सः=वह, अपि=भी, गच्छन्=जाता हुआ, एकाकी=अकेला, ग्रीष्म+अर्कप्रतापसन्तप्ततनुः=गर्मी से सन्तप्त होकर, पिपासाकुलितः=प्यास से व्याकुल होकर, सिद्धिमार्गच्युत=

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सिद्धि मार्ग से अलग होकर, इतः=इधर, च=और, इतः=इधर, बभ्राम=घूमने लगा, अथ=तदनन्तर, भ्राम्यन्=घूमने वाले, स्थल+उपरि=स्थान पर, पुरुषम्=पुरुष को, एकम्=एक, भ्रमत्=घूमते हुए, चक्रमस्तकम्=जिसके सिर पर चक्र (उसको), अपश्यत्=देखा, तव=तब, द्रुततरम्=शीघ्र, गत्वा=जाकर, तम्=उसको, अवोचत्=कहा, भोः=अरे, कः=कौन, भवान्=आप, किम्=क्या, एवम्=इस इकार, चक्रेण=चक्र द्वारा, भ्रमता=घूमते हुए, शिरसि=सिर पर, तिष्ठसि=रहते हो, तत्=तो, कथय=कहो, मे=मुझे, कुत्रचित्=कहीं, जलम्=जल, अस्ति=है।

अनुवाद—तत्पश्चात् उन दोनों के भी आगे जाते हुए एक की बत्ती गिर गई। वह भी प्रसन्न होकर ज्यों ही भूमि खोदता है, तभी सोने से युक्त भूमि को देखकर दूसरे को कहा—अरे, अपनी इच्छानुसार सुवर्ण ले लो। सुवर्ण से और दूसरी वस्तु उत्तम नहीं हो सकती है। उसने कहा—मूर्ख ! तुम कुछ नहीं जानते हो। पहले ताम्बा, फिर चांदी, तत्पश्चात् सुवर्ण। तब निश्चित ही आगे रत्न होंगे जिनमें से एक के द्वारा भी दरिद्रता नष्ट हो जाएगी। तो उठो, आगे चलते हैं। इस बहुत अधिक बोझ से क्या लाभ ? उसने कहा—आप जाइए ! मैं यहां रहकर तुम्हारी राह देखूं।

ऐसा करके वह भी अकेला जाता हुआ ग्रीष्म ऋतु के सूर्य की गर्मी से सन्तप्त होकर प्यास से व्याकुल होकर सिद्धि मार्ग से अलग होकर इधर उधर घूमने लगा। तत्पश्चात् घूमने योग्य स्थान पर खून से लथपथ शरीर वाले एक पुरुष को देखा, जिसके माथे पर चक्र घूम रहा था। तदनन्तर शीघ्र जाकर उससे कहा—अरे, आप कौन हैं। इस प्रकार सिर पर घूमते हुए चक्र वाले आप क्यों हैं, तो बताओ यदि कहीं पर जल हो।

एवं तस्य प्रवदतस्तच्चक्रं तत्क्षणात्तस्य शिरसो ब्राह्मणमस्तके चटितम्। स आह—भद्र किमेतत्। स प्राह—ममाप्येवमेवैतच्छिरसि चटितम्। स आह—तत्कथय कदैतदुत्तरिष्यति ? महती मे वेदना वर्तते। स आह—यदा त्वमिव कश्चिद्धृतसिद्धिवर्तिरेवमागत्य, त्वामालापयिष्यति तदा तस्य मस्तकं चटिष्यति। स आह—कियान्कालस्तवैवं स्थितस्य ? स आह—साम्प्रतं को राजा धरणीतले ? स आह—वीणावत्सराजः। स आह—अहं तावत्काल-सङ्ख्यां न जानामि। परं यदा रामो राजासीत्तदाऽहं दारिद्र्योपहतः सिद्धवर्तिमादायानेन पथा समायातः। ततो मयाऽन्यो नरो मस्तकधृतचक्रो दृष्टः पृष्टश्च। ततश्चैतज्जातम्। स आह—भद्र ! कथं तवैवं स्थितस्य भोजनजलप्राप्तिरासीत् ? स आह—भद्र ! धनदेन निधानहरणभयात्सिद्धाना-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मेतच्चक्रपतनरूपं भयं दर्शितम् । तेन कश्चिदपि नागच्छति । यदि कश्चिदायाति स क्षुत्पिपासानिद्रारहितो जरामरणवर्जितः केवलमेवं वेदनामनुभवति । तदाज्ञापय मां स्वगृहाय इत्युक्त्वा गतः ।

शब्दार्थ—एवम्=इस प्रकार, तस्य=उसके, प्रवदतः कहते हुए के, तत्=वह, चक्रम्=चक्र, तत्=उसी, क्षणात्=समय, तस्य=उसके, शिरसः=सिर से, ब्राह्मणमस्तके=ब्राह्मण के सिर पर, चटितम्=चढ़ गया, सः=उसने, आह=कहा, भद्र=मित्र, किम्=क्या एतत्=यह, सः=वह, प्राह=बोला, मम=मेरे, अपि=भी, एवम्=इस प्रकार, एव=ही, एतत्=यह, शिरसि=सिर पर, चटितम्=चढ़ा था, सः=उसने, आह=कहा, तत्=तो, कथय=कहो, कदा=कब, एतत्=यह, उत्तरिष्यति=उतरेगा, महती=बहुत, मे=मुझे, वेदना=पीड़ा, वर्तते=हो रही है, सः=उसने, आह=कहा, यदा=जब, त्वम्=तुम्हारे, इव=समान, कश्चित्=कोई, धृतसिद्धवर्तिः=सिद्ध बत्ती को धारण करने वाला, एवम्=इस प्रकार, आगत्य=आकर, त्वम्=तुम्हें, आलापयिष्यति=बुलायेगा, तदा=तब, तस्य=उसके, मस्तके=सिर पर, चटिष्यति=चढ़ जाएगा, सः=उसने, आह=कहा, कियान्=कितना, कालः=समय, तव=तुम्हें, एवम्=इस प्रकार, स्थितस्य=रहते हुए, सः=उसने, आह=कहा, साम्प्रतम्=इस समय, कः=कौन, राजा=राजा, धरणीतले=पृथ्वी पर, सः=उसने, आह=कहा, वीणावत्सराजः=वीणावत्सराज, सः=उसने, आह=कहा, अहम्=मैं, तावत्=तो, कालसङ्ख्याम्=काल की गणना, न=नहीं, जानामि=जानता हूँ, परम्=किन्तु, यदा=जब, रामः=राम, राजा=राजा, आसीत्=थे, तदा=तब, अहम्=मैं, दारिद्र्योपहतः=दरिद्रता से पीड़ित होकर, सिद्धवर्तिम्=सिद्ध बत्ती को, आदाय=लेकर, अनेन=इस पथा=मार्ग से, समायातः=आया, ततः=तब, मया=मैंने, अन्यः=दूसरा, नरः=व्यक्ति, मस्तकधृतचक्रः=सिर पर चक्र धारण किये हुए, दृष्टः=देखा, पृष्टः=पूछा, च=और, ततः=तब से, च=और, एतत्=यह, जातम्=हो गया, सः=उसने, आह=कहा, भद्र=मित्र, कथम्=किस प्रकार, तव=तुम्हें, एवम्=इस तरह, स्थितस्य=रहते हुए, भोजन-जलप्राप्तिः=भोजन और जल की प्राप्ति, आसीत्=होती थी, सः=उसने, आह=कहा, भद्र=मित्र, धनदेन=कुबेर ने, निधानहरणभयात्=खजाने की चोरी के डर से, सिद्धानाम्=सिद्धों को, एतत्=यह, चक्रपतनरूपम्=चक्र के गिरने का, भयम्=भय, दर्शितम्=दिखाया, तेन=इसी (कारण) से, कश्चित्=कोई, अपि=भी, न=नहीं, आगच्छति=आता है । यदि=यदि,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कश्चित् = कोई, आयाति = आता है, सः = वह, क्षुत्पिपासानिद्रारहितः = भूख, प्यास और निद्रा से रहित, जरामरणवर्जितः = बुढ़ापा और मृत्यु से रहित, केवलम् = केवल, एवम् = इस प्रकार, वेदनाम् = पीड़ा का, अनुभवति = अनुभव करता है, तदा = तब, आज्ञापय = आज्ञा दें। माम् = मुझे, स्वगृहाय = अपने घर (जाने) के लिए, इति = इस प्रकार, उक्त्वा = कहकर, गतः = चला गया।

अनुवाद—इस प्रकार उसके कहते हुए (ही) वह चक्र उसी समय उसके सिर से (हटकर) ब्राह्मण के सिर पर चढ़ गया। उसने कहा—मित्र, यह क्या? उसने कहा—मेरे सिर पर भी यह इसी तरह चढ़ गया था। उसने कहा—तो बताओ कब यह उतरेगा? मुझे बहुत कष्ट हो रहा है। उसने कहा—जब तुम्हारे समान ही कोई सिद्ध बत्ती को धारण किये हुए आकर, तुमसे बात करेगा, तब उसके सिर पर चढ़ जायगा। उसने कहा—इस प्रकार रहते हुए तुम्हें कितना समय हुआ? उसने कहा—इस समय पृथ्वी पर कौन राजा है? उसने कहा—वीणावत्सराज! उसने कहा—तो मैं काल की गणना नहीं जानता हूँ, किन्तु जब राम राजा थे तब मैं दरिद्रता से पीड़ित होकर सिद्ध बत्ती लेकर इस रास्ते से आया। तब मैंने (कोई) दूसरा व्यक्ति सिर पर चक्र धारण किए हुए देखा और पूछा! उसी समय यह हो गया। उसने कहा—मित्र! किस प्रकार इस तरह रहते तुम्हें भोजन और जल प्राप्त होता था। उसने कहा—मित्र, कुबेर ने खजाने की चोरी के डर से सिद्धों के लिए चक्र के गिरने का यह भय दिखाया है। इस लिए कोई भी नहीं आता। यदि कोई आता है, तो वह भूख, प्यास, निद्रा, बुढ़ापा और मृत्यु से रहित होकर केवल इसी प्रकार कष्ट का अनुभव करता है। तो मुझे अपने घर (जाने) के लिए आज्ञा दें, ऐसा कहकर चला गया।

तस्मिश्चिरयति स सुवर्णसिद्धिस्तस्याऽन्वेषणपरस्तत्पदपङ्क्त्या यावत् किञ्चिद् वनान्तरमागच्छति तावद्रुधिरप्लावितशरीरस्तीक्ष्णचक्रेण मस्तके भ्रमता सवेदनः क्वणन्नुपविष्टस्तिष्ठतीति ददर्श। ततः तत्समीपवर्तिना भूत्वा सबाष्पं पृष्टः—भद्र! किमेतत्? स आह—विधिनियोगः। स आह—कथं तत्? कथय कारणमेतस्य। सोऽपि तेन पृष्टः सर्वं चक्रवृत्तान्तमकथयत्। तत् श्रुत्वाऽसौ तं विगर्हयन्निदमाह—भो! निषिद्धस्त्वं मयानेकशो न शृणोषि मे वाक्यम्। तत्किं क्रियते! विद्यवानपि कुलीनोऽपि बुद्धिरहितः।

शब्दार्थ—अथ = तत्पश्चात्, तस्मिन् = उसके, चिरयति = विलम्ब करने पर, सः = वह, सुवर्णसिद्धि = सुवर्णसिद्धि, तस्य = उसकी, अन्वेषणपरः =

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

खोज में, तत्=उस (के), पदपङ्क्त्या=पद चिह्नों द्वारा, यावत्=जब, किञ्चित्=किसी, वनान्तरम्=वन के अन्दर, आगच्छति=आता है, तावत्=तब, रुधिरप्लावितशरीरः=खून से लथपथ शरीर वाले, तीक्ष्णचक्रेण=तेज चक्र से, मस्तके=सिर पर, भ्रमता=घूमते हुए, सवेदनः=पीड़ा से युक्त, क्वणन्=रोते हुए, उपविष्टः=बैठा हुआ, तिष्ठति=रहता है; ततः=तब, तत्=उस (के) समीपवर्तिना=समीपवर्ती, भूत्वा=होकर, सवाष्पम्=अश्रु युक्त, पृष्टः=पूछा, भद्र=मित्र, किम्=क्या, एतत्=यह, सः=उसने, आह=कहा, विधिनियोगः=भाग्य का योग, कथम्=किस प्रकार, तत्=यह, कथय=कहो, कारणम्=कारण, एतस्य=इसका, सः=उसने, अपि=भी, तेन=उसके द्वारा, पृष्टः=पूछे गए, सर्वम्=सम्पूर्ण, चक्रवृत्तान्तम्=चक्र सम्बन्धी वृत्तान्त, अकथयत्=कहा। तत्=वह, श्रुत्वा=सुनकर, असौ=उसने, तम्=उसको, विगर्हयन्=निन्दा करते हुए, इदम्=यह, आह=कहा, निषिद्धः= रोके गए, त्वम्=तुमने, मया=मेरे द्वारा, अनेकशः=बार-बार, न=नहीं, शृणोषि=सुना, मे=मेरी, वाक्यम्=बात को, तत्=तो, किम्=क्या, क्रियते=किया जा सकता है, विद्यावान्=विद्वान्, कुलीनः=अच्छे कुल में उत्पन्न, बुद्धिरहित=मूर्ख।

अनुवाद—तत्पश्चात् उसके विलम्ब करने पर वह सुवर्णसिद्धि उसको खोजते हुए उसके पदचिह्नों के द्वारा जब किसी वन के भीतर पहुँचता है तब खून से लथपथ शरीर वाले, तेज चक्र को सिर पर घूमते हुए, पीड़ा युक्त, रोते हुए को देखा। तब उसके समीप जाकर अश्रु युक्त होकर पूछा—मित्र, यह क्या? उसने कहा—भाग्य का योग। उसने कहा— वह कैसे? इसका कारण बताओ। उसने भी उसके द्वारा पूछे जाने पर चक्र सम्बन्धी सारा वृत्तान्त कहा। उसे सुनकर उसने उसकी निन्दा करते हुए यह कहा—अरे मेरे द्वारा अनेक बार रोके जाने पर तुमने मेरी बात न सुनी। तो क्या किया जा सकता है। तुम विद्वान्, उच्च कुल में उत्पन्न होने पर भी मूर्ख हो।
अथवा साध्विदमुच्यते—

वरं बुद्धिर्न सा विद्या विद्याया बुद्धिरुत्तमा।
बुद्धिहीना विनश्यन्ति यथा ते सिंहकारकाः ॥३५॥

अथवा यह उचित कहा गया है—

अन्वय—बुद्धिः, वरम्, सा, विद्या, न, विद्यायाः, बुद्धिः, उत्तमा, बुद्धिहीनाः विनश्यन्ति, यथा ते सिंहकारकाः।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शब्दार्थ—बुद्धिः=मति, वरम्=श्रेष्ठ, न=नहीं, सा=वह, विद्या=विद्या, विद्यायाः=विद्या से, बुद्धि=मति, उत्तमा=श्रेष्ठ, बुद्धिहीनाः=बुद्धि रहित, विनश्यन्ति=नष्ट हो जाते हैं, यथा=जिस प्रकार, ते=वे, सिंह-कारकाः=सिंह को जीवित करने वाले (ब्राह्मण)।

अनुवाद—बुद्धि श्रेष्ठ होती है, वह विद्या नहीं। विद्या से बुद्धि श्रेष्ठ होती हैं। बुद्धि रहित (मनुष्य) नष्ट हो जाते हैं जैसे वे सिंह को जीवित करने वाले (ब्राह्मण नष्ट हो जाते हैं)।

चक्रधर आह—कथमेतत् ? सुवर्णसिद्धिराह—

अनुवाद—चक्रधर ने कहा—यह कैसे ? सुवर्णसिद्धि ने कहा—

४. सिंहकारकमूर्खब्राह्मणकथा

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने चत्वारो ब्राह्मणपुत्राः परस्परं मित्रभावमुपगता वसन्ति स्म। तेषां त्रयः शास्त्रपारङ्गताः परन्तु बुद्धिरहिताः। एकस्तु बुद्धिमान् केवलं शास्त्रपराङ्मुखः। अथ तैः कदाचिन्मित्रैर्मन्त्रितं—को गुणो विद्यायाः येन देशान्तरं गत्वा भूपतीन् परितोष्याऽर्थोपार्जना न क्रियते। तत्पूर्वदेशं गच्छामः।

शब्दार्थ—कस्मिन्=किसी, अधिष्ठाने=प्रदेश में, चत्वारः=चार, ब्राह्मणपुत्राः=ब्राह्मण के पुत्र, परस्परम्=परस्पर, मित्रभावम्=मित्रता पूर्वक, वसन्ति स्म=रहते थे। तेषाम्=उनमें से, त्रयः=तीन, शास्त्र-पारङ्गताः=शास्त्रों में प्रवीण, परम्+तु=किन्तु, बुद्धिरहिताः=बुद्धिहीन, एकः तु=एक तो, बुद्धिमान्=बुद्धि युक्त, केवलम्=केवल, शास्त्रपराङ्मुखः=शास्त्र विमुख, अथ=तत्पश्चात्, तैः=उन लोगों ने, कदाचित्=कभी, मित्रैः=मित्रों ने, मन्त्रितम्=विचार किया, कः=क्या, गुणः=लाभ, विद्यायाः=विद्या का, येन=जिससे, देशान्तरम्=दूसरे देश, गत्वा=जाकर, भूपतीन्=राजाओं को, परितोष्य=सन्तुष्ट करके, अर्थोपार्जना=धन का उपार्जन, न=न, क्रियते=किया जाए, तत्=तो, पूर्वदेशम्=पूर्व दिशा में, गच्छामः=जाते हैं।

अनुवाद—किसी प्रदेश में चार ब्राह्मण पुत्र परस्पर मित्रतापूर्वक रहते थे। उनमें से तीन शास्त्रों में कुशल किन्तु बुद्धिहीन थे। एक तो बुद्धियुक्त किन्तु शास्त्रविमुख था। तब उन मित्रों ने कभी विचार किया—विद्या का क्या लाभ जिससे दूसरे देश में जाकर राजाओं को सन्तुष्ट करके धन न कमाया जाए ? तो पूर्व दिशा की ओर जाते हैं।

तथाऽनुष्ठिते किञ्चिन्मार्गं गत्वा तेषां ज्येष्ठतरः प्राह—अहो, अस्माक-मेकश्चतुर्थो मूढः केवलं बुद्धिमान्। न च राजप्रतिग्रहो बुद्ध्या लभ्यते, विद्यां

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विना । तन्नास्मै स्वोपार्जितं दास्यामि। तद् गच्छतु गृहम्। ततो द्वितीयेनाऽभिहितं—भोः सुबुद्धे ! गच्छ त्वं स्वगृहं, यतस्ते विद्या नास्ति। ततस्तृतीयेनाऽभिहितम्—अहो न युज्यते एवं कर्तुम्, यतो वयं बाल्यात्प्रभृत्येकत्र क्रीडिताः। तदागच्छतु महाऽनुभावोऽस्मदुपार्जितवित्तस्य समभागी भविष्यतीति।

शब्दार्थ—तथा=उस प्रकार, अनुष्ठिते=करने पर, किञ्चित्=कुछ, मार्गम्=मार्ग (तक), गत्वा=जाकर, तेषाम्=उनमें से, ज्येष्ठतरः=(कुछ) बड़े ब्राह्मण ने, प्राह=कहा, अस्माकम्=हम में से, एकः=एक, चतुर्थ= चौथा, मूढः=मूर्ख (विद्याहीन), केवलम्=केवल, बुद्धिमान्=बुद्धियुक्त, न=नहीं, राजप्रतिग्रहः=राजाओं का दान, बुद्ध्या=बुद्धि द्वारा, लभ्यते=प्राप्त किया जा सकता है, विद्याम्=विद्या के, विना=अभाव, तत्=तो, न=नहीं, अस्मै=इस (मूर्ख) को, स्वोपार्जितम्=अपना कमाया हुआ, दास्यामि=दूंगा। तत्=तो, गच्छतु=चला जाए, गृहम्=घर, ततः=तब, द्वितीयेन=दूसरे ने, अभिहितम्=कहा, गच्छ=जाओ, त्वम्= तुम, स्वगृहम्=अपने घर, यतः=क्योंकि, ते=तुम्हें, विद्या=विद्या, न=नहीं, अस्ति=है। ततः=तब, तृतीयेन=तीसरे ने, अभिहितम्=कहा, अहो=अरे, न=नहीं, युज्यते=उचित होगा, एवम्=इस प्रकार, कर्तुम्= करना, यतः=क्योंकि, वयम्=हम, बाल्यात् प्रभृति=बचपन से ही, एकत्र= एक साथ, क्रीडिताः=खेले हैं, तत्=तो, आगच्छतु=आए, महा+अनु-भावः=महाशय, अस्मत्=हमसे, उपार्जितवित्तस्य=कमाये हुए धन का, समभागी=समान हिस्सेदार, भविष्यति=होगा।

अनुवाद—इस प्रकार कुछ मार्ग तक जाकर, उनमें से ज्येष्ठ ने कहा— हममें से चौथा (व्यक्ति) मूर्ख (विद्याहीन) है, केवल बुद्धिमान् है। राजाओं का दान विद्या के अभाव में बुद्धि से प्राप्त नहीं किया जा सकता है। तो इसको (मैं) अपना कमाया हुआ (धन) नहीं दूंगा। तो (यह) घर जाए। तब दूसरे ने कहा—अरे सुबुद्धि ! तुम अपने घर जाओ क्योंकि तुम विद्या रहित हो। तब तीसरे ने कहा—ऐसा करना उचित नहीं होगा क्योंकि हम बचपन से ही एक साथ खेले हैं। तब महाशय आप जाओ, हमारे कमाए हुए धन के (तुम) समान हिस्सेदार होओगे।

उक्तञ्च—

और कहा गया है—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अन्वय—या, सामान्या, वेश्या, इव, पथिकैः, न, उपयुज्यते, या, केवला, वधूः, इव, तया, लक्ष्म्या, किम्, क्रियते ।

शब्दार्थ—या=जो, सामान्या=सामान्य, वेश्या=वेश्या, इव=समान, पथिकैः=पथिकों के द्वारा, न=नहीं, उपयुज्यते=उपयोग में आ सकती है, या=जो, केवला=केवल, वधूः=कुलवधू, इव=समान, तया=उस, लक्ष्म्या=लक्ष्मी द्वारा, किम्=क्या, क्रियते=किया जा सकता है ।

अनुवाद—जो सामान्य वेश्या की तरह पथिकों के उपयोग में नहीं आ सकती है, (जो केवल) कुलवधू के समान है, उस लक्ष्मी से क्या लाभ है ?

व्याख्या—यदि एक व्यक्ति ही लक्ष्मी का उपयोग करता है तो उस लक्ष्मी का दूसरों के लिए कोई लाभ नहीं हो सकता है । जिस प्रकार कुलवधू एक ही व्यक्ति के उपयोग की वस्तु होती है उसी तरह लक्ष्मी भी एक व्यक्ति के उपयोग की वस्तु हो तो उससे कोई लाभ नहीं ।

तथा च—
और भी—

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् ।
उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥३६॥

अन्वय—अयम्, निजः, वा, परः, इति, लघुचेतसाम्, गणना, उदारचरितानाम्, तु, वसुधा, एव, कुटुम्बकम् ।

शब्दार्थ—अयम्=यह, निजः=अपना (है), वा=अथवा, परः=पराया (है), इति=इस प्रकार, लघुचेतसाम्=संकुचितहृदय वाले (लोगों) की, गणना=विचार, उदारचरितानाम्=उदार हृदय वालों का, तु=तो, वसुधा=विश्व, एव=ही, कुटुम्बकम्=परिवार ।

अनुवाद—यह अपना है या पराया है—इस प्रकार का विचार संकुचित हृदय वालों का है । उदार हृदय वालों का तो विश्व ही परिवार है ।

तथाऽनुष्ठिते तैर्मार्गाश्रितैरटव्यां कतिचिदस्थीनि दृष्टानि । ततश्चैकेनाऽभिहितम्—अहो, अद्य विद्याप्रत्ययः क्रियते । किञ्चिदेतत्सत्त्वं मृतं तिष्ठति । तद् विद्याप्रभावेण जीवनसहितं कुर्मः । अहमस्थिसञ्चयं करोमि । ततश्च तेनौत्सुक्यादस्थिसञ्चयः कृतः । द्वितीयेन चर्ममांसरुधिरं संयोजितम् । तृतीयोऽपि यावज्जीवनं सञ्चारयति, तावत्सुबुद्धिना निषिद्धः—भोः तिष्ठतु

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भवान्। एष सिंहो निष्पाद्यते। यद्येनं सजीवं करिष्यसि ततः सर्वानपि व्यापादयिष्यति।

शब्दार्थ—तथा=उस प्रकार, अनुष्ठिते=करने पर, तैः=उन लोगों ने, मार्गाश्रितैः=रास्ते में चलने वाले, अटव्याम्=वन में, कतिचित्=कुछ, अस्थीनि=हड्डियाँ, दृष्टानि=देखीं। ततः=तब, च=और, एकेन=एक (व्यक्ति) ने, अभिहितम्=कहा, अद्य=आज, विद्याप्रत्ययः=विद्या की परीक्षा, क्रियते=की जाए। किञ्चित्=कोई, एतत्=यह, सत्त्वम्=प्राणी, मृतम्=मरा हुआ, तिष्ठति=पड़ा है, तत्=तो, विद्याप्रभावेण=विद्या के प्रभाव से, जीवनसहितम्=प्राण युक्त, कुर्मः=करते हैं, अहम्=मैं, अस्थि-सञ्चयं=हड्डियाँ एकत्र, करोमि=करता हूँ, ततः=तदनन्तर, च=और, तेन=उसने, औत्सुक्यात्=उत्सुकता से, अस्थिसञ्चयः=हड्डियाँ एकत्र, कृतः=कर लीं, द्वितीयेन=दूसरे ने, चर्ममांसरुधिरम्=चमड़ी, मांस और खून, संयोजितम्=इकट्ठा किया, तृतीयः=तीसरा, अपि=भी, यावत्=जब जीवनम्=प्राण का, सञ्चारयति=सञ्चार करता है, तावत्=तभी सुबुद्धिना=सुबुद्धि ने, निषिद्धः=रोका, तिष्ठतु=ठहरो, भवान्=आप, एषः=यह, सिंहः=सिंह, निष्पाद्यते=निर्मित होने जा रहा है, यदि=यदि, एनम्=इसको, सजीवम्=प्राणयुक्त, करिष्यसि=करोगे, ततः=तब, सर्वान्=सबको, अपि=भी, व्यापादयिष्यति=मार डालेगा।

अनुवाद—इस प्रकार करने पर मार्ग में जाते हुए उन्होंने वन में कुछ हड्डियाँ देखीं। तब एक ने कहा—अरे, आज विद्या की परीक्षा की जाए। यह कोई मरा हुआ प्राणी पड़ा है तो विद्या प्रभाव से प्राणयुक्त करते हैं। मैं हड्डियाँ एकत्र करता हूँ। तत्पश्चात् उसने उत्सुकतापूर्वक हड्डियाँ एकत्र कीं। दूसरे ने चमड़ी, मांस और खून एकत्र किया। तीसरा (ब्राह्मण पुत्र) भी जैसे ही प्राण का सञ्चार करने लगा, तभी सुबुद्धि ने (उसे) रोका—अरे, आप ठहरो। यह सिंह बनने जा रहा है। यदि इसको प्राणयुक्त करोगे तब (यह) सभी को मार डालेगा।

इति तेनाऽभिहितः स आह—धिङ्मूर्ख! नाऽहं विद्याया विफलतां करोमि। ततस्तेनाऽभिहितम्—तर्हि प्रतीक्षस्व क्षणं यावदहं वृक्षमारोहामि। तथाऽनुष्ठिते, यावत्सजीवः कृतस्तावत्ते त्रयोऽपि सिंहेनोत्थाय व्यापादिताः। स च पुनर्वृक्षादवतीर्य गृहं गत इति। अतः परमुक्तं च सुवर्णसिद्धिना—

शब्दार्थ—इति=इस प्रकार, तेन=उसके द्वारा, अभिहितः=कहे गए, सः=उसने, आह=कहा, धिङ् मूर्ख=मूर्ख! धिक्कार है, न=नहीं, अहम्=

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मैं, विद्यायाः=विद्या की, विफलताम्=विफलता, करोमि=करता हूँ, ततः=तब, तेन=उसने, अभिहितम्=कहा, तर्हि=तो, प्रतीक्षस्व=प्रतीक्षा करो, क्षणम्=थोड़ी देर, यावत्=जब तक, अहम्=मैं वृक्षम्=वृक्ष पर, आरोहामि=चढ़ता हूँ। तथा=उस प्रकार, अनुष्ठिते=करने पर, यावत्=जब, सजीवः=प्राणयुक्त, कृतः=किया गया, तावत्=तभी, ते=वे, त्रयः=तीनों, अपि=भी, सिंहेन=सिंह द्वारा, उत्थाय=उठकर, व्यापादिताः=मार डाले गए, सः=वह, च=और, पुनः=फिर, वृक्षात्=वृक्ष से, अवतीर्य=उतरकर, गृहम्=घर, गतः=चला गया, अतः=इसलिए, अहम्=मैं, ब्रवीमि=कहता हूँ, वरम्=श्रेष्ठ, बुद्धिः=मति, न=नहीं, सा=वह, विद्या=विद्या, अतः=इससे, परम्=पश्चात्, उक्तम्=कहा, सुवर्णसिद्धिना=सुवर्ण सिद्धि ने।

अनुवाद—इस प्रकार उसके (सुबुद्धि) द्वारा कहे जाने पर उसने कहा—मूर्ख! धिक्कार है। मैं विद्या को विफल नहीं करता हूँ। तब उसने (सुबुद्धि ने) कहा, थोड़ी देर ठहरो, जब तक मैं वृक्ष पर चढ़ता हूँ।

इस प्रकार करने पर (वृक्षारोपण करने पर) जैसे ही (सिंह को) प्राणयुक्त किया गया, वैसे ही उठकर सिंह ने उन तीनों को मार डाला। और वह फिर वृक्ष से उतरकर घर चला गया। इसलिए मैं कहता हूँ—बुद्धि श्रेष्ठ है वह विद्या नहीं। इसके पश्चात् सुवर्णसिद्धि ने कहा—

किं तया क्रियते लक्ष्म्या या वधूरिव केवला।
या न वेश्येव सामान्या पथिकैरुपभुज्यते ॥३७॥
अपि शास्त्रेषु कुशला लोकाचारविवर्जिताः।
सर्वे ते हास्यतां यान्ति यथा ते मूर्खपण्डिताः ॥३८॥

अन्वय—शास्त्रेषु, कुशलाः, अपि, लोकाचारविवर्जिताः, ते, सर्वे, हास्यताम्; यान्ति, यथा, ते, मूर्खपण्डिताः।

शब्दार्थ—शास्त्रेषु=शास्त्रों में, कुशलाः=कुशल, अपि=भी, लोकाचारविवर्जिताः=लोक व्यवहार से रहित, ते=वे, सर्वे=सभी, हास्यताम्=उपहास को, यान्ति प्राप्त होते हैं, यथा=जैसे, ते=वे, मूर्खपण्डिताः=मूर्ख पण्डित।

अनुवाद—शास्त्रों में कुशल होने पर भी लोकव्यवहार से रहित—वे सभी (व्यक्ति) उपहास (का विषय हो जाते हैं जैसे वे (लोकव्यवहार से अनभिज्ञ) मूर्ख पण्डित (हो गए थे)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चक्रधर ग्राह—कथमेतत् ? सोऽब्रवीत्—

अनुवाद—चक्रधर ने कहा—यह कैसे ? उसने कहा—

५. मूर्खपण्डितकथा

कस्मिश्चिदधिष्ठाने चत्वारो ब्राह्मणाः परस्परं मित्रत्वमापन्ना वसन्ति स्म। बालभावे तेषां मतिरजायत—भोः देशान्तरं गत्वा, विद्यायाः उपार्जनं क्रियते।

शब्दार्थ—कस्मिश्चित्=किसी, अधिष्ठाने=प्रदेश में, चत्वारः=चार, ब्राह्मणाः=ब्राह्मण, परस्परम्=परस्पर, मित्रत्वम्=मित्रता को, आपन्नाः=प्राप्त हुए, वसन्ति स्म=रहते थे, बालभावे=बाल्यावस्था में, तेषाम्=उनकी, मतिः=बुद्धि (में) अजायत=आया, देशान्तरम्=दूसरे दूसरे देश, गत्वा=जाकर, विद्यायाः=विद्या का, उपार्जनम्=अध्ययन, क्रियते=किया जाए।

अनुवाद—किसी प्रदेश में चार ब्राह्मण मित्रता पूर्वक रहते थे। बाल्यावस्था में उनके मन में आया कि दूसरे देश में जाकर विद्याध्ययन किया जाए।

अथान्यस्मिन्दिवसे ते ब्राह्मणाः परस्परं निश्चयं कृत्वा विद्योपार्जनार्थं कान्यकुब्जे गताः। तत्र च विद्यामठे गत्वा पठन्ति। एवं द्वादशाब्दानि यावदेकचित्ततया पठित्वा विद्याकुशलास्ते सर्वे सञ्जाताः। ततस्तैश्चतुर्भिर्मिलित्वोक्तम्—वयं सर्वविद्यापारङ्गताः। तदुपाध्यायमुत्कलापयित्वा अनुज्ञां लब्ध्वा पुस्तकानि नीत्वा प्रचलिताः यावत्किञ्चिन्मार्गं यान्ति तावत् द्वौ पन्थानौ समायातौ दृष्ट्वा उपविष्टाः।

शब्दार्थ—अथ=तत्पश्चात्, अन्यस्मिन्=दूसरे, दिवसे=दिन, ते=वे, ब्राह्मणाः=ब्राह्मण, परस्परम्=परस्पर, निश्चयम्=निश्चय, कृत्वा=करके, विद्योपार्जनार्थम्=विद्याध्ययन के लिए, कान्यकुब्जे,=कान्यकुब्ज देश में, गताः=गए, तत्र=वहाँ, विद्यामठे=विद्यालय में, गत्वा=जाकर, पठन्ति=पढ़ते हैं, एवम्=इस प्रकार, द्वादशाब्दानि=बारह वर्ष, यावत्=जब, एकचित्ततया=एकाग्र मन से, पठित्वा=पढ़कर, विद्याकुशलाः=विद्या में कुशल, ते=वे, सर्वे=सभी, सञ्जाताः=हो गए, ततः=तब, तैः=उन, चतुर्भिः=चारों ने, मिलित्वा=मिलकर, उक्तम्=कहा, वयम्=हम, सर्वविद्यापारङ्गताः=सभी विद्याओं में कुशल, तत्=तो, उपाध्यायम्=गुरु को, उत्कलापयित्वा=पूछकर, स्वदेशे=अपने देश, गच्छामः=चलते हैं, तथा=उस प्रकार, एव=ही अनुष्ठीयताम्=करना चाहिए, इति=इस प्रकार, उक्त्वा=कहकर, ब्राह्मणाः=ब्राह्मण उपाध्यायम्=गुरु को, उत्कलापयित्वा=पूछकर, अनुज्ञाम्=आज्ञा, लब्ध्वा=प्राप्त करके, पुस्तकानि-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

=पुस्तकें, नीत्वा=लेकर, प्रचलिताः=चले गए। यावत्=जब, किञ्चित्=कुछ, मार्गम्=मार्ग को, यान्ति=जाते हैं, तावत्=तब, द्वौ=दो, पन्थानौ=मार्गों, समायातौ=आते हुए दृष्ट्वा=देखकर, उपविष्टाः बैठ गए।

अनुवाद—तत्पश्चात् (किसी) दूसरे दिन वे ब्राह्मण परस्पर निश्चय करके विद्याध्ययन के लिए कान्यकुब्ज देश गए और वहाँ विद्यालय में जाकर पढ़ते हैं। इस प्रकार बारह वर्षों तक एकाग्र मन से पढ़कर, वे सभी विद्या में प्रवीण हो गए। तब उन चारों ने मिलकर कहा—(अब) हम सभी विद्याओं में कुशल हैं। तो गुरु से पूछकर अपने देश चलते हैं। 'ऐसा ही किया जाय' इस प्रकार कहकर ब्राह्मण गुरु से पूछकर, आज्ञा पाकर, पुस्तकें लेकर चले गए। जब कुछ दूर जाते हैं तो दो मार्ग देखकर बैठ गए। (किस मार्ग से जाना चाहिए यह निर्णय करने के लिए बैठ गए)

तत्रैकः प्रोवाच—केन मार्गेण गच्छामः? एतस्मिन्समये तस्मिन् पत्तने कश्चिद् वणिकपुत्रो मृतः। तस्य दाहाय महाजनो गतोऽभूत्। ततश्चतुर्णां मध्यादेकेन पुस्तकमवलोकितं—महाजनो येन गतः स पन्थाः इति। तन्महाजनमार्गेण गच्छामः। अथ ते पण्डिता यावन्महाजनमेलापकेन सह यान्ति, तावद्रासभः कश्चित्तत्र श्मशाने दृष्टः।
अथ द्वितीयेन पुस्तकमुद्घाट्यावलोकितम्।

शब्दार्थ—तत्र=वहाँ, एकः=एक, प्रोवाच=बोला, केन=किस, मार्गेण=मार्ग से, गच्छामः=चला जाए, एतस्मिन्=उस, समये=समय, तस्मिन्=उस, पत्तने=नगर में, कश्चित्=कोई, वणिक्पुत्रः=बनिये का पुत्र, मृतः=मर गया, तस्य=उसके, दाहाय=दाह संस्कार के लिए, महाजनः=बहुत लोग, गतः=गए हुए, अभूत्=थे। ततः=तब, चतुर्णाम्=चारों के, मध्यात्=बीच में से, एकेन=एक ने, पुस्तकम्=पुस्तक को, अवलोकितम्=देखा, महाजनः=महान् व्यक्ति, येन=जिस (मार्ग) से, गतः=जाएँ, स=वही, पन्थाः=मार्ग, तत्=तो, महाजनमार्गेण=बहुत व्यक्तियों के मार्ग से, गच्छामः=चलते हैं, अथ=तत्पश्चात्, ते=वे, पण्डिताः=पण्डित, यावन्=जब, महाजनमेलापकेन=व्यक्ति-समूह के, सह=साथ, यान्ति=जाते हैं, तावत्=तभी, रासभः=गधा, कश्चित्=कोई, तत्र=वहाँ, श्मशान=श्मशान में, दृष्टः=दिखाई दिया। अथ=तत्पश्चात्, द्वितीयेन=दूसरे ने, पुस्तकम्=पुस्तक को, उद्घाट्य=खोलकर, अवलोकितम्=देखा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अनुवाद—वहाँ (उनमें से) एक ने कहा—किस मार्ग से चला जाए ? इसी समय उस नगर में कोई बनिये का पुत्र मर गया। उसके दाह संस्कार के लिए बहुत लोग गए हुए थे। तब चारों ओर में से एक ने पुस्तक देखकर (कहा)—महान् व्यक्ति जिस मार्ग से जाएँ वही मार्ग (उचित होता) है, तो हम व्यक्ति समूह के मार्ग से चलें। तत्पश्चात् वे पण्डित जब व्यक्ति समह के साथ चले तब वहाँ श्मशान में कोई गधा दिखाई दिया। तदनन्तर दूसरे ने पुस्तक खोलकर देखते हुए कहा—

उत्सवे व्यसने प्राप्ते दुर्भिक्षे शत्रुसङ्कटे।
राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः ॥३६॥

अन्वय—उत्सवे, व्यसने, दुर्भिक्षे, शत्रुसङ्कटे, राजद्वारे, श्मशाने, च, प्राप्ते, यः, तिष्ठति, सः, बान्धवः।

शब्दार्थ—उत्सवे=उत्सव के समय में, व्यसने=दुःख में, दुर्भिक्षे=अकाल पड़ने पर, शत्रुसङ्कटे=शत्रुओं से घिर जाने पर, राजद्वारे=राजसभा में, श्मशाने=श्मशान में, च=और, प्राप्ते=पहुँचने पर, यः=जो, तिष्ठति=रहता है, सः=वह, बान्धवः बन्धु है।

अनुवाद—उत्सव के समय, दुःख आने पर, अकाल पड़ने पर, शत्रु से घिरे होने पर, राजसभा और श्मशान में जो रहता है वही बन्धु है।

तदहो ! अयमस्मदीयो बान्धवः। ततः कश्चित्तस्य ग्रीवायां लगति, कश्चित् पादौ प्रक्षालयति। तावत्तृतीयेन पुस्तकमुद्घाट्योक्तम्—धर्मस्य त्वरिता गतिः। तन्नूनमेष धर्मस्तावत्। चतुर्थेनोक्तम्—इष्टं धर्मेण योजयेत्। अथ तैश्च रासभ उष्ट्रग्रीवायां बद्धः। तत्तु केनचित्तत्स्वामिनो रजकस्याग्रे कथितम्। यावद्रजकस्तेषां मूर्खपण्डितानां प्रहारकरणाय समायातस्तावत्ते प्रनष्टाः। ततो यावदग्रे किञ्चित्स्तोकं मार्गं यान्ति तावत्काचिन्नदी समासादिता। तस्य जलमध्ये पलाशपत्रमायातं दृष्ट्वा पण्डितेनैकेनोक्तम्—आगमिष्यति यत्पत्रं तदस्मांस्तारयिष्यति। एतत्कथयित्वा तत्पत्रस्योपरि पतितो यावन्नद्या नीयते तावत्तं नीयमानमवलोक्याऽन्येन पण्डितेन केशान्तं गृहीत्वोक्तम्—

शब्दार्थ—तत्=तो, अयम्=यह, (गधा), अस्मदीयः=हमारा, बान्धवः=बन्धु, ततः=तब, कश्चित्=कोई, तस्य=उसकी, ग्रीवायाम्=गले से, लगति=लगता है, पादौ=पैर, प्रक्षालयति=धोने लगता है,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तावत्=तभी, तृतीयेन=तीसरे ने, पुस्तकम्=पुस्तक को, उद्घाट्य=खोलकर, उक्तम्=कहा, धर्मस्य=धर्म की, त्वरिता=तीव्र, गतिः=गति, तत्=तो। नूनम्=निश्चय ही, एषः=यह, धर्मः=धर्म, तावत्=तब, चतुर्थेन=चौथे ने, उक्तम्=कहा, इष्टम्=इच्छित (मित्र) को, धर्मेण=धर्म के साथ, योजयेत्=जोड़ना चाहिए, अथ=तत्पश्चात्, तैः=उन्होंने, रासभः=गधे को उष्ट्रग्रीवायाम्=ऊँट के गले में बद्धः=बांध दिया, तत्=वह (समाचार), तु=तो, केनचित्=किसी ने, स्वामिनः=स्वामी, राजकस्य=धोबी के, अग्रे=आगे, कथितम्=कहा, यावत्=जब, रजकः=धोबी, तेषाम्=उन, मूर्खपण्डितानाम्=मूर्ख पण्डितों को, प्रहारप्रकरणाय=पीटने के लिए, समायातः=आया, तावत्=तब, ते=वे, प्रनष्टाः=भाग गये, ततः=तत्पश्चात्, यावत्=जब, अग्रे=आगे, किञ्चित्=कुछ, स्तोकम्=कम, मार्गम्=मार्ग तक, यान्ति=जाते हैं, तावत्=तब, काचित्=कोई, नदी, समासादिता=मिल गई। तस्य=उस (नदी) के, जलमध्ये=जल में, पलाशपत्रम्=पलाश का पत्ता, आयातम्=आता हुआ, दृष्ट्वा=देखकर, एकेन=एक, पण्डितेन=पण्डित ने, उक्तम्=कहा, आगमिष्यति=आयेगा, यत्=जो, पत्रम्=पत्ता, तत्=तो अस्मान्=हमे, तारयिष्यति=पार उतार देगा, एतत्=यह, कथयित्वा=कहकर, तत्=उस, पत्रस्य=पत्ते के, उपरि=ऊपर, पतितः=गिर गया, यावत्=जब, नद्या=नदी (की धारा) द्वारा, नीयते=ले जाया गया, तावत्=तब, तम्=उसे, नीयमानम्=ले जाते हुए को, अवलोक्य=देखकर, अन्येन=दूसरे, पण्डितेन=पण्डित ने, केशान्तम्=बालों को, गृहीत्वा=पकड़कर, उक्तम्=कहा।

अनुवाद—तो यह हमारा बन्धु है। तब कोई उसके गले से लगता है, (कोई) पैर धोता है। तब तीसरे ने पुस्तक खोलकर कहा— धर्म की गति तीव्र होती है। तो निश्चय ही यह धर्म है। चौथे ने कहा—इच्छित (व्यक्ति) को धर्म के साथ जोड़ना चाहिए। तब उन्होंने गधे को ऊँट के गले में बांध दिया। यह (समाचार) तो किसी ने धोबी के आगे कहा। जब धोबी उन मूर्ख पंडितों को पीटने के लिए आया तब वे भाग गये। तत्पश्चात् जब आगे कुछ दूर जाते हैं तो कोई नदी आ जाती है। उस (नदी के जल में पलाश के पत्ते को आता हुआ देखकर एक पण्डित ने कहा—जो पत्ता आयेगा, वह हमें पार उतार देगा, यह कहकर उस पत्ते के ऊपर गिर गया, जब नदी (की धारा) द्वारा ले जाया गया तब उसे ले जाते हुए को देखकर दूसरे पण्डित ने बालों से पकड़कर कहा—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः ।
अर्धेन कुरुते कार्यं सर्वनाशो हि दुःसहः ॥४०॥

अन्वय—सर्वनाशे, समुत्पन्ने, पण्डितः, अर्धम्, त्यजति, अर्धेन, कार्यम्, कुरुते, हि, सर्वनाशः, दुःसहः ।

शब्दार्थ—सर्वनाशे=सबके नाश की स्थिति, समुत्पन्ने=उत्पन्न होने पर, पण्डितः=कुशल व्यक्ति, अर्धम्=आधा, त्यजति=छोड़ देता है, अर्धेन=आधे भाग से, कार्यम्=कार्य, कुरुते=करता है, हि=क्योंकि, सर्वनाशः=सम्पूर्ण रूप से नाश, दुःसहः=असह्य (सहने योग्य नहीं) होता है ।

अनुवाद—सर्वनाश की स्थिति उत्पन्न होने पर चतुर व्यक्ति (नष्ट होने वाली वस्तु का) आधा (भाग) छोड़ देते हैं । आधे (भाग) से ही (अपना) कार्य करते हैं, क्योंकि सम्पूर्ण नाश असह्य होता है ।

इत्युक्त्वा तस्य शिरश्छेदो विहितः ।

अनुवाद—ऐसा कहकर उसका सिर काट दिया ।

अथ तैश्च पश्चाद् गत्वा कश्चिद् ग्राम आसादितः । तेऽपि ग्रामीणैर्निमन्त्रिताः पृथग् गृहेषु नीताः । ततः, एकस्य सूत्रिका घृतखण्डसंयुता भोजने दत्ता । ततो विचिन्त्य पण्डितेनोक्तं यत् दीर्घसूत्री विनश्यति । एवमुक्त्वा भोजनं परित्यज्य गतः । तथा द्वितीयस्य मण्डका दत्ताः, तेनाऽप्युक्तम्—अतिविस्तारविस्तीर्णं तद्भवेन्न चिरायुषम् । स च भोजनं त्यक्त्वा गतः । अथ तृतीयस्य बटिका भोजने दत्ता । तत्राऽपि तेन पण्डितेनोक्तम्—छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति । एवं ते त्रयः पण्डिताः क्षुत्क्षामकण्ठाः लोकैर्हास्यमानास्ततः स्थानात् स्वदेशं गताः ।

शब्दार्थ—अथ=तत्पश्चात्, तै.=उन्हें, पश्चात्=आगे, गत्वा=जाकर, कश्चित्=कोई, ग्राम=गाँव, आसादितः=मिला, ते=वे, अपि=भी, ग्रामीणैः=ग्राम वासियों द्वारा, निमन्त्रिताः=आमन्त्रित हुए, पृथक्=अलग-अलग, गृहेषु=घरों में, नीताः=ले जाए गए, ततः=तब, एकस्य=एक को, सूत्रिका=सेवई । घृतखण्डसंयुता=घी, चीनी से युक्त, भोजने=भोजन में, दत्ता=दी गई, ततः=तब, विचिन्त्य=सोचकर, पण्डितेन=पण्डित ने, उक्तम्=कहा, यत्=कि, दीर्घसूत्री=आलसी, विनश्यति=नष्ट हो जाता है, एवम्=इस प्रकार, उक्त्वा=कहकर (विचार कर), भोजनम्=भोजन को परित्यज्य=छोड़कर, गतः=चला गया । द्वितीयस्य=दूसरे

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(व्यक्ति) को मण्डका (रोटी), दत्ता=दी गई, तेन=उसने, उक्तम्=कहा, अतिविस्तारविस्तीर्णम्=अधिक विस्तृत वस्तु, तत्=वह, भवेत्=होती है, न=नहीं, चिरायुषम्=चिरस्थायी, सः=वह, च=और, भोजनम्=भोजन को, त्यक्त्वा=छोड़कर, गतः=चला गया, अथ=तदनन्तर, तृतीयस्य=तीसरे (व्यक्ति) को, वटिका=बड़ा, भोजने=भोजन में, दत्ता=दिया गया, तत्र=वहाँ, अपि=भी, तेन=उस, पण्डितेन=पण्डित ने, उक्तम्=कहा, छिद्रेषु=दोष होने पर, अनर्थाः=आपत्तियाँ, बहुलीभवन्ति=अधिक हो जाती हैं, एवम्=इस प्रकार, ते=वे, त्रयः=तीनों, पण्डिताः=पण्डित, क्षुत्क्षामकण्ठाः=भूखे रहकर, लोकैः=लोगों के द्वारा, हास्यमानाः=उपहास के विषय बनते हुए, ततः=उस, स्थानात्=स्थान से, स्वदेशम्=अपने देश को, गताः=चले गये।

अनुवाद—तत्पश्चात् उन्हें (शेष तीनों को) आगे जाकर कोई गाँव मिला। वे भी ग्रामवासियों द्वारा निमन्त्रित किये जाने पर अलग-अलग घरों में ले जाए गए। तब, एक (व्यक्ति) को भोजन में घी, चीनी से युक्त सेवई दी गईं। तब सोचकर पण्डित ने कहा कि—आलसी नष्ट हो जाता है, कहकर भोजन छोड़कर चला गया तथा दूसरे को रोटी दी गई, उसने भी कहा—अधिक विस्तार की वस्तु चिरस्थायी नहीं रहती और वह भी भोजन छोड़कर चला गया। तत्पश्चात् तीसरे (व्यक्ति) को भोजन में बड़ा दिया गया। वहाँ भी उस पण्डित ने कहा—दोष होने पर आपत्तियाँ अधिक हो जाती हैं। इस प्रकार वे तीनों ही पण्डित भूखे, (और) लोगों द्वारा उपहास का पात्र बनते हुए उस स्थान से अपने देश को चले गए।

अथ सुवर्णसिद्धिराह—यत्त्वं लोकव्यवहारमजानन्मया वार्यमाणोऽपि न स्थितः तत ईदृशीमवस्थामुपगतः। अतोऽहं ब्रवीमि—अपि शास्त्रेषु कुशलाः इति। तत् श्रुत्वा चक्रधर आह—अहो, अकारणमेतत् यतो हि—

शब्दार्थ—अथ=तदनन्तर, सुवर्णसिद्धिः=सुवर्ण सिद्धि ने, आह=कहा, यत्=कि, त्वम्=तुम, लोकव्यवहारम्=लोकव्यवहार को, अजानन्=बिना जाने हुए, वार्यमाणः=मना करने पर, अपि=भी, न=नहीं, स्थितः=ठहरे, ततः=इसलिए, ईदृशीम्=ऐसी, अवस्थाम्=दशा को, उपगतः=प्राप्त हुए हो, अतः=इसलिए, अहम्=मैं, ब्रवीमि=कहता हूं, अपि=भी, शास्त्रेषु=शास्त्रों में, कुशलाः=निपुण, तत्=यह, श्रुत्वा=सुनकर, चक्रधरः=चक्रधर ने, आह=कहा, अकारणम्=बिना कारण, एतत्=यह, यतः=क्योंकि।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अनुवाद—तदनन्तर सुवर्णसिद्धि ने कहा कि तुम लोक व्यवहार में अकुशल होने के कारण मेरे मना करने पर भी नहीं ठहरे। इसलिए तुम्हारी ऐसी दशा हो गई है। अतः मैं कहता हूँ—शास्त्रों में निपुण होने पर भी (लोक व्यवहार से अनभिज्ञ व्यक्ति उपहास का पात्र बनता है)। उसको सुनकर चक्रधर ने कहा—अरे, यह (कहना) निरर्थक है क्योंकि—

सुबुद्धयो विनश्यन्ति दुष्टदैवेन नाशिताः।
स्वल्पधीरपि तस्मिंस्तु कुले नन्दति सन्ततम् ॥४१॥

अन्वय—दुष्टदैवेन, नाशितः, सुबुद्धयः, विनश्यन्ति, स्वल्पधीः, अपि, तस्मिन्, कुले, सन्ततम्, नन्दति।

शब्दार्थ—दुष्टदैवेन=प्रतिकूल भाग्य द्वारा, नाशितः=नष्ट किये गए, सुबुद्धयः=बुद्धिमान् व्यक्ति भी, विनश्यन्तिः=नष्ट हो जाते हैं, स्वल्पधीः=अल्प बुद्धिमान्, अपि=भी, तस्मिन्=उसी, कुले=कुल में, सन्ततम्=लगातार, नन्दति=आनन्द पाता है।

अनुवाद—भाग्य की प्रतिकूलता से बुद्धिमान् व्यक्ति भी नष्ट हो जाते हैं, (अनुकूलता भाग्य के कारण) मूर्ख व्यक्ति भी उसी कुल में निरन्तर आनन्द पाता है।

उक्तम् च
और कहा गया है—

अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति।
जीवत्यनाथोऽपि वने विसर्जितः कृतप्रयत्नोऽपि गृहे न जीवति ॥४२॥

अन्वय—दैवरक्षितम्, अरक्षितम्, तिष्ठति, दैवहतम्, सुरक्षितम्, विनश्यति, वने, विसर्जितः, अनाथः, अपि, जीवति, कृतप्रयत्नः, अपि, गृहे, न, जीवति।

शब्दार्थ—दैवरक्षितम्=भाग्य द्वारा रक्षित, अरक्षितम्=बिना रक्षा के, तिष्ठति=रहता है, दैवहतम्=भाग्य द्वारा नष्ट किया हुआ, सुरक्षितम्=अच्छी प्रकार रक्षित हुआ, विनश्यति=नष्ट हो जाता है, वने=वन में, विसर्जितः=छोड़ा हुए, अनाथः=अनाथ, अपि=भी, जीवति=जीता है, कृतप्रयत्नः=प्रयत्न करने पर, अपि=भी, गृहे=घर में, न=नहीं, जीवति=जीता है।

अनुवाद—भाग्य द्वारा रक्षित (व्यक्ति) बिना रक्षा के भी (बची) रहती है, भाग्य द्वारा नष्ट किया हुआ व्यक्ति अच्छी प्रकार रक्षित हुआ भी नष्ट हो

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

जाता है, वन में छोड़ा हुआ अनाथ भी जीवित रहता है, प्रयत्न करने पर भी घर में (रक्षित व्यक्ति) जीवित नहीं रहता है।

तथ च—

और भी—

शतबुद्धिः शिरस्थोऽयं लम्बते च सहस्रधीः ।
एकबुद्धिरहं भद्रे ! क्रीडामि विमले जले ॥४३॥

अन्वय—भद्रे, अयम्, शतबुद्धिः, शिरस्थः, सहस्रधीः, च, लम्बते, अहम्, एकबुद्धिः, विमले, जले, क्रीडामि।

शब्दार्थ—भद्रे=मित्र, अयम्=यह, शतबुद्धिः=शतबुद्धि नामक (मत्स्य) शिरस्थः=सिर पर रखा हुआ, सहस्रधीः=सहस्रबुद्धि नामक (मत्स्य) च=और, लम्बते=लटक रहा है, अहम्=मैं, एकबुद्धिः=एक बुद्धि वाला, विमले=निर्मल, जले=जल में, क्रीडामि=खेलता हूँ।

अनुवाद—हे मित्र! शतबुद्धि नामक (मत्स्य) (धीवर के) सिर पर रखा हुआ है और सहस्रबुद्धि (उसके कन्धे से) लटक रहा है। एक बुद्धि वाला मैं (इस) निर्मल जल में खेलता हूँ (विहार करता हूँ)।

सुवर्णसिद्धिराह—कथमेतत् ? स आह—

अनुवाद—सुवर्णसिद्धि ने कहा—यह कैसे ? उसने कहा—

६. मत्स्यमण्डूककथा

कस्मिंश्चिज्जलाशये शतबुद्धिः सहस्रबुद्धिश्च द्वौ मत्स्यौ निवसतः स्म। अथ तयोरेकबुद्धिर्नाम मण्डूको मित्रतां गतः। एवं ते त्रयोऽपि जलतीरे वेलायां कञ्चित्कालं सुभाषितगोष्ठीसुखमनुभूय भूयोऽपि सलिलं प्रविशन्ति।

शब्दार्थ—कस्मिंश्चित्=किसी, जलाशये=तालाब में, शतबुद्धिः, सहस्रबुद्धिः च=शतबुद्धि और सहस्रबुद्धि नामक, द्वौ=दो, मत्स्यौ=मछलियाँ, निवसतः स्म=रहती थीं, अथ=तदनन्तर, तयोः=उनकी, एकबुद्धिः=एक बुद्धि, नाम=नामक, मण्डूकः=मेढ़क से, मित्रताम्=मित्रता, गतः=हो गई, एवम्=इस प्रकार, ते=वे, त्रयः=तीनों, अपि=भी, जलतीरे=तालाब के किनारे, वेलायाम्=सायंकाल कञ्चित्=कुछ, कालम्=समय, सुभाषित-गोष्ठीसुखम्=सूक्तियों का सुख, अनुभूय=अनुभव करके, भूयः=पुनः, अपि=भी, सलिलम्=जल में, प्रविशन्ति=प्रवेश करते थे।

अनुवाद—किसी तालाब में शतबुद्धि और सहस्रबुद्धि नामक दो मछलियाँ रहती थीं। तब उनसे एक बुद्धि नामक मेंढक की मित्रता हो गई। इस प्रकार

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वे तीनो सायंकाल तालाब के किनारे कुछ समय (तक) सूक्तियों का आनन्द अनुभव करके पुनः जल में प्रवेश कर लेते थे ।

अथ कदाचित्तेषां गोष्ठीगतानां जालहस्तधीवराः प्रभूतैर्मत्स्यैर्व्यापादितै-र्मस्तके विधृतैरस्तमनवेलायां तस्मिञ्जलाशये समायाताः । ततः सलिलाशयं दृष्ट्वा मिथः प्रोचुः—अहो ! बहुमत्स्योऽयं ह्रदो दृश्यते स्वल्पसलिलश्च । तत्प्रभातेऽत्रागमिष्यामः । एवमुक्त्वा स्वगृहं गताः ।

शब्दार्थ—अथ=तत्पश्चात्, कदाचित्=कभी, तेषाम्=उनकी, गोष्ठी-गतानाम्=गोष्ठी के समय में, जालहस्ताः=हाथ में जाल लिये हुए, धीवराः=केवट, प्रभूतैः=बहुत सी, मत्स्यैः=मछलियों को, व्यापादितैः=मारी हुई, मस्तके=सिर पर, विधृतैः=रखी हुई, अस्तमनवेलायाम्=सूर्यास्त के समय, तस्मिन्=उस, जलाशये=तालाब में, समायाताः=आए, ततः=तब, सलिलाशयम्=तालाब को, दृष्ट्वा=देखकर, मिथः=परस्पर, प्रोचुः=बोले, बहुमत्स्यः=बहुत मछलियों वाला, अयम्=यह, ह्रदः=तालाव, दृश्यन्ते=दिखाई देता है, स्वल्पसलिलः=कम जल वाला, तत्=तो, प्रभाते=प्रातः काल में, अत्र=यहाँ, आगमिष्यामः=आयेंगे, एवम्=इस प्रकार, उक्त्वा=कहकर, स्वगृहम्=अपने घर, गताः=चले गए ।

अनुवाद—तत्पश्चात् कभी सायंकाल के समय उनके गोष्ठी में जाने पर, बहुत मछलियों को मारकर, सिर पर रखे हुए, हाथ में जाल लिये हुए केवट उस तालाब में आए । तब तालाव को देखकर वहुत मछलियों वाला और कम जल वाला दिखाई देता है । ऐसा कहकर अपने घर चले गए ।

मत्स्याश्च विषण्णवदना मिथो मन्त्रं चक्रुः । ततो मण्डूक आह—भोः शतबुद्धे ! श्रुतं धीवरोक्तं भवता ? तत्किमत्र युज्यते कर्तुम्, पलायनमवष्टम्भो वा ? यत्कर्तुं युक्तं भवति तदादिश्यतामद्य । तत्श्रुत्वा सहस्रबुद्धिः प्रहस्य आह—भो ! मित्र मा भैषीः तयोः वचनश्रवणमात्रादेव भयं कार्यम् ? न भेतव्यम् ।

शब्दार्थ—मत्स्याः=मछलियों ने । विषण्णवदनाः=खिन्न होकर, मिथः=परस्पर, मन्त्रम्=विचार, चक्रुः=किया, ततः=तव, मण्डूक=मेंढक ने, आह=कहा, भोः शतबुद्धेः=हे शतबुद्धि, श्रुतम्=सुना, धीवर+उक्तम्=केवट द्वारा कहे हुए को, भवता=आप के द्वारा, तत्=तो, किम्=क्या, अत्र=यहाँ, युज्यते=करना चाहिए, कर्तुम्=करने के लिए, पलायनम्=भाग जाना, अवष्टम्भः=ठहरना, वा=अथवा, यत्=जो, कर्तुम्=करने के लिए, युक्तम्=उचित, भवति=होता है, तत्=वह, आदिश्यताम्=आदेश

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दें, अद्य=आज, तत्=वह, श्रुत्वा=सुनकर, सहस्रबुद्धिः=सहस्रबुद्धि ने, प्रहस्य=हँसकर, आह=कहा, मा=नहीं, भैषीः=डरो, तयोः=उनके; वचनश्रवणमात्रात्=केवल वचनों के सुनने से, एव=ही, भयम्=भय, कार्यम् =करना चाहिए, न=नहीं, भेतव्यम्=डरना चाहिए।

अनुवाद—(केवटों के चले जाने पर) खिन्न होकर मछलियों ने परस्पर विचार किया। तब मेंढक ने कहा—हे शतबुद्धि! आपने केवट के द्वारा कही गई (बात) को सुना? तो यहाँ क्या करना उचित है—भाग जाना या ठहरना? आज जैसा करना उचित है वही आदेश दें। यह सुनकर सहस्र-बुद्धि ने हँसकर कहा—मित्र, मत डरो, क्या उनके वचनों को सुनने मात्र से ही भय करना चाहिए? नहीं डरना चाहिए।

उक्तं च—

और कहा गया है—

सर्पाणां च खलानां च सर्वेषां दुष्टचेतसाम्।
अभिप्राया न सिध्यन्ति तेनेदं वर्तते जगत् ॥४४॥

अन्वय—सर्पाणाम्, खलानाम्, च, सर्वेषाम्, दुष्टचेतसाम्, च, अभिप्रायाः, न, सिध्यन्ति, तेन, इदम्, जगत्, वर्तते।

शब्दार्थ—सर्पाणाम्=सर्पों के, खलानाम्=नीच व्यक्तियों के, सर्वेषाम् सभी, दुष्टचेतसाम्=दुष्ट प्राणियों के, अभिप्रायाः=मनोरथ, न=नहीं, सिध्यन्ति=सिद्ध होते हैं, तेन=उनके द्वारा (उनकी विफलता के कारण ही), इदम्=यह, जगत्=विश्व, वर्तते=विद्यमान है।

अनुवाद—सर्पों, नीच व्यक्तियों और दुष्ट प्राणियों के मनोरथ सिद्ध नहीं होते हैं। उनकी (इस विफलता) के कारण ही यह विश्व विद्यमान है।

तत्तावत्तेषामागमनमपि न सम्पत्स्यते। भविष्यति वा तर्हि त्वां बुद्धिप्रभावेणात्मसहितं रक्षयिष्यामि। यतोऽनेकां सलिलचर्यामहं जानामि। तदाकर्ण्य शतबुद्धिराह—भोः युक्तमुक्तं भवता। सहस्रबुद्धिरेव भवान्।

शब्दार्थ—तत्=तो, तावत्=तब, तेषाम्=उनका (केवटों का) आगमनम्=आना, अपि=भी, न=नहीं, संपत्स्यते=होगा, भविष्यति=होगा, वा=अथवा, तर्हि=तब, त्वाम्=तुम्हारी, बुद्धिप्रभावेण=बुद्धि के प्रभाव से, आत्मसहितम्=अपने साथ ही, रक्षयिष्यामि=रक्षा करूँगा, यतः=क्योंकि, अनेकाम्=अनेक, सलिलचर्याम्=जल में चलने की कला को, अहम्=मैं, जानामि=जानता हूँ, तत्=वह, आकर्ण्य=सुनकर, शतबुद्धि=शतबुद्धि ने,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आह=कहा, युक्तम्=उचित, उक्तम्=कहा, भवता=आपने, सहस्रबुद्धिः= सहस्रबुद्धि, एव=ही, भवान्=आप ।

अनुवाद—तब तो उनका आना भी नहीं होगा, यदि होगा तो (मैं) अपने साथ ही अपनी बुद्धि के प्रभाव से तुम्हारी रक्षा करूंगा, क्योंकि मैं जल में चलने की अनेक कलाओं को जानता हूँ। वह सुनकर शतबुद्धि ने कहा—आपने उचित कहा। आप सहस्रबुद्धि ही हो।

अथवा साध्विदमुच्यते—

अथवा यह उचित ही कहा गया है—

बुद्धेर्बुद्धिमतां लोके नाऽस्त्यगम्यं हि किञ्चन ।
बुद्धया यतो हता नन्दाश्चाणक्येनासिपाणयः ॥४५॥

अन्वय—लोके, बुद्धिमताम्, बुद्धेः, किञ्चन, अगम्यम्, न, यतः, चाणक्येन, बुद्धया, असिपाणयः, नन्दाः हताः ।

शब्दार्थः—लोके=संसार में, बुद्धिमताम्=बुद्धिमानों की, बुद्धेः=बुद्धे के (लिए); किञ्चन=कोई भी, अगम्यम्=अगम्य, न=नहीं, यतः=क्योंकि, चाणक्येन=चाणक्य ने, बुद्धया=बुद्धि के द्वारा, असिपाणयः=खड्गधारी, नन्दाः=नन्दवंश का, हताः=हनन किया था।

अनुवाद—संसार में बुद्धिमानों की बुद्धि के लिए कोई भी (स्थान) अगम्य नहीं है क्योंकि चाणक्य ने बुद्धि के द्वारा (ही) खड्गधारी नन्दवंश का नाश किया था।

तथा च—

और भी—

न यत्राऽस्ति गतिर्वायो रश्मीनां च विवस्वतः ।
तत्राऽपि प्रविशत्याशु बुद्धिर्बुद्धिमतां सदा ॥४६॥

अन्वय—यत्र, वायोः, विवस्वतः, रश्मीनाम्, सदा, गतिः, न, अस्ति तत्र, अपि, बुद्धिमताम्, बुद्धिः, आशु, प्रविशति ।

शब्दार्थः—यत्र=जहां, वायोः=वायु का, विवस्वतः=सूर्य की रश्मीनाम्=किरणों का सदा=सदा, गतिः=प्रवेश, न=नहीं, अस्ति=है, तत्र=वहां, अपि=भी, बुद्धिमताम्=बुद्धिमानों की बुद्धिः=मति, आशु= शीघ्र, प्रविशति=प्रवेश कर जाती है।

अनुवाद—जहां वायु और सूर्य की किरणों का भी सदा प्रवेश नहीं होता है, वहां बुद्धिमानों की बुद्धि शीघ्र पहुँच जाती है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अनुवाद—इसलिए (केवटों के) वचनों के श्रवण मात्र से ही पूर्वपुरुषों द्वारा प्राप्त जन्मस्थान को छोड़ना संभव नहीं है।

उक्तं च—

और कहा गया है—

न तत्स्वर्गेऽपि सौख्यं स्याद्दिव्यस्पर्शेन शोभने।
कुस्थानेऽपि भवेत्पुंसां जन्मनो यत्र सम्भवः ॥४७॥

अन्वय—शोभने, स्वर्गे, अपि, दिव्यस्पर्शेन, तत्, सौख्यम्, न, पुंसाम्; यत्र, जन्मनः, सम्भवः, कुस्थाने, अपि, भवेत्।

शब्दार्थ—शोभने=सुन्दर, स्वर्गे=स्वर्ग में, अपि=भी, दिव्यस्पर्शेन-दिव्य विभूतियों के स्पर्श से, तत्=वह, सौख्यम्=सुख, न=नहीं, पुंसाम्=मनुष्यों का, यत्र=जहां, जन्मनः=जन्म, सम्भवः=होता है, कुस्थाने=कष्टप्रद स्थान में, अपि=भी, भवेत्=होता है।

अनुवाद—सुन्दर स्वर्ग में दिव्यविभूतियों के स्पर्श से भी वह सुख नहीं मिलता है। मनुष्यों का जन्म कष्टप्रद स्थान में भी हो जाता है।

व्याख्या—रमणीय स्वर्ग में दिव्याङ्गनाओं के स्पर्श से भी मनुष्य उस प्रकार के सुख का अनुभव नहीं कर सकता जो सुख उसे अपनी मातृभूमि में कष्टदायक स्थान में रहकर भी प्राप्त हो जाता है।

तन्न कदाचिदपि गन्तव्यम्। अहं त्वां बुद्धिप्रभावेण रक्षयिष्यामि। मण्डूक आह—भद्रौ! मम तावदेकैव बुद्धिः पलायनपरा तदहमन्यं जलाशयमद्यैव सभार्यो यास्यामि। एवमुक्त्वा स मण्डूको रात्रावेवाऽन्यजलाशयं गतः। धीवरैरपि प्रभाते आगत्य, जघन्यमध्यमोत्तमजलचराः मत्स्यकूर्ममण्डूककर्कटादयो गृहीताः। तावपि शतबुद्धि-सहस्रबुद्धी सभार्यौ पलायमानौ चिरमात्मानं गतिविशेषविज्ञानैः कुटिलचारेण रक्षन्तौ जाले निपतितौ व्यापादितौ च।

शब्दार्थ—तत्=तब, न=नहीं, कदाचित्=कभी, अपि=भी, गन्तव्यम्=जाना चाहिए, अहम्=मैं, त्वाम्=तुम्हारी बुद्धिप्रभावेण=बुद्धि के प्रभाव से रक्षयिष्यामि=रक्षा करूंगा, मण्डूकः=मेंढक ने, आह=कहा, भद्रौ=मित्रो, मम=मेरी तावत्=तो, एक एव=एक ही, बुद्धिः=बुद्धि; पलायनपरा=भागने वाली, तत्=तो अहम्=मैं, अन्यम्=दूसरे, जलाशयं=तालाब को सभार्यः=पत्नी सहित, यास्यामि=चला जाऊंगा। एवम्=इस प्रकार, उक्त्वा=कहकर, सः=वह, मण्डूकः=मेंढक, रात्रौ=रात्रि में, एव=

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ही, अन्यजलाशयम्=दूसरे तालाब में, गतः=चला गया, धीवरैः=केवटों ने, अपि=भी, प्रभाते=प्रातःकाल, आगत्य=आकर, जघन्यमध्यमोत्तमजलचराः=छोटे, मध्यम तथा बड़े जलचरों को, मत्स्यकूर्ममण्डूककर्कटादयः=मछली, कछुओं, मेढकों तथा केकड़ों आदि को, गृहीताः=पकड़ लिया, तौ=वे दोनों, अपि=भी, शतबुद्धिसहस्रबुद्धी=शतबुद्धि और सहस्रबुद्धि, सभार्यौ=अपनी पत्नियों के साथ, पलायमानौ=भागते हुए, चिरम्=देर तक, आत्मानम्=अपने आप को, गतिविशेषविज्ञानैः=(जल सम्बन्धी) विशेष प्रकार की कलाओं द्वारा, कुटिलचारेण=वक्रगति से, रक्षन्तौ=बचाते हुए, जाले=जाल में, निपतितौ=फंस गए, व्यापादितौ=मार ड़ाले गए, च=और।

अनुवाद—अतः (मातृभूमि को त्यागकर) कभी भी नहीं जाना चाहिए। मैं (अपनी) बुद्धि के प्रभाव से तुम्हारी रक्षा करूंगा। मेंढक ने कहा—मित्रो! मेरी तो एक भागने वाली बुद्धि है, तो मैं आज ही पत्नी सहित दूसरे तालाब में चला जाऊंगा। इस प्रकार कहकर वह मेंढक रात्रि में दूसरे जलाशय में चला गया।

प्रातःकाल केवटों ने आकर, छोटे, मध्यम, तथा बड़े मछली, कछुओं; मेंढकों तथा केकड़ों आदि को पकड़ लिया। शतबुद्धि और सहस्रबुद्धि उन दोनों ने भी अपनी स्त्रियों के साथ भागते हुए (अपनी जल सम्बन्धी) विशेष प्रकार की कलाओं द्वारा एवं वक्रगति द्वारा अपने को बहुत देर तक बचाया अन्त, में जाल में वे फंस गए और मार डाले गए।

अथाऽपराह्णसमये प्रहृष्टास्ते धीवराः स्वगृहं प्रति प्रस्थिताः। गुरुत्वाच्चैकेन शतबुद्धिः स्कन्धे कृतः। सहस्रबुद्धिः प्रलम्बमानो नीयते। ततश्च वापीकण्ठोपगतेन मण्डूकेन तौ तथा नीयमानौ दृष्ट्वा अभिहिता स्वपत्नी, प्रिये! पश्य पश्य—

शब्दार्थ—अथ=पश्चात्, अपराह्णसमये=सूर्यास्त के समय, प्रहृष्टाः=प्रसन्न होकर, ते=वे, धीवराः=केवट, स्वगृहम् प्रति=अपने घर की ओर प्रस्थिताः=चले गए, गुरुत्वात्=भारी होने के कारण, च=और, एकेन=एक ने, शतबुद्धिः=शतबुद्धि को, स्कन्धे=कन्धे पर, कृतः=रख लिया, सहस्रबुद्धिः=सहस्रबुद्धि, प्रलम्बमानः=लटकाया हुआ, नीयते=ले जाया जा रहा था, ततः=तब, वापीकण्ठोपगतेन=वापी (बावली) के तट पर बैठे हुए, मण्डूकेन=मेंढक ने, तौ=उन दोनों को, तथा=उसी प्रकार, नीयमानौ=ले जाते हुओं को, दृष्ट्वा=देखकर, अभिहिता=कहा, स्वपत्नी=अपनी पत्नी से, पश्य=देखो।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अनुवाद—सूर्यास्त के समय वे केवट प्रसन्न होकर अपने घर जाने लगे। भारी होने के कारण एक केवट ने शतबुद्धि को कन्धे पर रख लिया। सहस्रबुद्धि को लटकाते हुए ले जाने लगा। उनको इस प्रकार ले जाते हुए देखकर, वापी के तट पर बैठे हुए मेंढक ने अपनी पत्नी से कहा—प्रिये! देखो देखो।

अन्वय—भद्रे, शतबुद्धिः, शिरस्थः, अयम्, सहस्रधीः, च, लम्बते, अहम् एकबुद्धिः, विमले, जले, क्रीडामि।

शब्दार्थ—शतबुद्धि=शतबुद्धि, शिरस्थः=सिर पर रखा हुआ, अयम्=यह, सहस्रधीः=सहस्रबुद्धि, च=और, लम्बते=लटक रहा है, अहम्=मैं, एकबुद्धिः=एकबुद्धि, विमले=निर्मल, जले=जल में, क्रीडामि=विचरण करता हूँ।

अनुवाद—भद्रे! शतबुद्धि सिर पर रखा हुआ है और यह सहस्रबुद्धि लटक रहा है। मैं एकबुद्धि निर्मल जल में विचरण करता हूँ।

अतश्च वरं बुद्धिर्न सा विद्या यद् भवतोक्तं तत्रेयं मे मतिर्यन्नेकान्तेन बुद्धिरपि प्रमाणम्। सुवर्णसिद्धिः प्राह—यद्यप्येतदस्ति तथाऽपि मित्रवचनं न लङ्घनीयम्। परं किं क्रियते निवारितोऽपि मया न स्थितोऽसि अतिलौल्यात् विद्याहङ्कारात्च।

शब्दार्थ—अतः=इसलिए, वरम्=श्रेष्ठ, बुद्धिः=बुद्धि, न=नहीं, सा=वह, विद्या=विद्या, यत्=जो, भवता=आपके द्वारा, उक्तम्=कहा गया, तत्र=इस (विषय) में, इयम्=यह, मे=मेरा, मतिः=मत यत्=कि, न=नहीं, एकान्तेन=केवल, बुद्धिः=बुद्धि, प्रमाणम्=कारणस्वरूप, एतत्=यह, अस्ति=है, तथा अपि=तो भी, मित्रवचनम्=मित्र की बात का, न=नहीं, लङ्घनीयम्=उलङ्घन करना चाहिए, परम्=किन्तु, किम्=क्या, क्रियते=किया जाए, निवारितः=रोके जाने पर, अतिलौल्यात्=अधिक लोभ, विद्याहङ्कारात्=विद्या के घमण्ड के कारण, च=और।

अनुवाद—इसलिए जो आपने कहा था कि 'बुद्धि श्रेष्ठ है विद्या नहीं' इस (विषय) में मेरा यह मत है कि केवल बुद्धि ही (किसी कार्य की सिद्धि में) कारणभूत नहीं होती। सुवर्णसिद्धि ने कहा—यद्यपि ऐसा है, तो भी मित्र की बात का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। किन्तु क्या किया जाए, लोभ तथा विद्या के घमण्ड के कारण रोके जाने पर भी मैं नहीं रुका।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत-व्याकरण

'व्याक्रियन्ते शब्दा अनेनेति व्याकरणम्'

जिसमें किसी भाषा के शब्दों के शुद्ध रूपों और वाक्यों के प्रयोग के नियमों आदि का निरूपण होता है, उसे व्याकरण शास्त्र कहा जाता है। इससे साधु शब्द का ज्ञान होता है। इसे "शब्दानुशासन" भी कहते हैं। व्याकरण ज्ञान के अभाव में किसी भी शास्त्र का अध्ययन करना सम्भव नहीं होता। इससे इसका महत्त्व स्वतः स्पष्ट हो जाता है।

'संस्कृत' को दैवी वाक् (देवताओं की वाक्) कहते हैं।[1] इसे सभी भाषाओं की जननी कहा जाता है। संस्कृत शास्त्रकार सभी विद्याओं में व्याकरण को प्रमुख स्थान देते हैं। मुखं व्याकरणं स्मृतम्।

संस्कृत वर्णमाला

कण्ठ-जिह्वा आदि के योग से उत्पन्न एक अखण्ड ध्वनि को 'वर्ण' कहते हैं। वर्ण दो प्रकार के हैं—

(अ) स्वर (ब) व्यञ्जन।

(अ) स्वर—जिन वर्णों का उच्चारण बिना किसी दूसरे वर्ण की सहायता से स्वयं ही होता है, उन्हें स्वर कहते है। यथा—अ, इ, उ, ए आदि।

(ब) व्यञ्जन—जिन वर्णों का उच्चारण बिना स्वर की सहायता के नहीं होता, उन्हें व्यञ्जन कहते हैं। यथा—

क (क्+अ), ख (ख्+अ), ग (ग्+अ) आदि।

स्वर

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ए ऐ ओ औ

स्वर तीन प्रकार के होते हैं—ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत।

---

१. संस्कृतं नाम दैवी वागन्वाख्याता महर्षिभिः। दण्डी।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(अ) ह्रस्व स्वर—अ इ उ ऋ लृ—ह्रस्व स्वर हैं अर्थात् इनके उच्चारण में एक मात्रा[1] का समय लगता है।

(ब) दीर्घ स्वर—आ ई ऊ ॠ ए ऐ ओ औ—दीर्घ स्वर हैं। इनके उच्चारण में दो मात्रा का समय लगता है। ए ऐ ओ औ को सन्धि स्वर अथवा मिश्रित स्वर भी कहते हैं क्योंकि ये दो दो स्वरों के मिश्रण से बनते हैं। यथा अ+इ=ए, अ+ए=ऐ, अ+उ=ओ, अ+ओ=औ।

(स) प्लुत स्वर—इन स्वरों का बहुत कम प्रयोग होता है। वे केवल दूर से ही बुलाने में प्रयुक्त होते हैं। यथा राम ३ आगच्छ। (राम ! आओ)। इन स्वरों में ३ मात्रा का समय लगता है।

व्यञ्जन

व्यञ्जनों को तीन भागों में विभक्त किया जाता है—

(अ) स्पर्श व्यञ्जन
(ब) अन्तःस्थ
(स) ऊष्म

(अ) स्पर्श व्यञ्जन—क से म तक २५ वर्ण स्पर्श कहे जाते हैं क्योंकि इनके उच्चारण में जिह्वा का अग्र, मध्य और मूलभाग द्वारा कण्ठ, तालु आदि स्थानों का स्पर्श होता है। इन स्पर्श वर्णों को पांच वर्गों में बांटा गया है और प्रत्येक वर्ग का नाम उसके प्रथम वर्ण के आधार पर रखा गया है। यथा—

क, ख, ग, घ, ङ—कवर्ग
च, छ, ज, झ, ञ=चवर्ग
ट, ठ, ड, ढ, ण=टवर्ग
त, थ, द, ध, न=तवर्ग
प, फ, ब, भ, म=पवर्ग

(ब) अन्तःस्थ—'अन्तःस्थ' का अर्थ है बीच वाला। य, व, र, ल ये स्वर और व्यञ्जन के बीच के हैं। इनके उच्चारण करने में भीतर से कुछ अधिक बल से सांस लानी पड़ती है। य, र, ल, व-ये अन्तःस्थ कहे जाते हैं।

(स) ऊष्म—जिन वर्णों के उच्चारण में गर्म वायु की प्रधानता रहती हैं, उन्हें ऊष्म वर्ण कहते हैं। श, ष, स, ह—ये ऊष्म वर्ण कहलाते हैं।

---

१. समय के परिमाण विशेष को मात्रा कहते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इनके अतिरिक्त संयुक्त व्यञ्जन होते हैं—यथा-क्ष, त्र, ज्ञ आदि। इनकी गणना व्यञ्जनों में नहीं की जाती क्योंकि ये स्वतन्त्र व्यञ्जन नहीं हैं। ये दो व्यञ्जनों के मिश्रण से बनते हैं। क्+ष=क्ष, त्+र=त्र, ज्+ञ=ज्ञ। इस प्रकार कई व्यञ्जन मिलाकर अनेक संयुक्त व्यञ्जन बनाये जा सकते हैं।

व्यञ्जनों के उच्चारण की सुविधा के लिए उन्हें 'अ' युक्त पढ़ा जाता है। वास्तव में उनका शुद्ध रूप क्, ख्, ग् आदि ही है।

पाँचों वर्गों के पहले और दूसरे वर्ण तथा श, ष, स को कठोर व्यञ्जन और शेष तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम वर्ण तथा य, र, ल, व, ह को कोमल व्यञ्जन कहते हैं।

अनुस्वार-अनुनासिक-विसर्ग

उपर्युक्त वर्णों के अतिरिक्त संस्कृत में दो नासिक्य ध्वनियाँ हैं। इन ध्वनियों का उच्चारण नासिका की सहायता के बिना नहीं हो सकता है। अनुस्वार—यह किसी वर्ण के ऊपर बिन्दु के रूप में रखा जाता है, जिसके बाद इसका उच्चारण होता है। यथा कं, खं, गं आदि। अनुनासिक—यह किसी वर्ण के ऊपर अर्धचन्द्र के ऊपर बिन्दु के रूप में रखा जाता है। जैसे= सँ। इनके अतिरिक्त एक ध्वनि 'विसर्ग' है। संस्कृत व्याकरण में इसको 'विसर्जनीय' भी कहा जाता है। इसका संकेत : (विसर्ग) के द्वारा किया जाता है। जिस वर्ण के बाद इसका उच्चारण करना होता है, उसके बाद यह विसर्ग रखा जाता है, ङ्, ञ, ण, न, म को अनुनासिक कहते हैं क्योंकि इनका उच्चारण मुख सहित नासिक द्वारा किया जाता है।

जिह्वामूलीय-उपध्मानीय

जिह्वामूलीय और उपध्मानीय-दोनों अर्धविसर्ग के तुल्य संकेत हैं। क और ख से पहले ⌣ अर्धविसर्ग के तुल्य संकेत को जिह्वामूलीय कहते हैं और प, फ से पहले ⌣ अर्धविसर्ग के तुल्य संकेत को उपध्मानीय कहते हैं। जैसे क: करोति=क:+करोति अथवा क ⌣ करोति। देव:+पालयति=देव: पालयति अथवा देव ⌣ पालयति। इसका प्रयोग अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में नहीं मिलता।

वर्णों के उच्चारण स्थान

मुख के अन्तर्गत जिन अवयवों से वर्णों का उच्चारण होता है वे छः—कण्ठ, तालु, मूर्धा, दन्त, ओष्ठ और जिह्वामूल।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(क) अ, आ, कवर्ग, ह और विसर्ग—ये कण्ठ से बोले जाते हैं, अतः इन्हें 'कण्ठ्य' कहते हैं।[1]

(ख) इ, ई, चवर्ग, य और श–ये तालु से बोले जाते हैं, अतः इन्हें तालव्य कहते है।[2]

(ग) ऋ, ॠ, टवर्ग, र और ष मूर्धा (दांतों के ऊपरी भाग) से बोले जाते हैं, अतः इन्हें 'मूर्धन्य' कहते हैं।[3]

(घ) लृ, तवर्ग, ल और स ये दांतों से बोले जाते हैं अतः इन्हें 'दन्त्य' कहते हैं।[4]

(ङ) उ, ऊ, पवर्ग और उपध्मानीय—ये ओठों से बोले जाते हैं, अतः इन्हें 'दन्त्य' कहते हैं।[5]

ङ, ञ, ण, न, म—पांचों वर्गों के ये पांच अन्तिम वर्ण अपने अपने वर्गीय स्थान से नासिका की सहायता से बोले जाते हैं अतः इन्हें आनुनासिक भी कहते हैं।

(च) ए, ऐ का स्थान कण्ठ-तालु है।[6]

(छ) ओ, औ का स्थान कण्ठ-ओष्ठ है।[7]

(ज) व-दांत और ओठों दोनों से बोला जाता है, अतः इसे दन्तौष्ठ्य कहते हैं।[8]

(झ) क, ख, ग—ये जिह्वामूलीय हैं। जिह्वामूलीय का जिह्वामूल स्थान है[9] अर्थात् इसे जीभ के मूल अर्थात् जड़ वाले भाग से बोला जाता है।

(ञ) अनुस्वार का स्थान नासिका है।[10]

---

१. अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः।
२. इचुयशानां तालु।
३. ऋटुरषाणां मूर्धा।
४. लृतुलसानां दन्ताः।
५. उपूपध्मानीयामोष्ठौ।
६. एदैतोः कण्ठतालु।
७ ओदौतोः कण्ठोष्ठम्।
८. वकारस्य दन्तोष्ठम्।
९. जिह्वामूलीयस्य जिह्वामूलम्।
१०. नासिकानुस्वारस्य।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उच्चारण स्थान-कोष्ठक

उच्चारण स्थान	स्पर्श	अन्तःस्थ	ऊष्म	स्वर
कण्ठ	क ख ग घ ङ		ह	अ, आ विसर्ग
तालु	च छ ज झ ञ		श	इ ई
मूर्धा	ट ठ ड ढ ण	र	ष	ऋ ॠ
दन्त	त थ द ध न	ल स		लृ
ओष्ठ	प फ ब भ म	व (दन्तौष्ठ्य)		उ ऊ
	प फ-उपध्मानीय			
कण्ठ-तालु				ए, ऐ
कण्ठौष्ठ				ओ, औ
नासिका	ङ, ञ, ण, न, म, अनुस्वार			
जिह्वामूलीय	क, ख, ग			

वर्णों के उच्चारण प्रयत्न

वर्णों के उच्चारण में होने वाली क्रिया को प्रयत्न कहते हैं। यह क्रिया दो प्रकार की होती है—आभ्यन्तर और बाह्य।

(क) वर्णों के उच्चारण करने से पूर्व जिह्वा की क्रिया को आभ्यन्तर प्रयत्न कहते हैं।

(ख) मुख से वर्ण निकलते समय जो प्रयत्न किया जाता है उसे बाह्य प्रयत्न कहते हैं। आभ्यन्तर प्रयत्न के आधार पर वर्णों के पांच भेद हैं—विवृत, स्पृष्ट, ईषद्विवृत, ईषत्स्पृष्ट और संवृत।

(अ) विवृत—जिनके उच्चारण में मुख खुला रहता है, वे विवृत वर्ण हैं। जैसे—स्वर। ह्रस्व 'अ' का प्रयोगावस्था में विवृत प्रयत्न होता है। जैसे—रामागमनम्=राम+आगमनम्—इसमें 'अ' विवृत है।

(आ) स्पृष्ट—जिनके उच्चारण में जिह्वा का भिन्न-भिन्न कण्ठ आदि स्थानों से स्पर्श होता रहता है, वे स्पृष्ट वर्ण हैं। इन्हें स्पर्श भी कहते हैं। जैसे क से म तक वर्ण स्पर्श कहलाते हैं।

(इ) ईषद्विवृत—जिनके उच्चारण में मुख कुछ कम खुला रहता है, वे ईषद्विवृत हैं। जैसे—ऊष्मवर्ण—श, ष, स, ह।

(ई) ईषत्स्पृष्ट—जिनके उच्चारण में जिह्वा का कण्ठ आदि स्थानों से थोड़ा ही स्पर्श होता है, वे ईषत्स्पृष्ट हैं। जैसे—अन्तःस्थ—य, र, ल, व।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(उ) संवृत—जिन वर्णों के उच्चारण में मुख अधिक नहीं फैलाना पड़ता, वे संवृत कहे जाते हैं। ह्रस्व 'अ' का संवृत प्रयत्न उस अवस्था में होता है जब इसका रूप वही रहे, अर्थात् सन्धि-नियमों से बदले नहीं, यदि वह बदलता है तो वह विवृत हो जाता है।

बाह्य प्रयत्न ११ प्रकार का होता है—विवार, संवार, श्वास, नाद, घोष, अघोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित।

(अ) विवार—'विवारयति विकासयति मुखम्, इति मुख का खुलना। वर्ण के उच्चारण करने के समय मुख के खुलने को विवार कहते हैं। जिन वर्णों के उच्चारण करते समय मुख खुलता है उनका विवार प्रयत्न कहा गया है। वर्गों के प्रथम, द्वितीय वर्ण एवं श, ष, स का विवार प्रयत्न है।

(आ) संवार—मुख का संकुचित (विकास न) होना। जिनके उच्चारण करते समय मुख संकुचित रहता है उनका संवार प्रयत्न कहा गया है। वर्गों के तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम वर्ण और य, व, र, ल का संवार प्रयत्न है।

(इ) श्वास—वर्णों के उच्चारण में जब श्वास चलता है तब श्वास प्रयत्न होता है। वर्गों के प्रथम, द्वितीय वर्ण और श, ष, स का श्वास प्रयत्न है।

(ई) नाद—वर्णों के उच्चारण में जब नाद (विशेष प्रकार की अव्यक्त ध्वनि) होता है तब नाद प्रयत्न होता है।

(उ) घोष—वर्णों के उच्चारण में जब गूंज हो तो घोष प्रयत्न होता है। वर्गों के तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम वर्ण तथा य, व, र, ल का घोष प्रयत्न है।

(ऊ) अघोष—वर्णों के उच्चारण में जब गूंज न हो तो अघोष प्रयत्न होता है। वर्गों के प्रथम, द्वितीय वर्ण तथा श, ष, स का अघोष प्रयत्न है।

(ऋ) अल्पप्राण—वर्णों के उच्चारण में जब प्राणवायु का अल्प (कम) उपयोग हो तब अल्पप्राण प्रयत्न होता है। वर्गों के प्रथम, तृतीय, पञ्चम वर्ण तथा य, व, र, ल का अल्पप्राण प्रयत्न है।

(ॠ) महाप्राण—वर्णों के उच्चारण में जब प्राणवायु का अधिक उपयोग हो तब महाप्राण प्रयत्न होता है। वर्गों के द्वितीय, चतुर्थ वर्ण तथा श, ष, स, ह का महाप्राण प्रयत्न है।

(ए) उदात्त—तालु आदि स्थानों के ऊपरी भाग में उच्चरित स्वर उदात्त कहलाता है। अतः तदुच्चारण सम्बन्धी प्रयत्न उदात्त होता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(ऐ) अनुदात्त—तालु आदि स्थानों के निचले भाग में उच्चरित स्वर अनुदात्त कहा जाता है और उसके उच्चारण में अनुदात्त प्रयत्न होता है।

(ओ) स्वरित—उदात्त और अनुदात्त जिस स्वर में सम्मिलित हों उसे स्वरित कहते हैं और उसके प्रयत्न को स्वरित कहते हैं।

साहित्यिक संस्कृत में उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित प्रयत्न वाले स्वरों का प्रयोग नहीं होता है। वैदिक साहित्य में इन तीनों स्वरों का प्रयोग होता है। उदात्त स्वर पर कोई चिह्न नहीं लगाया जाता है, अनुदात्त स्वर पर नीचे पड़ी हुई लकीर दी जाती है और स्वरित स्वर पर ऊपर खड़ी लकीर लगाई जाती है।

प्रयत्न कोष्ठक

विवार, श्वास अघोष	संवार, नाद घोष	अल्पप्राण	महाप्राण	उदात्त, अनुदात्त स्वरित	
क ख श	ग घ ङ य	क ग ङ य	ख घ श	अ	ए
च छ ष	ज झ ञ व	च ज ञ व	छ झ ष	इ	ओ
ट ठ स	ड ढ ण र	ट ड ण र	ठ ढ स	उ	ऐ
त थ	द ध न ल	त द न ल	थ ध ह	ऋ	औ
प फ	ब भ म	प ब म	फ भ	ऌ	

संज्ञा प्रकरण

(१) गुण संज्ञा— अ, ए, ओ,—की गुण संज्ञा है।

(२) वृद्धि संज्ञा—आ, ऐ, औ—की वृद्धि संज्ञा हैं।

(३) प्रातिपदिक—सार्थक शब्द को प्रातिपदिक कहते हैं।

(४) पद—सुप् और तिङ् प्रत्ययों से युक्त होने पर पद बनता है। प्रातिपदिक में लगने वाले प्रत्ययों को सुप् तथा धातु में लगने वाले प्रत्ययों को तिङ् कहते हैं।

(५) निष्ठा— क्त और क्तवतु प्रत्ययों को निष्ठा कहते हैं।

(६) संयोग—स्वरों से अव्यवहित होकर व्यञ्जन संयुक्त कहे जाते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(७) संहिता—वर्णों की अत्यन्त समीपता संहिता कही जाती है।

(८) सत्—शतृ और शानच् को 'सत्' कहते हैं।

(९) अनुनासिक—जिन वर्णों का उच्चारण मुख और नासिका दोनों के मेल से होता है, उन्हें अनुनासिक कहते हैं। वर्णों के पञ्चम अक्षर ङ, ञ, ण, न, म अनुनासिक हैं। स्वर और य, व, ल,—अनुनासिक और अननुनासिक दोनों प्रकार के हैं।

(१०) सवर्ण—जब दो या उससे अधिक वर्णों के उच्चारण स्थान (मुख में स्थित तालु आदि) और आभ्यन्तर प्रयत्न समान या एक हों तो उन्हें सवर्ण कहते हैं।

(११) कृदन्त—जिन शब्दों के अन्त में कृत् प्रत्यय लगे हों उन्हें कृदन्त कहते हैं।

(१२) आत्मनेपद—तङ् (ते, एते, अन्ते आदि), शानच्, कानच् ये आत्मनेपद होते हैं। जिन धातुओं के अन्त में ते, एते, अन्ते आदि लगते हैं, वे धातुएं आत्मनेपदी कहलाती हैं।

(१३) परस्मैपद—लकारों के स्थान पर होने वाले ति, तः, अन्ति आदि प्रत्ययों को परस्मैपद कहते है।

(१४) सकर्मक—जिन धातुओं के साथ कर्म आता है उन्हें सकर्मक धातु कहते हैं।

(१५) अकर्मक—जिन धातुओं के साथ कर्म नहीं आता है, उन्हें अकर्मक धातु कहते हैं।

परिभाषा प्रकरण

(१) सन्धि—व्यवधान रहित दो अक्षरों के मेल से जो विकार होता है, उसे सन्धि कहते हैं। जैसे='हिमालयः' में हिम आलयः। इनमें 'हिम' के अन्तिम 'अ' और 'आलय' के आदिम 'आ' में और कोई वर्ण नहीं है। इन दोनों के मेल से 'आ' विकार हो गया है।

(२) संयोग—दो या अधिक व्यञ्जनों के मेल को संयोग कहते हैं। जैसे=सम्प्रति के म्प्र में म्, प् र् अ का संयोग है।

(३) विभक्ति—किसी वाक्य के अन्तर्गत शब्द के परस्पर सम्बन्ध को प्रकट करने के लिए जो चिह्न शब्दों के अन्त में लगाए जाते हैं उन्हें विभक्ति कहते हैं। जैसे—राम, भ्रातृ, श्याम, मित्र—ये चार शब्द हैं। इनका कुछ विशेष अर्थ नहीं बनता। किन्तु यदि प्रत्येक शब्द के अन्त में विभक्ति

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लगाकर वाक्य बनाया जाये तो अर्थ स्पष्ट हो जाता है। जैसे—रामस्य भ्राता, श्यामस्य मित्रम्। प्रत्येक शब्द के अन्त में स्य, म् आदि जो चिह्न जोड़े गए हैं, ये विभक्तियां हैं।

(४) कारक—संज्ञा और सर्वनाम का यह रूप जिसके द्वारा किसी वाक्य में उसका क्रिया के साथ सम्बन्ध प्रकट होता है, कारक कहलाता है। जैसे=रामः गच्छति (राम जाता है)—इस वाक्य में गमन क्रिया करने वाला राम है, इसलिए 'गच्छति' क्रिया का वह कर्तृकारक है।

(५) पद—जिस शब्द के अन्त में विभक्ति जुड़ी हो उसे पद कहते हैं और उस पद के अन्तिम वर्ण को पदान्त कहते हैं।

(६) संज्ञा—किसी व्यक्ति, गुण या स्थान आदि का परिचय देने के लिए जो शब्द प्रयुक्त होता है, उसे संज्ञा कहते हैं। जैसे, रामः—एक व्यक्ति का नाम है। श्वेतता एक वर्ण (गुण) का नाम है।

(७) सर्वनाम—संज्ञा के स्थान पर जिस शब्द का प्रयोग होता है, उसे सर्वनाम कहते हैं। जैसे=रामः आगच्छति, तस्य मित्रम् अपि आगच्छति राम आता है, उसका मित्र भी आता है। इस वाक्य में 'तस्य' पद राम के लिए प्रयुक्त हुआ है, अतः यह सर्वनाम है।

(८) क्रिया—जिस पद से किसी व्यापार का होना या करना पाया जाए उसे क्रिया कहते हैं। जैसे—खादति (खाता है) से बोध होता है कि खाने का व्यापार हो रहा है।

(९) धातु—वह मूल शब्द जिससे कोई क्रिया बनती है, धातु कहलाता है। जैसे—हसति क्रिया का मूल 'हस्' धातु है।

(१०) स्थान=कण्ठ, जिह्वा, तालु आदि विशेष स्थानों से भिन्न-भिन्न वर्ण बोले जाते हैं, उन्हें वर्णों का स्थान कहते हैं।

(११) आदेश –किसी वर्ण के स्थान पर दूसरा वर्ण रखना आदेश होता है।

(१२) विकल्प—ऐच्छिक नियम को विकल्प कहते हैं।

सन्धि

सन्धि शब्द सम्+धा धातु से बना है। सम्=अच्छी तरह से, धा=रखना (मिलना)। सन्धि शब्द का अभिप्राय है—दो वर्णों का अतिसमीप

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आ जाना।[1] वर्णों की अतिनिकटता से उनमें जो परिवर्तन हो सकते हैं, उन्हें सन्धि कहते हैं ।

सन्धि कहीं कहीं अवश्य करनी पड़ती है और कहीं कहीं वक्ता की इच्छा पर निर्भर होती है।[2] एक पद के अन्दर, धातु और उपसर्ग में, समासयुक्त पद के भीतर सन्धि अनिवार्य है। जैसे—

(क) राम+अस्=रामाः। इस पद के भीतर, सन्धि का होना आवश्यक है क्योंकि सन्धि होने के विना पूरे शब्द नहीं बन सकते।

(ख) प्र+अगच्छत्—यहां उपसर्ग एवं धातु रूप में सन्धि आवश्यक है क्योंकि 'प्रागच्छत्' यह पूर्ण शब्द सन्धि के विना नहीं बन सकता।

(ग) धन+औदार्यम् (धन की उदारता)=धनौदार्यम्—यहाँ पदों में समास हुआ है, सन्धि होने पर ही धनौदार्यम् पद बनता है।

वाक्य में सन्धि वक्ता की इच्छा पर निर्भर रहती है। जैसे—रामस्य आगमनं प्रजानाम् आह्लादजनकम्। इनमें प्रत्येक पद अलग-अलग हैं। यदि लेखक चाहे तो वह इसे इस प्रकार लिख सकता है—रामस्यागमनं प्रजानामाह्लादजनकम्। यद्यपि दोनों प्रकार ही शुद्ध हैं किन्तु वाक्य में भी यथासम्भव सन्धि करनी चाहिए।

सन्धि के भेद

सन्धि तीन प्रकार की होती है—(१) स्वर सन्धि (२) व्यञ्जन सन्धि, (३) विसर्ग सन्धि

स्वर सन्धि—स्वर के पश्चात् स्वर होने पर एक अथवा दोनों स्वरों में जो विकार होता है उसे स्वर सन्धि कहते हैं। यथा=इति+आदि=इत्यादि रमा+ईशः=रमेशः।

व्यञ्जन सन्धि—व्यञ्जन के पश्चात् स्वर या व्यञ्जन होने पर व्यञ्जन में जो विकार उत्पन्न होता है उसे व्यञ्जन सन्धि कहते हैं। यथा—जगत्+ईशः=जगदीशः। तत्+लीनः=तल्लीनः।

विसर्ग सन्धि—विसर्ग के पश्चात् स्वर या व्यञ्जन वर्ण होने पर विसर्ग

---

१. 'परः सन्निकर्षः संहिता' (अष्टा० १.४.१०९)

२. संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः।
नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते॥
सिद्धान्त कौमुदी, भ्वादिगण सूत्र संख्या २२३२ की व्याख्या।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

में जो विकार उत्पन्न होता है उसे विसर्ग सन्धि कहते हैं। यथा—हरिः+ अवदत्=हरिरवदत्। बालः+चलति=बालश्चलति।

यहाँ हम पाठ्यक्रम में निर्धारित सन्धि के भेदों का वर्णन प्रस्तुत करते हैं।

स्वर सन्धि के भेद

स्वरसन्धि के निम्न भेद हैं—

(१) दीर्घ
(२) गुण
(३) वृद्धि
(४) यण्
(५) अयादि
(६) पूर्वरूप

(१) दीर्घ सन्धि[1]=ह्रस्व या दीर्घ अ, इ, उ, ऋ, के आगे ह्रस्व या दीर्घ समान स्वर (अ, इ, उ, ऋ) आये तो उन दोनों के स्थान पर दीर्घ स्वर आ, ई, ऊ, ॠ, हो जाते हैं—यथा—

(क) अ+अ=आ
शब्द+अर्थः=शब्दार्थः
शश+अङ्कः=शशाङ्कः
दैत्य+अरिः=दैत्यारिः
सत्य+अर्थः=सत्यार्थः

(ख) अ+आ=आ
राम+आगमनम्=रामागमनम्
जल+आनयनम्=जलानयनम्
सिंह+आसनम्=सिंहासनम्
रत्न+आकरः=रत्नाकरः

(ग) आ+अ=आ
दया+अर्णवः=दयार्णवः
विद्या+अर्थी=विद्यार्थी
महा+अर्णवः=महार्णवः
विद्या+अलङ्कारः=विद्यालङ्कारः

(क) इ+इ=ई
मुनि+इन्द्रः=मुनीन्द्रः
कवि+इच्छा=कवीच्छा
गिरि+इन्द्रः=गिरीन्द्रः
कपि+इन्द्रः=कपीन्द्रः

(ख) इ+ई=ई
परि+ईक्षा=परीक्षा
क्षिति+ईश्वरः=क्षितीश्वरः
कपि+ईशः=कपीशः
कवि+ईशः=कवीशः

(ग) ई+इ=ई
महती+इच्छा=महतीच्छा
नदी+इयम्=नदीयम्
लक्ष्मी+इयम्=लक्ष्मीयम्
नारी+इयम्=नारीयम्

---
१. अकः सवर्णे दीर्घः (अष्टा० ६.१.१०१)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(घ) आ+आ=आ
विद्या+आलयः=विद्यालयः
शिक्षा+आलयः=शिक्षालयः
गदा+आघातः=गदाघातः
धारा+आसारः=धारासारः

(क) उ+उ=ऊ
विधु+उदयः=विधूदयः
प्रभु+उक्तिः=प्रभूक्तिः
सु+उक्तम्=सूक्तम्
बहु+उदकम्=बहूदकम्

(ख) उ+ऊ=ऊ
सिन्धु+ऊर्मिः=सिन्धूर्मिः
लघु+ऊर्मिः=लघूर्मिः
तरु+ऊर्ध्वम्=तरूर्ध्वम्
साधु+ऊचुः=साधूचुः

(ग) ऊ+उ=ऊ
वधू+उत्सवः=वधूत्सवः
श्वश्रू+उपदेशः=श्वश्रूपदेशः
चमू+उपरि=चमूपरि

(घ) ऊ+ऊ=ऊ
सरयू+ऊर्मिः=सरयूर्मिः
भू=ऊर्ध्वम्=भूर्ध्वम्
चमू+ऊर्जः=चमूर्जः

(घ) ई+ई=ई
सती+ईशः=सतीशः
नदी+ईशः=नदीशः
रजनी+ईशः=रजनीशः
श्री+ईशः=श्रीशः

(क) ऋ+ऋ=ॠ
होतृ+ऋकारः=होतॄकारः
भ्रातृ+ऋद्धिः=भ्रातॄद्धिः
पितृ+ऋणम्=पितॄणम्

(ख) ॠ+ॠ=ॠ
कॄ+ॠकारः कॄकारः
कर्तॄ+ऋजुः=कर्तॄजुः

(२) गुण सन्धि[1]=अ, आ से परे ह्रस्व अथवा दीर्घ इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ आने पर निम्नलिखित परिवर्तन होते हैं —

(क) अ+इ=ए
नर+इन्द्रः=नरेन्द्रः
धन+इन्द्रः=धनेन्द्रः
पुष्प+इन्द्रः=पुष्पेन्द्रः

(ख) अ+ई=ए
नर+ईशः=नरेशः

(क) अ+उ=ओ
सूर्य+उदयः=सूर्योदयः
हित+उपदेशः=हितोपदेशः
नील+उत्पलम्=नीलोत्पलम्

(ख) अ+ऊ=ओ
कृष्ण+ऊरुः=कृष्णोरुः

---

१. आद् गुणः (अष्टा० ६.१.८७)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परम + ईश्वरः = परमेश्वरः
गण + ईशः = गणेशः

गृह + ऊर्ध्वम् = गृहोर्ध्वम्
एक + ऊनम् = एकोनम्
नव + ऊढा = नवोढा

(ग) अ + इ = ए
महा + इन्द्रः = महेन्द्रः
लता + इव = लतेव
तथा + इव = तथेव
राजा + इन्द्रः = राजेन्द्रः

(ग) आ + उ = ओ
गङ्गा + उदकम् = गङ्गोदकम्
महा + उपदेशः = महोपदेशः

(घ) आ + ई = ए
रमा + ईशः = रमेशः
महा + ईशः = महेशः
राजा + ईशः = राजेशः
महा + ईश्वरः = महेश्वरः

(घ) आ + ऊ = ओ
महा + ऊरुः = महोरुः
यमुना + ऊर्मिः = यमुनोर्मिः

(क) अ + ऋ = अर्
सप्त + ऋषिः = सप्तर्षिः
देव + ऋषिः = देवर्षिः
कृष्ण + ऋद्धिः = कृष्णर्द्धिः
हिम + ऋतु = हिमर्तुः

(ख) आ + ऋ = अर्
महा + ऋषिः = महर्षिः

(३) वृद्धि सन्धि[1]—अ, आ से परे ए, ऐ, ओ, औ हों तो दोनों के स्थान पर 'ऐ', 'औ' हो जाते हैं। यथा—

(क) अ + ऐ = ऐ
तव + एव = तवैव
एक + एकः = एकैकः
अद्य + एव = अद्यैव
कृष्ण + एकत्वम् = कृष्णैकत्वम्

(ख) अ + ऐ = ऐ
मम + ऐश्वर्यम् = ममैश्वर्यम्

(क) अ + ओ = औ
उष्ण + ओदनम् = उष्णौदनम्
नगर + ओकः = नगरौकः
जल + ओघः = जलौघः
भव = ओषधम् = भवौषधम्

(ख) अ + औ = औ
कृष्ण + औत्कण्ठ्यम् = कृष्णौत्कण्ठ्यम्

१. वृद्धिरेचि (अष्टा० ६.१.८८)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

देव + ऐश्वर्यम् = देवैश्वर्यम्
मत + ऐक्यम् = मतैक्यम्
तव + ऐश्वर्यम् = तवैश्वर्यम्

तव + औत्सुक्यम् = तवौत्सुक्यम्
तव + औदार्यम् = तवौदार्यम्

(ग) आ + ए = ऐ
तथा + एव = तथैव
सदा + एव = सदैव
तथा + एतत् = तथैतत्

(घ) आ + ऐ = ऐ
महा + ऐश्वर्यम् = महैश्वर्यम्
तथा + ऐश्वर्यम् = तथैश्वर्यम्

(ग) आ + ओ = औ
गङ्गा + ओघः = गङ्गौघः
महा + ओघः = महौघः
महा + ओषधिः = महौषधिः

(घ) आ + औ = औ
विद्या + औत्सुक्यम् = विद्यौत्सुक्यम्

(४) यण् सन्धि[1] — ह्रस्व अथवा दीर्घ इ, उ, ऋ, लृ के बाद कोई भिन्न स्वर आए तो इ को य्, उ को व्, ऋ को र् और लृ को ल् हो जाता है। यथा—

(क) इति + अत्र = इत् + य् + अत्र = इत्यत्र
(ख) इति + आदि = इत् + य् + आदि = इत्यादि
(ग) यदि + अपि = यद् + य् + अपि = यद्यपि
(घ) पार्वती + आराधनम् = पार्वत् + य् + आराधनम् = पार्वत्याराधनम्
(ङ) मधु + अरिः = मध् + व् + अरि = मध्वरिः
(च) प्रभु + आज्ञा = प्रभ् + व् + आज्ञा = प्रभ्वाज्ञा
(छ) साधु + आचरितम् = साध् + व् + आचरितम् = साध्वाचरितम्
(ज) धातृ + अंशः = धात् + र् + अंशः = धात्रंशः
(झ) पितृ + आज्ञा = पित् + र् + आज्ञा = पित्राज्ञा
(ञ) लृ + आकृतिः = ल् + आकृतिः = लाकृतिः

(५) अयादि सन्धि[2] — यदि ए ऐ, ओ, औ के बाद कोई स्वर आए तो 'ए' के स्थान पर 'अय्' 'ऐ' के स्थान पर 'आय्' 'ओ' के स्थान पर 'अव्' और 'औ' के स्थान पर 'आव्' हो जाता है यथा—

(क) ने + अनम् = न् अय् + अनम् = नयनम्
(ख) हरे + ए = हर् + अय् + ए = हरये
(ङ) रै + ए = र + आय् + ए = राये

---

१. इको यणचि (अष्टा० ६.१.७७)।
२. एचोऽयवायावः (अष्टा० ६.१.७८)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(च) भानो + ए = भान् + अव् + ए = भानवे
(छ) भो + अनम् = भ् + अव् + अनम् = भवनम्
(ज) पो + इत्र: = प् + अव् + इत्र: = पवित्र:
(झ) पौ + अक: = प् + आव् + अक: = पावक:
(ञ) गौ + औ = ग् + आव्औ + = गावौ

(६) पूर्वरूप सन्धि[1] —पदान्त ए अथवा ओ से परे यदि 'अ' हो तो 'ए' को अय्, ओ को अव् नहीं होता। वहां पर अ, ए अथवा ओ का रूप हो जाता है। और 'अ' के स्थान पर ऽ चिन्ह बना दिया जाता है।[2]

(क) हरे + अत्र = हरेऽत्र
(ख) वने + अत्र = वनेऽत्र
(ग) वृक्षे + अस्मिम् = वृक्षेऽस्मिन्
(घ) विद्यालये + अस्मिन् = विद्यालयेऽस्मिन्
(ङ) विष्णो + अव = विष्णोऽव
(च) प्रभो + अत्र = प्रभोऽत्र
(छ) लोको + अयम् = लोकोऽयम्
(ज) गुरो + अव = गुरोऽव

अनुस्वार—

(१) पदान्त में स्थित 'म्' के बाद कोइ व्यञ्जन आए तो 'म्' को अनुस्वार (ं) हो जाता है।[3] यथा—

(क) गृहम् + गच्छति = गृहं गच्छति
(ख) रामम् + नमामि = रामं नमामि
(ग) त्पम् + पठसि = त्वं पठसि
(घ) कार्यम् + कुरु = कार्यं कुरु
(ङ) धर्मम् + चर = धर्मं चर

---

१. एङः पदान्तादति (अष्टा० ६.१.१०९)।
२. ए और ओ के बाद सन्धि नियमानुसार हटे हुए 'अ' के सूचनार्थ अवग्रह चिह्न (ऽ) प्राय: लगाया जाता है। अवग्रह चिह्न (ऽ) अर्ध अकार का सूचक होता है।
३. मोऽनुस्वार: (अष्टा० ८.३.२३)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(च) सत्यम् + वद = सत्यं वद

(छ) फलम् + खादति = फलं खादति

यदि पदान्त 'म्' से परे कोई स्वर आए तो उसे अनुस्वार नहीं होता है— यथा—ग्रामम् + आयाति = ग्राममायाति, फलम् + उत्पन्नम् = फलमुत्पन्नम्। वाक्य के अन्त में कभी अनुस्वार नहीं आता।

(२) अपदान्त (पद या शब्द के मध्य में आये) न् और म् को अनुस्वार (ं) हो जाता है यदि बाद में वर्ग के एक से चार तक वर्ण और श्, ष्, स् ह् हों तो।[1] यथा

(क) यशान् + सि = यशांसि

(ख) पयान् + सि = पयांसि

(ग) नम् + स्यति = नंस्यति

(घ) आक्रम् + स्यते = आक्रंस्यते

(ङ) मन् + यते = मन्यते

परसवर्ण

(१) अपदान्त अनुस्वार के बाद वर्ग का कोई भी वर्ण अथवा य, व, र् ल् हों तो अनुस्वार के स्थान में परसवर्ण आदेश हो अर्थात् पर वर्ण (वर्ग का कोई भी वर्ण अथवा य्, व्, र्, ल्) का सवर्ण हो।[2]

अनुस्वार के स्थान में नासिका स्थानसाम्य से वर्गों के पञ्चम वर्ण ङ, ञ, ण, न और म आदेश होंगे। कवर्ग परे होगा तो ङकार आदेश होगा, चवर्ग परे होगा तो ञकार आदेश। इसी प्रकार आगे भी। यकार, वकार और लकार परे होंगे तो अनुनासिक यकार, वकार और लकार होंगे।

जैसे—शाम् + तः = शां + तः = यहाँ 'म्' को पूर्वनियमानुसार अनुस्वार (ं) हुआ। अनुस्वार के बाद तवर्ग का 'त्' वर्ण आने पर अनुस्वार को उसी वर्ग का सवर्ण पञ्चम वर्ण 'न' हुआ = शान्तः। इसी प्रकार = आक्राम् + तः = आक्रान्तः

(क) आक्राम् + तः = आक्रां + तः = आक्रान् + तः = आक्रान्तः

---

१. नश्चापदान्तस्य झलि (अष्टा० ८.३.२४)।

२. अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः (अष्टा० ८.४.५८)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(ख) अन् क् + इतः = अंक् + इतः = अङ् क् + इतः = अङ्कितः

(ग) अन् च् + इतः = अं च् + इतः = अ + ञ् च् + इतः = अ + ञ्चितः

(घ) गुम् फ् + इतः = गुँ फ् + इतः = गुम् फ् + इतः = गुम्फितः

(ङ) सम् + यन्ता = सं + यान्ता = सयं यन्ता = संय्यन्ता

(च) सम् + वत्सरः = सं + वत्सरः = सयँ वत्सरः = सँवत्सरः

(२) पदान्त अनुस्वार के स्थान में वर्गों के वर्ण एवं य, व, ल परे होने पर विकल्प से परसवर्ण आदेश हो।[1] जैसे—त्वं + करोषि = इस अवस्था में अनुस्वार के स्थान पर वर्ण 'क' का सवर्ण अनुनासिक ङकार विकल्प से होकर त्वङ्करोषि' रूप बनता है। यहाँ अनुस्वार पदान्त है। इसी प्रकार—

(क) शिवं + भजति = शिवम्भजति
(ख) जलं + पिबति = जलम्पिबति
(ग) नदीं + तरति = नदीन्तरति
(घ) आम्रं + चूषति = आम्रञ्चूषति
(ङ) मधुरं + गायति = मधुरङ्गायति
(च) ऊर्ध्वं + डीयते = ऊर्ध्वंण्डीयते

परसवर्णवाले शब्दरूपों का प्रयोग प्रायः कम किया जाने लगा है।

विसर्ग सन्धि

(१) पदान्त 'स्' को 'रु' होता है, पुनः 'रु' को विसर्ग हो जाता है, बाद में कोई वर्ण हो अथवा न हो। यथा—

(क) राम + स् = राम रु = रामः
(ख) देवा + स् = देवा रु = देवाः
(ग) कृष्ण + स् = कृष्ण रु = कृष्णः

(२) यदि विसर्ग (:) से पूर्व 'अ' हो और बाद में वर्ग के तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम वर्ण अथवा य, र, ल, व एवं 'ह' हों तो विसर्ग को 'उ' हो जाता है[2] यह विसर्ग स् का होना चाहिए, र् का नहीं। यथा

---

१ वा पदान्तस्य (अष्टा० ८.४.५९)।

२. हशि च (अष्टा० ६.१.११४)। वास्तव में यहाँ विसर्ग के स्थान पर कार नहीं होता। (यथा—मेघ स् + गर्जति— इस अवस्था में

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(क) मेघः + गर्जति = मेघ + उ + गर्जति = मेघो गर्जति
(ख) रामः + जातः = राम + उ + जातः = रामो जातः
(ग) मृगः + धावति = मृग + उ + धावति = मृगो धावति
(घ) देवः + हसति = देव + उ + हसति = देवो हसति
(ङ) रामः + वदति = राम + उ + वदति = रामो वदति

(३) यदि (ः) से पूर्व 'अ' हो और बाद में 'अ' हो तो विसर्ग को 'उ' हो जाता है और आगे आने वाले 'अ' को पूर्वरूप हो जाता है।[1] विसर्ग स् का होना चाहिए, र् का नहीं। यथा—बालः + अस्ति = विसर्ग के स्थान पर 'उ' = बाल + उ + अस्ति। पुनः गुण सन्धि होने पर = बालो + अस्ति। आगे आने वाले 'अ' को पूर्वरूप होने पर = बालोऽस्ति। अतएव अः + अ = ओऽ होता है।

(क) शिवः + अर्च्यः = शिवोऽर्च्यः
(ख) यः + अपि = योऽपि
(ग) नृपः + अवदत् = नृपोऽवदत्
(घ) नरः + अयम् = नरोऽयम्
(ङ) देवः + अधीते = देवोऽधीते

(४) विसर्ग से पूर्व अ, आ से भिन्न कोई स्वर हो और बाद में कोई स्वर या वर्गों के तीसरे, चौथे, पांचवें वर्ण और 'य' 'ह' हों तो विसर्ग को 'र्' हो जाता है यह विसर्ग 'स्' का होना चाहिए। यथा—

(क) मुनिः + अवदत् = मुनि र् + अवदत् = मुनिरवदत्
(ख) गुरुः + उवाच = गुरु र् + उवाच = गुरुरुवाच
(ग) गौः + इयम् = गौ र् + इयम् = गौरियम्
(घ) शिशुः + गच्छति = शिशुर् + गच्छति = शिशुर्गच्छति
(ङ) अग्निः + ज्वलति = अग्नि र् + ज्वलति = अग्निर्ज्वलति

'ससजुषो रुः' (अष्टा० ८.२६६) के अनुसार 'स्' को 'रु' हो जाता है—मेघ रु + गर्जति। इसके बाद इस 'रु' को 'उ' होता है। किन्तु यहाँ सरलता के कारण विसर्ग को उ होता है ऐसा कहा गया है।

१. अतो रोरप्लुतादप्लुते (अष्टा० ६.१.११३)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(च) निः + धनम् = निर् + धनम् = निर्धनम्
(छ) ऋषिः + नयति = ऋषि र् + नयति = ऋषिर्नयति
(ज) गुरोः + भाषणम् = गुरो र् + भाषणम् = गुरोर्भाषणम्

(५) विसर्ग के बाद वर्गों के प्रथम, द्वितीय अक्षर और श, ष स हों तो विसर्ग को स् हो जाता है।[1] किन्तु वर्गों के प्रथम, द्वितीय वर्ण तथा श, ष स के बाद कोई श, ष, स नहीं होना चाहिये यथा—

(क) हरिः + त्रायते = हरि स् + त्रायते = हरिस्त्रायते
(ख) रामः + तिष्ठति = राम स् + तिष्ठति = रामस्तिष्ठति
(ग) विष्णुः + त्राता = विष्णु स् + त्राता = विष्णुस्त्राता

(६) विसर्ग से परे श्, ष्, स् हो तो विसर्ग को विकल्प से स् हो जाता है।[2] पुनः उस 'स्' से परे श्, ष् और स् आने पर, वह 'स्' क्रमशः श्, ष् और स् हो जाता है।[3]

सरलता पूर्वक इसको इस प्रकार समझा जा सकता है कि विसर्ग से परे श्, ष्, स् हो तो विसर्ग को विकल्प से क्रमशः, श्, ष् और स् हो जाता है। जहाँ श्, ष्, स् नहीं होते वहाँ विसर्ग ही रहता है। यथा—
(क) हरिः + शेते = हरिस् + शेते = हरिश् + शेते = हरिश्शेते, हरिः शेते
(ख) रामः + शेते = राम स् + शेते = रामश् + शेते = रामश्शेते, रामः शेते
(ग) रामः + षष्ठः = राम स् + षष्ठः = राम ष् + षष्ठः राम.षष्ठः
(घ) दिवसः + षष्ठः = दिवस स् + षष्ठः = दिवस ष् + षष्ठः = दिवसष्षष्ठः,
= रामष्षष्ठः, दिवसःषष्ठः
(ङ) अनित्यः + संसारः = अनित्य स् + संसारः = अनित्यस्संसारः, अनित्यः-संसारः

(७) विसर्ग से पहले 'अ' हो और बाद में पाश, कल्प, क और काम्य शब्द हों तो विसर्ग को 'स्' होता है। यह विसर्ग अव्यय का नहीं होना चाहिए।[4] यथा—
(क) पयः + पाशम् = पयस्पाशम्

---

१. विसर्जनीयस्य सः (अष्टा० ८.३.३४)।
२. वा शरि (अष्टा० ८.३.३६)।
३. स्तोः श्चुना श्चुः (अष्टा० ८.४.४०), ष्टुना ष्टुः (अष्टा० ८.४.४१)।
४. सोऽपदादौ (८.३.३८)। पाशकल्पककाम्येष्विति वाच्यम्। अनव्ययस्येति वाच्यम्। (वार्त्तिक)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(ख) यशः + कल्पम् = यशस्कल्पम्
(ग) यशः + कम् = यशस्कम्
(घ) यशः + काम्यति = यशस्काम्यति

(८) विसर्ग से पहले इ, ई, उ, ऊ हों तो विसर्ग को 'ष्' होता है यदि बाद में पाश, कल्प, क और काम्य हों तो ।[1] यथा—

(क) सर्पिः + पाशम् = सर्पिष्पाशम्
(ख) सर्पिः + कल्पम् = सर्पिष्कल्पम्
(ग) सर्पिः + कम् = सर्पिष्कम्
(घ) सर्पिः + काम्यति = सर्पिष्काम्यति

(९) कस्क[2] आदि शब्दों में विसर्ग से पूर्व अ या आ होने पर विसर्ग को 'स्' हो जाता है, यदि विसर्ग से पूर्व इ, उ हों तो विसर्ग को ष् हो जाता है ।[3] यथा—

(क) कः + कः = कस्कः
(ख) कौतः + कुतः = कौतस्कुतः
(ग) भाः + करः = भास्करः
(घ) सर्पिः + कुण्डिका = सर्पिष्कुण्डिका
(ङ) धनुः + कपालम् = धनुष्कपालम्

(१०) नमस् और पुरस् के विसर्ग को 'स्' होता है यदि बाद में कवर्ग अथवा पवर्ग हो । नमस् में यह नियम विकल्प से लगता है । यथा—

(क) नमः + करोति = नमस्करोति, नमः करोति
(ख) पुरः + करोति = पुरस्करोति

(११) तिरस् शब्द के विसर्ग को 'स्' विकल्प से होता है यदि बाद में कवर्ग अथवा पवर्ग हो । यथा—

---

१. इणः षः (८.३.३९)
२. कस्कादि गण है । इसमें निम्न शब्द हैं—कस्क, कौतस्कुतः, भ्रातुष्पुत्रः, शुनस्कर्णः, सद्यस्कालः, सद्यस्क्रीः, साद्यस्कः, कांस्कान्, सर्पिष्कुण्डिका, धनुष्कपालम्, बर्हिष्पलम्, यजुष्पात्रम्, अयस्कान्तः, तमस्काण्डः अयस्काण्डः, मेदस्पिण्डः, भास्करः, अहस्करः ।
३. कस्कादिषु च (अष्टा० ८.३.४८) ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(क) तिरः + करोति = तिरस्करोति, तिरःकरोति
(ख) तिरः + कृतम् = तिरस्कृतम्, तिरःकृतम्

(१२) अधः और शिरः के विसर्गों को 'स्' होता है यदि बाद में पद शब्द हो।

(क) अधः + पदम् = अधस्पदम्
(ख) शिरः + पदम् = शिरस्पदम्

(१३) विसर्ग से पूर्व 'अ' हो तो विसर्ग को 'स्' होता है समास[1] में और कृ या कम् धातु का कोई रूप अथवा कँस, कुम्भ, पात्र, कुशा या कर्णी शब्द परे हो तो। किन्तु यह विसर्ग न तो अव्यय का होना चाहिए और न उत्तर पद में होना चाहिए।

(क) अयः + कारः = अयस्कारः
(ख) अयः + कामः = अयस्कामः
(ग) अयः + कंसः = अयस्कंसः
(घ) अयः + कुम्भः = अयस्कुम्भः
(ङ) अयः + पात्रम् = अयस्पात्रम्
(च) अयः + कुशा = अयस्कुशा
(छ) अयः + कर्णी = अयस्कर्णी

(१४) विसर्ग से पहले इ या उ हो तो विसर्ग को ष् हो जाता है, बाद में कवर्ग या पवर्ग हो तो। किन्तु विसर्ग प्रत्यय का नहीं होना चाहिए।[2] यथा—

(क) निः + प्रत्यूहम् = निष्प्रत्यूहम्
(ख) निः + क्रान्तः = निष्क्रान्तः
(ग) आविः + कृतम् = आविष्कृतम्
(घ) दुः + कृतम् = दुष्कृतम्

यह नियम 'मुहुः' शब्द के साथ नहीं लगेगा। मुहुः + कृतम् = मुहुःकृतम्।

(१५) शब्द के अन्तिम इस् (इः) और उस् (उः) के विसर्ग को विकल्प

---

१. दो या दो से अधिक पदों के मेल को समास कहते हैं।
२. इदुदुपधस्य चाप्रत्ययः (अष्टा० ८.३.४१)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

से 'ष्' होता है यदि बाद में कवर्ग अथवा पवर्ग हो। षत्व तभी होगा जब दोनों पदों में मिलने का सामर्थ्य हो।[१] यथा—

(क) सर्पिः + करोति = सर्पिष्करोति

(ख) धनुः + करोति = धनुष्करोति

(१६) द्विः, त्रिः और चतुः के विसर्ग को विकल्प से 'ष्' होता है, कवर्ग अथवा पवर्ग परे हो तो। द्विः आदि 'बार' अर्थ के वोधक होने चाहिएँ।[२] जैसे—दो बार, तीन बार, चार बार। यथा—

(क) द्विः + करोति = द्विष्करोति, द्विःकरोति

(ख) त्रिः + करोति = त्रिष्करोति, त्रिःकरोति

(ग) चतुः + करोति = चतुष्करोति, चतुःकरोति

(१७) विसर्ग से पूर्व 'आ' हो तो विसर्ग का लोप होता है यदि बाद में वर्गों के तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम वर्ण तथा य, व, र, ल और 'ह' हों। यथा—

(क) देवाः + नम्याः = देवा नम्याः

(ख) नराः + यान्ति = नरा यान्ति

(ग) नराः + गच्छन्ति = नरा गच्छन्ति

(घ) छात्राः + हसन्ति = छात्रा हसन्ति

यदि विसर्ग के बाद कोई स्वर हो तो विसर्ग का लोप विकल्प से होता है। जहां लोप नहीं होता वहां 'अ' या 'आ' के बाद विसर्ग को 'य्' होता है। यथा—

(क) देवाः + इह = देवा इह, देवायिह

(ख) सुतः + आगच्छति = सुत आगच्छति, सुतयागच्छति

(ग) विप्राः + आगताः = विप्रा आगता, विप्रायागतः

(घ) मृगः + एति = मृग एति, मृगयेति

---

१. इसुसोः सामर्थ्ये (अष्टा० ८.३.४४)। यहां सामर्थ्य से अभिप्राय है कि दोनों पद किसी अर्थ की पूर्ति करने वाले हों। जैसे सर्पिष्करोति = घी बनाता है। धनुष्करोति = धनुष बनाता है।

२. द्विस्त्रिश्चतुरिति कृत्वोऽर्थे (अष्टा० ८.३.४३)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(१८) भोस्, भगोस् और अघोस्—के विसर्ग का लोप होता है यदि बाद में कोई व्यञ्जन हो। यथा—

(क) भोः + देवाः = भो देवाः
(ख) भगोः + नमस्ते = भगो नमस्ते
(ग) अघोः + याहि = अघो याहि

यदि बाद में कोई स्वर हो तो भोस्, भगोस्, और अघोस् के विसर्ग का लोप विकल्प से होता है। जहाँ लोप नहीं होता वहाँ विसर्ग के स्थान पर य् रहता है। यथा —

(क) भोः + अच्युत = भो अच्युत, भोयच्युत
(ख) भगोः + अच्युत = भगो अच्युत, भगोयच्युत
(ग) अघोः + अच्युत = अघो अच्युत, अघोयच्युत

(१९) सः और एषः के विसर्ग का लोप होता है यदि बाद में कोई व्यञ्जन हो। यथा—

(क) सः + पठति = स पठति
(ख) एषः + विष्णुः = एष विष्णु
(ग) सः + रामः = स रामः
(घ) एषः + देवः = एष देवः

(२०) सः के सकार अथवा विसर्ग का लोप होता है यदि उसमें परे 'अ' से भिन्न कोई स्वर हो और श्लोक के पाद की पूर्ति विसर्ग के लोप से होती हो—सस् + एषः = सः + एषः = सैषः यथा—

सैष दाशरथी रामः सैष राजा युधिष्ठिरः।
सैष कर्णो महात्यागी सैष भीमो महाबलः॥

(२१) यदि बाद में कोई विभक्ति न हो तो 'अहन्' के 'न्' को 'र्' होता है। यथा—

(क) अहन् + अहः = अहर् + अहः = अहरहः
(ख) अहन् + गणः = अहर् + गणः = अहर्गणः

(२२) यदि रूप, रात्रि, रथन्तर शब्द बाद में आएँ तो अहन् के 'न्' को 'रु' होता है। 'रु' को 'उ' और पुनः गुण (सन्धि) होकर 'ओ' होता है। यथा—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(क) अहन् + रूपम् = अह रु + रूपम् = अह उ + रूपम् = अहो रूपम्
(ख) अहन् + रात्रम् = अह रु + रात्रम् = अह उ + रात्रम् = अहोरात्रम्
(ग) अहन् + रथन्तरम् = अह रु + रथन्तरम् = अह उ + रथन्तरम् = अहो-रथन्तरम्

(२३) 'र्' के बाद 'र्' हो और 'ढ्' के बाद 'ढ्' हो तो पूर्ववर्ती 'र्' और 'ढ्' का लोप हो जाता है। जहाँ ढ् या 'र्' का लोप हुआ हो, उससे पूर्ववर्ती अ, इ, उ को दीर्घ आ, ई, ऊ हो जाता है। यथा—

(क) पुनर् + रमते = पुन + रमते = पुना रमते
(ख) उढ् + ढः = उ + ढः = ऊढः
(ग) हरि र् + रम्यः = हरि + रम्यः = हरी रम्यः
(घ) शम्भुर् + राजते = शम्भु + राजते = शम्भू राजते
(ङ) शिशुर् + रोदिति = शिशु + रोदिति = शिशू रोदिति

किन्तु मनर् + रथः में र् का लोप नहीं होता 'र्' को 'उ' होता है—मन उ + रथः = मनोरथः।

शब्दरूप

संस्कृत भाषा में शब्द तीन भागों में विभाजित हैं—(१) नाम, (२) आख्यात, (३) अव्यय। नाम से संज्ञा, विशेषण और सर्वनाम का बोध होता है। आख्यात क्रिया होती है, जिसका मूल रूप धातु है। अव्यय का अर्थ है विकार रहित। अव्यय शब्दों में कोई भी परिवर्तन नहीं होता। उपसर्ग और निपात अव्यय कहलाते हैं। यहाँ हम नाम अर्थात् संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण शब्दरूपों पर विचार करेंगे।

(१) संज्ञा शब्द, जैसे—नर, वृक्ष, नदी, रमा आदि।

(२) सर्वनाम शब्द—जैसे तद् (वह), इदम् (यह), युष्मद् (तू), अस्मद् (मैं) आदि।

(३) विशेषण शब्द जैसे—कृष्ण, बुद्धिमत्, धार्मिक आदि संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण शब्दों के तीन लिङ्ग[1] हैं—पुंल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग।

---

१. लिङ्ग का अर्थ है 'चिह्न', जिसके द्वारा किसी शब्द का पुरुषवाचक अथवा स्त्रीवाचक होने का भेद प्रकट होता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्रायः पुरुषवाचक शब्द पुंल्लिङ्ग और स्त्रीवाचक शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं। जैसे—राम, हरि, विष्णु आदि पुंल्लिङ्ग हैं और देवी, स्त्री, नारी आदि स्त्रीलिङ्ग हैं। जिन वस्तुओं में पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग का भेद नहीं होता उनमें कई शब्द पुंलिङ्ग, कई स्त्रीलिङ्ग और कई नपुंसक लिङ्ग होते हैं। जैसे—वृक्ष, मेघ, ग्राम आदि पुंल्लिङ्ग हैं। लता, नदी, रजनी, नगरी आदि स्त्रीलिङ्ग हैं और सरस्, फल, अश्रु, अस्थि, वारि आदि नपुंसकलिङ्ग हैं। वास्तव में संस्कृत-शब्दों का लिङ्ग-परिचय देने के लिए कोई विशेष नियम नहीं है।

विशेषण और सर्वनाम शब्द तीनों लिङ्गों में होते हैं क्योंकि विशेषण का वही लिङ्ग होता है जो विशेष्य का होता है और सर्वनाम का भी वही लिङ्ग होता है जो संज्ञा शब्द का होता है क्योंकि सर्वनाम संज्ञा शब्दों के स्थान पर प्रयुक्त होते हैं। जैसे—शोभनः बालकः, शोभनं गृहम्, शोभना नारी। यहाँ 'शोभन' विशेषण शब्द अपने विशेष्य के अनुसार तीनों लिङ्गों में प्रयुक्त है। इसी प्रकार (नरः) गच्छति। इयं (नारी) गच्छति। इदं (फलं) पतति। यहाँ 'इदम्' सर्वनाम शब्द संज्ञा शब्द के लिङ्ग के अनुसार तीनों लिङ्गों में प्रयुक्त हुआ है।

संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण शब्दों के अन्त में कुछ चिह्न लगाए जाते हैं, जिनके कारण वाक्य में उनका परस्पर सम्बन्ध रहता है, उस चिह्न को विभक्ति कहते हैं। सात विभक्तियाँ हैं—प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी। संबोधन प्रथमा का ही भेद है।

प्रत्येक विभक्ति के तीन वचन हैं—एकवचन, द्विवचन और बहुवचन। एक के लिए एकवचन, दो के लिए द्विवचन और दो से अधिक के लिए बहुवचन आता है।

विभक्ति के दो भेद हैं—कारक विभक्ति और उपपद विभक्ति।

संज्ञा अथवा सर्वनाम शब्द के साथ प्रयुक्त वह विभक्ति जिसके द्वारा किसी वाक्य में उस शब्द का क्रिया के साथ सम्बन्ध प्रकट होता है, कारक विभक्ति है।

क्रिया के साथ सम्बन्ध रखने वाला कारक है क्रियान्वयि कारकम्। कारक छः हैं—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(१) कर्ता—जो क्रिया करता है, उसे कर्ता कहते हैं । कर्ता में प्रथमा बिभक्ति का प्रयोग होता है । प्रथमा विभक्ति का अर्थ 'ने' अथवा बिना किसी चिह्न के बताया जाता है जैसे—राम अभक्षयत्=राम ने खाया । देव: गच्छति=देव जाता है ।

(२) कर्म—कर्ता अपनी क्रिया द्वारा मुख्य रूप से जिसे प्राप्त करना चाहे, उसे 'कर्म' कहते हैं । कर्म में द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होता है । द्वितीया विभवित का अर्थ 'को' अथवा बिना किसी चिह्न के बताया जाता है । जैसे—रामः मृगं पश्यति—राम हरिण को देखता है । मोहन: पुस्तकं पठति=मोहन पुस्तक पढ़ता है ।

(३) करण—कर्ता को क्रिया की सिद्धि में जो सहायक है, उसे करण कहते हैं । करण कारक के लिए तृतीया विभक्ति का अर्थ 'से' अथवा 'के द्वारा' से प्रकट होता है । जैसे— छात्रः हस्तेन लिखति— छात्र हाथ से लिखता है । श्यामः जलेन मुखं प्रक्षालयति—श्याम जल से मुख धोता है ।

(४) सम्प्रदान—जिसको कुछ दिया जाए अथवा जिसके निमित्त कोई काम किया जाए, उसे सम्प्रदान कहते हैं । सम्प्रदान के लिए चतुर्थी विभक्ति आती है । चतुर्थी विभक्ति का अर्थ 'के लिए' और कभी-कभी 'को' से भी बताया जाता है । जैसे—छात्राः पठनाय गच्छन्ति=छात्र पढ़ने के लिए जाते हैं । निर्धनाय अन्नं यच्छ=निर्धन को अन्न दो ।

(५) अपादान—जिस स्थान, वस्तु, अथवा पुरुष से कोई वस्तु अलग हो, उस स्थान, पुरुष अथवा वस्तु को अपादान कहते हैं । अपादान के लिए पञ्चमी विभक्ति आती है जिसका अर्थ 'से' से प्रकट होता है । जैसे—रामः गृहात् गच्छति=राम घर से जाता है । वृक्षात् पुष्पाणि पतन्ति=वृक्ष से फूल गिरते हैं । यहाँ राम का घर से, और फूलों का वृक्ष से अलग होना कहा है ।

(६) अधिकरण—जब कर्ता कोई क्रिया किसी आधार पर करता है तो आधार ही 'अधिकरण' कहलाता है । अधिकरण में सप्तमी विभक्ति का प्रयोग होता है । सप्तमी विभक्ति का अर्थ 'में' अथवा 'पर' से स्पष्ट होता है । जैसे—राजा सिंहासने तिष्ठति=राजा सिंहासन पर बैठता है। तिलेषु तैलं वर्तते—तिलों में तेल होता है ।

षष्ठी विभक्ति को छोड़कर शेष प्रथमा से लेकर सप्तमी तक छः विभक्तियों का क्रम से प्रयोग बताया गया है । अतः कर्ता से लेकर अधिकरण तक छः कारक हुए । षष्ठी विभक्ति का क्रिया के साथ सम्बन्ध नहीं होता

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अतः इसे कारक नहीं माना जाता। जैसे—रामस्य पिता आगच्छति=राम का पिता आता है। यहाँ 'रामस्य' का सम्बन्ध क्रिया से न होकर पिता से है। अतः कारक छः और विभक्तियाँ सात हैं।

इस प्रकार विभक्तियों के ये अर्थ होते हैं—

प्रथमा—ने
द्वितीया—को
तृतीया—से, के द्वारा
चतुर्थी—को, के लिए
पञ्चमी—से
षष्ठी—का, के, की
सप्तमी—में, पर
सम्बोधन—हे, रे (ये शब्द के पूर्व लगते हैं)

पाणिनि-व्याकरण के अनुसार शब्दों के साथ जो विभक्तियाँ लगती हैं उन्हें सुप् विभक्ति कहते हैं क्योंकि ये 'सु' से लेकर 'प्' तक होती हैं। ये सुप् विभक्तियाँ इस प्रकार हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स (स्)	औ	जस् (अस्)
द्वितीया	अम्	औट् (औ)	शस् (अस्)
तृतीया	टा (आ)	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ङे (ए)	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	ङसि (अस्)	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	ङस् (अस्)	ओस्	आम्
सप्तमी	ङि (इ)	ओस्	सुप् (सु)

जिन शब्दों के आगे ये विभक्तियाँ लगती हैं, वे दो प्रकार के हैं—
(१) स्वरान्त (अजन्त), जिनके अन्त में कोई स्वर है, जैसे—राम, फल, मति आदि।

(२) व्यञ्जनान्त (हलन्त), जिनके अन्त में व्यञ्जन हो, जैसे—मरुत्, जगत्, नामन् आदि।

लिङ्ग तीन हैं—पुंल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग। अतः स्वरान्त

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(अजन्त) और व्यञ्जनान्त (हलन्त) भेदों से शब्दों के छः भेद माने जाते हैं—
(१) स्वरान्त (अजन्त) पुंल्लिङ्ग
(२) स्वरान्त (अजन्त) स्त्रीलिङ्ग
(३) स्वरान्त (अजन्त) नपुंसकलिङ्ग
(४) व्यञ्जनान्त (हलन्त) पुंल्लिङ्ग
(५) व्यञ्जनान्त (हलन्त) स्त्रीलिङ्ग
(६) व्यञ्जनान्त (हलन्त) नपुंसकलिङ्ग

स्वरान्त (अजन्त) शब्द

अजन्त शब्दों के बाद सुप् प्रत्यय (विभक्ति) लगाने पर बहुत अधिक परिवर्तन होते हैं। अतः यहाँ उनका विस्तारभय से उल्लेख नहीं किया गया है। शब्दों के पूरे रूप ही दिये गए हैं। जिन शब्दों के रूप दिए गए हैं उन्हें ही आदर्श समझना चाहिए और उनके अनुसार ही अन्य शब्दों के रूप चलाने चाहिएँ।

पुंल्लिङ्ग शब्दों में साधारणतया ये विभक्ति-चिह्न लगते हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्	औ	अस्
द्वितीया	अम्	औ	अस्
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ए	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	अस्	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	अस्	ओस्	आम्
सप्तमी	इ	ओस्	सु
सम्बोधन	स्	औ	अस्

अकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	रामः (राम)	रामौ (दो राम)	रामाः (बहुत राम)
द्वितीया	रामम् (राम को)	रामौ (दो रामों को)	रामान् (रामों को)
तृतीया	रामेण (राम से, ने)	रामाभ्याम् (दो रामों से, ने)	रामैः (रामों से, ने)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चतुर्थी	रामाय (राम के लिए)	रामाभ्याम् (दो रामों के लिए)	रामेभ्यः (रामों के लिए)
पञ्चमी	रामात् (राम से)	रामाभ्याम् (दो रामों से)	रामेभ्यः (रामों से)
षष्ठी	रामस्य (राम का, के, की)	रामयोः (दो रामों का)	रामाणाम् (रामों का)
सप्तमी	रामे (राम में, पर)	रामयोः (दो रामों में)	रामेषु (रामों में)
सम्बोधन	हे राम (हे राम)	हे रामौ (हे दो राम)	हे रामाः (हे रामों)

इसी प्रकार अन्य अकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों के रूप भी राम की तरह चलते हैं जो शब्द 'र्' अथवा 'ष' वर्ण युक्त हैं उनके तृतीया एकवचन और षष्ठी बहुवचन में 'न' को 'ण' होता है। नरः, बालकः, नृपः, शुकः, अश्वः, गजः, पुत्रः, मनुष्यः, छात्रः, वृक्षः आदि।

इकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्द

कवि (कवि)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	कविः	कवी	कवयः
द्वितीया	कविम्	कवी	कवीन्
तृतीया	कविना	कविभ्याम्	कविभिः
चतुर्थी	कवये	कविभ्याम्	कविभ्यः
पञ्चमी	कवेः	कविभ्याम्	कविभ्यः
षष्ठी	कवेः	कव्योः	कवीनाम्
सप्तमी	कवौ	कव्योः	कविषु
सम्बोधन	हे कवे	हे कवी	हे कवयः

निम्न शब्दों के रूप कवि की भांति चलते हैं केवल र और ष वर्ण रखने वाले शब्दों के तृतीय एकवचन तथा षष्ठी बहुवचन में 'न' के स्थान पर 'ण' हो जाता है—मुनि, हरिः, अरिः, रविः, गिरिः, कपिः, निधिः, वह्निः, नृपतिः, विधिः, उदधिः, पाणिः आदि तथा जिस शब्द के अन्त में 'पति' शब्द हो, जैसे—गणपति, महीपति, सुरपति, जगत्पति आदि। इन शब्दों के रूप भी कवि की भांति चलते हैं। पति और सखि (मित्र) शब्दों के रूप 'कवि' से भिन्न हैं—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पति (स्वामी)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पतिः	पती	पतयः
द्वितीया	पतिम्	पती	पतीन्
तृतीया	पत्या	पतिभ्याम्	पतिभिः
चतुर्थी	पत्ये	पतिभ्याम्	पतिभ्यः
पञ्चमी	पत्युः	पतिभ्याम्	पतिभ्यः
षष्ठी	पत्युः	पत्योः	पतीनाम्
सप्तमी	पत्यौ	पत्योः	पतिषु
सम्बोधन	हे पते	हे पती	हे पतयः

सखि (मित्र)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सखा	सखायौ	सखायः
द्वितीया	सखायम्	सखायौ	सखीन्
तृतीया	सख्या	सखिभ्याम्	सखिभिः
चतुर्थी	सख्ये	सखिभ्याम्	सखिभ्यः
पञ्चमी	सख्युः	सखिभ्याम्	सखिभ्यः
षष्ठी	सख्युः	सख्योः	सखीनाम्
सप्तमी	सख्यौ	सख्योः	सखिषु
सम्बोधन	हे सखे	हे सखायौ	हे सखायः

उकारान्त पुंलिङ्ग शब्द

साधु (सज्जन पुरुष)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	साधुः	साधू	साधवः
द्वितीया	साधुम्	साधू	साधून्
तृतीया	साधुना	साधुभ्याम्	साधुभिः
चतुर्थी	साधवे	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
पञ्चमी	साधोः	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
षष्ठी	साधोः	साध्वोः	साधूनाम्
सप्तमी	साधौ	साध्वोः	साधुषु
सम्बोधन	हे साधो	हे साधू	हे साधवः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

निम्न शब्दों के रूप साधु शब्द के समान चलते हैं किन्तु र और ष वर्ण रखने वाले शब्दों के तृतीया एकवचन और षष्ठी बहुवचन में 'न' के स्थान पर 'ण' होता है। —गुरु, वायु, भानु, शिशु, प्रभु, बाहु, तरु, विधु, मृदु आदि।

ऋकारान्त पुंलिङ्ग शब्द

पितृ (पिता)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पिता	पितरौ	पितरः
द्वितीया	पितरम्	पितरौ	पितॄन्
तृतीया	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः
चतुर्थी	पित्रे	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
पञ्चमी	पितुः	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
षष्ठी	पितुः	पित्रोः	पितॄणाम्
सप्तमी	पितरि	पित्रोः	पितृषु
सम्बोधन	हे पितः	हे पितरौ	हे पितरः

इसी प्रकार भ्रातृ (भाई), जामातृ (दामाद), देवृ (देवर) आदि शब्दों के रूप चलते हैं।

दातृ (दान देने वाला)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	दाता	दातारौ	दातारः
द्वितीया	दातारम्	दातारौ	दातॄन्
तृतीया	दात्रा	दातृभ्याम्	दातृभिः
चतुर्थी	दात्रे	दातृभ्याम्	दातृभ्यः
पञ्चमी	दातुः	दातृभ्याम्	दातृभ्यः
षष्ठी	दातुः	दात्रोः	दातॄणाम्
सप्तमी	दातरि	दात्रोः	दातृषु
सम्बोधन	हे दातः	हे दातारौ	हे दातारः

इसी प्रकार धातृ (ब्रह्मा), कर्तृ (करने वाला), गन्तृ (जाने वाला), नेतृ (ले जाने वाला), नप्तृ (पौत्र), सवितृ (सविता=सूर्य), भर्तृ (स्वामी) आदि के रूप चलते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्वरान्त (अजन्त) नपुंसकलिङ्ग

नपुंसकलिङ्ग शब्दों के साथ साधारणतया ये विभक्ति चिह्न लगते हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अम्	ई	इ
द्वितीया	अम्	ई	इ
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ए	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	अस्	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	अस्	ओस्	आम्
सप्तमी	इ	ओस्	सु
सम्बोधन	—	ई	इ

नपुंसकलिङ्ग शब्दों के साथ ये विभक्तियाँ लगाने पर बहुत अधिक परिवर्तन होता है।

अकारान्त नपुंसकलिङ्ग
फल (फल)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	फलम्	फले	फलानि
द्वितीया	फलम्	फले	फलानि
तृतीया	फलेन	फलाभ्याम्	फलैः
चतुर्थी	फलाय	फलाभ्याम्	फलेभ्यः
पञ्चमी	फलात्	फलाभ्याम्	फलेभ्यः
षष्ठी	फलस्य	फलयोः	फलानाम्
सप्तमी	फले	फलयोः	फलेषु
सम्बोधन	हे फल	हे फले	हे फलानि

इसी प्रकार मित्र, वन, मुख, जल, धन, ज्ञान, पुस्तक, पुष्प, सुख, बल आदि नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप चलते हैं।

इकारान्त नपुंसकलिङ्ग
वारि (जल)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वारि	वारिणी	वारीणि
द्वितीया	वारि	वारिणी	वारीणि
तृतीया	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
चतुर्थी	वारिणे	वारिभ्याम्	वारिभ्यः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पञ्चमी	वारिणः	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
षष्ठी	वारिणः	वारिणोः	वारिणाम्
सप्तमी	वारिणि	वारिणोः	वारिषु
सम्बोधन	हे वारि, हे वारे	हे वारिणी	हे वारीणि

दधि (दही), अस्थि(हड्डी), सक्थि (जङ्घा) और अक्षि (आँख) शब्दों को छोड़कर समस्त इकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप वारि के समान चलते हैं।

दधि (दही)

	एकवचन	द्विवचन	बहुववन
प्रथमा	दधि	दधिनी	दधीनि
द्वितीया	दधि	दधिनी	दधीनि
तृतीया	दध्ना	दधिभ्याम्	दधिभिः
चतुर्थी	दध्ने	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
पञ्चमी	दध्नः	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
षष्ठी	दध्नः	दध्नोः	दध्नाम्
सप्तमी	दध्नि दधनि	दध्नोः	दधिषु
सम्बोधन	हे दधि, हे दधे	हे दधिनी	हे दधीनि

अस्थि और सक्थि के रूप भी चलते हैं।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अक्षि	अक्षिणी	अक्षीणि
द्वितीया	अक्षि	अक्षिणी	अक्षीणि
तृतीवा	अक्ष्णा	अक्षिभ्याम्	अक्षिभिः
चतुर्थी	अक्ष्णे	अक्षिभ्याम्	अक्षिभ्यः
पञ्चमी	अक्ष्णः	अक्षिभ्याम्	अक्षिभ्यः
षष्ठी	अक्ष्णः	अक्ष्णोः	अक्ष्णाम्
सप्तमी	अक्ष्णि, अक्षिणि	अक्ष्णोः	अक्षिषु
सम्बोधन	हे अक्षि, अक्षे	हे अक्षिणी	हे अक्षीणि

उकारान्त नपुंसकलिङ्ग

मधु (शहद)

	एक वचन	द्विवचन	बहुववन
प्रथमा	मधु	मधुनी	मधूनि
द्वितीया	मधु	मधुनी	मधूनि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तृतीया	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
चतुर्थी	मधुने	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
पञ्चमी	मधुनः	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
षष्ठी	मधुनः	मधुनोः	मधूनाम्
सप्तमी	मधुनि	मधुनोः	मधुषु
सम्बोधन	हे मधु	हे मधुनी	हे मधूनि

इसी प्रकार वस्तु, दारु, (लकड़ी) अश्रु, अम्बु (पानी) आदि शब्दों के तृतीया एकवचन तथा षष्ठी बहुवचन में 'न' के स्थान में 'ण' होता है।

ऋकारान्त नपुंसकलिङ्ग

कर्तृ (करने वाला)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्तृ	कर्तृणी	कर्तॄणि
द्वितीया	कर्तृ	कर्तृणी	कर्तॄणि
तृतीया	कर्त्रा, कर्तृणा	कर्तृभ्याम्	कर्तृभिः
चतुर्थी	कर्त्रे	कर्तृभ्याम्	कर्तृभ्यः
पञ्चमी	कर्तुः, कर्तृणः	कर्तृभ्याम्	कर्तृभ्यः
षष्ठी	कर्तुः, कर्तृणः	कर्त्रोः, कर्तृणोः	कर्तॄणाम्
सप्तमी	कर्तरि	कर्त्रोः, कर्तृणोः	कर्तृषु
सम्बोधन	हे कर्तृ, हे कर्तः	हे कर्तृणी	हे कर्तॄणि

इसी प्रकार धातृ, नेतृ, रक्षितृ आदि शब्दों के रूप चलते हैं।

स्वरान्त (अजन्त) स्त्रीलिङ्ग शब्द

आकारान्त स्त्रीलिङ्ग

लता (लता)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	लता	लते	लताः
द्वितीया	लताम्	लते	लताः
तृतीया	लतया	लताभ्याम्	लताभिः
चतुर्थी	लतायै	लताभ्याम्	लताभ्यः
पञ्चमी	लतायाः	लताभ्याम्	लताभ्यः
षष्ठी	लतायाः	लतयोः	लतानाम्

१. कर्तृ, धातृ, नेतृ, रक्षितृ आदि शब्द विशेषण हैं अतः ये तीनों लिङ्गों में प्रयुक्त होते हैं। यहाँ नपुंसकलिङ्ग में ही प्रयोग दिखाया गया है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सप्तमी	लतायाम्	लतयोः	लतासु
सम्बोधन	हे लते	हे लते	हे लताः

इसी प्रकार रमा, विद्या, बालिका, अजा (बकरी), गङ्गा, कन्या, शोभा, भार्या, आदि शब्दों के रूप चलते हैं। अम्बा (माता) शब्द भी 'लता' के समान चलता है। किन्तु सम्बोधन के एकवचन में 'हे अम्ब' होता है।

इकारान्त स्त्रीलिङ्ग
मति (बुद्धि)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मतिः	मती	मतयः
द्वितीया	मतिम्	मती	मतीः
तृतीया	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
चतुर्थी	मत्यै, मतये	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
पञ्चमी	मत्याः, मतेः	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
षष्ठी	मत्याः, मतेः	मत्योः	मतीनाम्
सप्तमी	मत्याम्, मतौ	मत्योः	मतिषु
सम्बोधन	हे मते	हे मती	हे मतयः

इसी प्रकार रुचि, श्रुति, स्मृति, सम्पत्ति, विपत्ति, भूति, भूमि, मुक्ति, पङ्क्ति आदि शब्दों के रूप चलते हैं।

ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग
नदी

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नदी	नद्यौ	नद्यः
द्वितीया	नदीम्	नद्यौ	नदीः
तृतीया	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
चतुर्थी	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
पञ्चमी	नद्याः	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
षष्ठी	नद्याः	नद्योः	नदीनाम्
सप्तमी	नद्याम्	नद्योः	नदीषु
सम्बोधन	हे नदि	हे नद्यौ	हे नद्यः

इसी प्रकार जननी, पुत्री, रजनी, नगरी, देवी, पुरी, कौमुदी, राज्ञी, सुन्दरी, कुमारी, पत्नी आदि शब्दों के रूप चलते हैं। प्रायः समस्त ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप नदी के समान हैं किन्तु अवी, तन्त्री, तरी, लक्ष्मी, धी,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ह्री और श्री शब्दों के प्रथमा एकवचन में विसर्ग होते हैं। यथा—अवी:, तन्त्री:, तरी:, लक्ष्मी:, धी:, ह्री:, श्री:।

व्यञ्जनान्त (हलन्त) शब्द

हलन्त शब्दों के आगे निम्न सुप् विभक्तियाँ जोड़ी जाती हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचम
प्रथमा	स्	औ	अस्
द्वितीया	अम्	औ	अस्
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ए	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	अस्	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	अस्	ओस्	आम्
सप्तमी	इ	ओस्	सु
सम्बोधन	स्	औ	अस्

इन विभक्तियों के रूप हलन्त पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग में समान ही रहते हैं किन्तु नपुंसकलिङ्ग में केवल प्रथमा द्वितीया के रूप पुंल्लिङ्ग से भिन्न होते हैं।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	—	ई	इ
द्वितीया	—	ई	इ

व्यञ्जनान्त (हलन्त) पुंल्लिङ्ग

मरुत् (वायु)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मरुत्	मरुतौ	मरुतः
द्वितीया	मरुतम्	मरुतौ	मरुतः
तृतीया	मरुता	मरुद्भ्याम्	मरुद्भिः
चतुर्थी	मरुते	मरुद्भ्याम्	मरुद्भ्यः
पञ्चमी	मरुतः	मरुद्भ्याम्	मरुद्भ्यः
षष्ठी	मरुतः	मरुतोः	मरुताम्
सप्तमी	मरुति	मरुतोः	मरुत्सु
सम्बोधन	हे मरुत्	हे मरुतौ	हे मरुतः

बलवत् (बल युक्त)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	बलवान्	बलवन्तौ	बलवन्तः
द्वितीया	बलवन्तम्	बलवन्तौ	बलवन्तः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तृतीया	बलवता	बलवद्भ्याम्	बलवद्भिः
चतुर्थी	बलवते	बलवद्भ्याम्	बलवद्भ्यः
पञ्चमी	बलवतः	बलवद्भ्याम्	बलवद्भ्यः
षष्ठी	बलवतः	बलवतोः	बलवताम्
सप्तमी	बलवति	बलवतोः	बलवत्सु
सम्बोधन	हे बलवन्	हे बलवन्तौ	हे बलवन्तः

गतवत् (गति युक्त)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	गतवान्	गतवन्तौ	गतवन्तः
द्वितीया	गतवन्तम्	गतवन्तौ	गतवतः
तृतीया	गतवता	गतवद्भ्याम्	गतवद्भिः
चतुर्थी	गतवते	गतवद्भ्याम्	गतवद्भ्यः
पञ्चमी	गतवतः	गतवद्भ्याम्	गतवद्भ्यः
षष्ठी	गतवतः	गतवतोः	गतवताम्
सप्तमी	गतवति	गतवतोः	गतवत्सु
सम्बोधन	हे गतवन्	हे गतवन्तौ	हे गतवन्तः

राजन् (राजा)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	राजा	राजानौ	राजानः
द्वितीया	राजानम्	राजानौ	राज्ञः
तृतीया	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः
चतुर्थी	राज्ञे	राजभ्याम्	राजभ्यः
पञ्चमी	राज्ञः	राजभ्याम्	राजभ्यः
षष्ठी	राज्ञः	राज्ञोः	राज्ञाम्
सप्तमी	राज्ञि	राज्ञोः	राजसु
सम्बोधन	हे राजन्	हे राजानौ	हे राजानः

आत्मन् (आत्मा)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	आत्मा	आत्मानौ	आत्मानः
द्वितीया	आत्मानम्	आत्मानौ	आत्मनः
तृतीया	आत्मना	आत्मभ्याम्	आत्मभिः
चतुर्थी	आत्मने	आत्मभ्याम्	आत्मभ्यः
पञ्चमी	आत्मनः	आत्मभ्याम्	आत्मभ्यः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

षष्ठी	आत्मनः	आत्मनोः	आत्मनाम्
सप्तमी	आत्मनि	आत्मनोः	आत्मसु
सम्बोधन	हे आत्मन्	हे आत्मानौ	हे आत्मानः

धनिन् (धनवान्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	धनी	धनिनौ	धनिनः
द्वितीया	धनिनम्	धनिनौ	धनिनः
तृतीया	धनिना	धनिभ्याम्	धनिभिः
चतुर्थी	धनिने	धनिभ्याम्	धनिभ्यः
पञ्चमी	धनिनः	धनिभ्याम्	धनिभ्यः
षष्ठी	धनिनः	धनिनोः	धनिनाम्
सप्तमी	धनिनि	धनिनोः	धनिषु
सम्बोधन	हे धनिन्	हे धनिनौ	हे धनिनः

व्यञ्जनान्त (हलन्त) स्त्रीलिङ्ग

वाच् (वाणी)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वाक्	वाचौ	वाचः
द्वितीया	वाचम्	वाचौ	वाचः
तृतीया	वाचा	वाग्भ्याम्	वाग्भिः
चतुर्थी	वाचे	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
पञ्चमी	वाचः	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
षष्ठी	वाचः	वाचोः	वाचाम्
सप्तमी	वाचि	वाचोः	वाक्षु
सम्बोधन	हे वाक्	हे वाचौ	हे वाचः

सरित् (नदी)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सरिद्	सरितौ	सरितः
द्वितीया	सरितम्	सरितौ	सरितः
तृतीया	सरिता	सरिद्भ्याम्	सरिद्भिः
चतुर्थी	सरिते	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
पञ्चमी	सरितः	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
षष्ठी	सरितः	सरितोः	सरिताम्
सप्तमी	सरिति	सरितोः	सरित्सु
सम्बोधन	हे सरिद्	हे सरितौ	हे सरितः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिषत् (सभा)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	परिषत्	परिषदौ	परिषदः
द्वितीया	परिषदम्	परिषदौ	परिषदः
तृतीया	परिषदा	परिषद्भ्याम्	परिषद्भिः
चतुर्थी	परिषदे	परिषद्भ्याम्	परिषद्भ्यः
पञ्चमी	परिषदः	परिषद्भ्याम्	परिषद्भ्यः
षष्ठी	परिषदः	परिषदोः	परिषदाम्
सप्तमी	परिषदि	परिषदोः	परिषत्सु
सम्बोधन	हे परिषत्	हे परिषदौ	हे परिषदः

विपद् (विपत्ति)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विपद्	विपदौ	विपदः
द्वितीया	विपदम्	विपदौ	विपदः
तृतीया	विपदा	विपद्भ्याम्	विपद्भिः
चतुर्थी	विपदे	विपद्भ्याम्	विपद्भ्यः
पञ्चमी	विपदः	विपद्भ्याम्	विपद्भ्यः
षष्ठी	विपदः	विपदोः	विपदाम्
सप्तमी	विपदि	विपदोः	विपत्सु
सम्बोधन	हे विपद्	हे विपदौ	हे विपदः

हलन्त नपुंसकलिङ्ग
जगत् (संसार)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	जगत्	जगती	जगन्ति
द्वितीया	जगत्	जगती	जगन्ति
तृतीया	जगता	जगद्भ्याम्	जगद्भिः
चतुर्थी	जगते	जगद्भ्याम्	जगद्भ्यः
पञ्चमी	जगतः	जगद्भ्याम्	जगद्भ्यः
षष्ठी	जगतः	जगतोः	जगताम्
सप्तमी	जगति	जगतोः	जगत्सु
सम्बोधन	हे जगत्	हे जगती	हे जगन्ति

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नामन् (नाम)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नाम	नामनी, नाम्नी	नामानि
द्वितीया	नाम	नामनी, नाम्नी	नामानि
तृतीया	नाम्ना	नामभ्याम्	नामभिः
चतुर्थी	नाम्ने	नामभ्याम्	नामभ्यः
पञ्चमी	नाम्नः	नामभ्याम्	नामभ्यः
षष्ठी	नाम्नः	नाम्नोः	नाम्नाम्
सप्तमी	नाम्नि	नाम्नोः	नामसु
सम्बोधन	हे नामन्	हे नामनी	हे नामानि

सर्वनाम

जो शब्द संज्ञाओं के स्थान पर प्रयुक्त होते हैं उन्हें सर्वनाम कहते हैं। यथा,—रामः गतः, परं तस्य पुस्तकानि अत्रैव वर्तन्ते—राम चला गया, किन्तु उसकी पुस्तकें यहीं पड़ी हैं। इस वाक्य में 'राम' संज्ञावाचक है, पुनः राम के लिए ही 'तस्य' का प्रयोग हुआ है, यह 'तस्य' सर्वनाम है। संस्कृत में ३५ सर्वनाम शब्द[1] हैं जो 'सर्व' से आरम्भ होते हैं। सर्वनाम के रूप तीनों लिङ्गों में होते हैं।

यहाँ हम पाठ्यक्रम में निर्धारित सर्वनाम शब्दों के रूप प्रस्तुत करते हैं—

पुल्लिङ्ग

मूल विभक्तियों में कुछ परिवर्तन होकर उनके ये रूप सर्वनाम पुंल्लिङ्ग शब्दों के लिए बन जाते हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्	औ	इ
द्वितीया	म्	औ	न्

१. पैंतीस सर्वनाम शब्द—सर्व (सब) विश्व (सब), उभ, उभय (दोनों), कतर, (दोनों में से कौन), कतम (बहुतों में से कौन), अन्य (दूसरा), अन्यतर (दोनों में से एक), इतर (दूसरा), त्वत् (दूसरा), त्व (दूसरा) नेम (आधा), सम (सब), सिम (सारा), पूर्व (पूर्वदिशावाचक, पहला) पर (अगला) अवर (पश्चिम दिशावाचक, पहला), दक्षिण (दक्षिण दशावाचक, दायाँ), उत्तर (उत्तर दिशावाचक, बायाँ), अपर (दूसरा), अधर (निचला), स्व (अपना), अन्तर् (भीतर) वहिर् (बाहर), स्य (वह), तद् (वह), यद् (जो), एतद् (यह), इदम् (यह), अदस् (वह), एक (एक), द्वि (दो), युष्मद् (तुम), अस्मद् (हम), भवद् (आप), किम् (क्या)।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तृतीया	इन	भ्याम्	ऐस्
चतुर्थी	स्मै	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	स्मात्	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	स्य	ओस्	इषाम्
सप्तमी	स्मिन्	ओस्	षु

स्त्रीलिङ्ग में निम्न बिभक्तियाँ लगती हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	०	इ	अस्
द्वितीया	म्	इ	अस्
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	स्यै	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	स्यास्	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	स्यास्	ओस्	आम्
सप्तमी	स्याम्	ओस्	सु

नपुंसकलिङ्ग में निम्न विभक्तियाँ लगती हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	०	इ	आनि
द्वितीया	०	इ	आनि

शेष पुंल्लिङ्ग के समान

पुल्लिङ्ग (सर्व)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
द्वितीया	सर्वम्	सर्वौ	सर्वान्
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	तर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

स्त्रीलिङ्ग (सर्वा)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वितीया	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तृतीया	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
चतुर्थी	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
षष्ठी	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
सप्तमी	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वितीया	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

पुंल्लिङ्ग (यत्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	यः	यौ	ये
द्वितीया	यम्	यौ	यान्
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पञ्चमी	यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययोः	येषु

स्त्रीलिङ्ग (यत्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	या	ये	याः
द्वितीया	याम्	ये	याः
तृतीया	यया	याभ्याम्	याभिः
चतुर्थी	यस्यै	याभ्याम्	याभ्यः
पञ्चमी	यस्याः	याभ्याम्	याभ्यः
षष्ठी	यस्याः	ययोः	यासाम्
सप्तमी	यस्याम्	ययोः	यासु

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नपुंसकलिङ्ग (यत्)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा	यत्	ये	यानि
द्वितीया	यत्	ये	यानि

शेष पुंल्लिङ्ग के समान

पुंल्लिङ्ग (तत्)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा	सः	तौ	ते
द्वितीया	तम्	तौ	तान्
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पञ्चमी	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	तयोः	तेषु

स्त्रीलिङ्ग (तत्)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा	सा	ते	ताः
द्वितीया	ताम्	ते	ताः
तृतीया	तया	ताभ्याम्	ताभिः
चतुर्थी	तस्यै	ताभ्याम्	ताभ्यः
पञ्चमी	तस्याः	ताभ्याम्	ताभ्यः
षष्ठी	तस्याः	तयोः	तासाम्
सप्तमी	तस्याम्	तयोः	तासु

नपुंसकलिङ्ग (तत्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	तत्	ते	तानि
द्वितीया	तत्	ते	तानि

शेष पुंल्लिङ्ग के समान

पुंल्लिङ्ग (एतत्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुकचन
प्रथमा	एषः	एतौ	एते
द्वितीया	एतम्, एनम्	एतौ	एतान्, एनान्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तृतीया	एतेन, एनेन	एताभ्याम्	एतैः
चतुर्थी	एतस्मै	एताभ्याम्	एतेभ्यः
पञ्चमी	एतस्मात्	एताभ्याम्	एतेभ्यः
षष्ठी	एतस्य	एतयोः-एनयोः	एतेषाम्
सप्तमी	एतस्मिन्	एतयोः-एनयोः	एतेषु

स्त्रीलिङ्ग (एतत्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	एषा	एते	एताः
द्वितीया	एताम्, एनाम्	एते, एने	एताः, एनाः
तृतीया	एतया, एनया	एताभ्याम्	एताभिः
चतुर्थी	एतस्यै	एताभ्याम्	एताभ्यः
पञ्चमी	एतस्याः	एताभ्याम्	एताभ्यः
षष्ठी	एतस्याः	एतयोः, एनयोः	एतासाम्
सप्तमी	एतस्याम्	एतयोः, एनयोः	एतासु

नपुंसकलिङ्ग (एतत्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	एतत्	एते	एतानि
द्वितीया	एतत्	एते	एतानि

शेष पुंलिङ्ग के साथ

पुंलिङ्ग (किम्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	कः	कौ	के
द्वितीया	कम्	कौ	कान्
तृतीया	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पञ्चमी	कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी	कस्मिन्	कयोः	केषु

स्त्रीलिङ्ग (किम्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	का	के	काः
द्वितीया	काम्	के	काः
तृतीया	कया	काभ्याम्	काभिः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चतुर्थी	कस्यै	काभ्याम्	काभ्यः
पञ्चमी	कस्याः	काभ्याम्	काभ्यः
षष्ठी	कस्याः	कयोः	कासाम्
सप्तमी	कस्याम्	कयोः	कासु

नपुंसकलिङ्ग (किम्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	किम्	के	कानि
द्वितीया	किम्	के	कानि

शेष पुंल्लिङ्ग के समान

अस्मद्[1] (हम)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया	माम्, मा	आवाम्,	अस्मान्, नः
तृतीया	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
चतुर्थी	मह्यम्, मे	आवाभ्याम्, नौ	अस्मभ्यम्, नः
पञ्चमी	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी	मम, मे	आवयोः, नौ	अस्माकम्, नः
सप्तमी	मयि	आवयोः	अस्मासु

युष्मद्[2] (तुम)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वितीया	त्वाम्, त्वा	युवाम्, वाम्	युष्मान्, वः
तृतीया	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
चतुर्थी	तुभ्यम्, ते	युवाभ्याम्, वाम्	युष्मभ्यम्, वः
पञ्चमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी	तव, ते	युवयोः, वाम्	युष्माकम्, वः
सप्तमी	त्वयि	युवयोः,	युष्मासु

अस्मद् शब्द के मा, नौ, नः, मे, नौ, नः, मे नौ, नः तथा युष्मद् शब्द के त्वा, वाम्, वः, ते, वाम्, वः ते, वाम्, वः—वैकल्पिक रूपों का प्रयोग सर्वत्र नहीं होता। वाक्य के आरम्भ में, पद्य के चरण के आदि में तथा च, वा, ह,

१. अस्मद् शब्द के रूप तीनों लिङ्गों में एक समान रहते हैं।

२. युष्मद् शब्द के रूप सभी लिङ्गों में एक समान होते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हा, अह, एव—इन अव्ययों के ठीक पूर्व तथा सम्बोधन शब्द के ठीक बाद इनका प्रयोग नहीं किया जाता है।

क्रिया रूप

क्रियाशब्दों के मूल रूप को धातु कहते हैं। धातु के आगे प्रत्यय लगाकर क्रियापद बनते हैं। धातुओं से क्रियापद बनाने के लिए जो प्रत्यय लगाए जाते हैं, उन्हें तिङ् प्रत्यय कहते हैं क्योंकि वे 'ति' से 'ङ्' तक होते हैं।

धातुओं को समानता के आधार पर दस गणों में विभक्त किया जाता है। प्रत्येक गण का नाम उस गण के पहली धातु से रखा गया है। जैसे—भ्वादि (भू+आदि) गण के धातुओं की पहली धातु भू है और इस गण के समस्त धातुओं के रूप 'भू' के समान हैं।

१. भ्वादि (भू आदि) गण
२. अदादि (अद् आदि) गण
३. जुहोत्यादि (जुहोति (हु) आदि) गण
४ दिवादि (दिव्-आदि) गण
५. स्वादि (सु आदि) गण
६. तुदादि (तुद् आदि) गण
७. रुधादि (रुध् आदि) गण
८. तनादि (तन्-आदि) गण
९. क्र्यादि (क्री-आदि) गण
१०. चुरादि (चुर्) आदि गण

क्रिया का पूर्ण ज्ञान कराने के लिये भिन्न-भिन्न कालों के लिये उनके भिन्न-भिन्न रूप बनते हैं। इन कालों को व्याकरण प्रक्रिया में लकार कहते हैं।

लकार[1] दस हैं, इनमें प्रधान पाँच हैं। यहाँ पर केवल पांच लकारों के प्रयोग दर्शायेंगे क्योंकि प्रारम्भिक ज्ञान के लिए इनका ज्ञान आवश्यक है।

क्रिया को करने वाले (पुरुष) तीन प्रकार के होते हैं। क्रिया करने वाला स्वयं होता है अथवा जो कर्ता के सामने हो अथवा न वह स्वयं हो और न कोई सामने खड़ा हो। इन तीन कर्त्ताओं के अनुसार धातु के आगे जो लकार जोड़े जाते हैं उसके तीन पुरुष होते हैं—१. प्रथम पुरुष, २. मध्यम पुरुष, ३. उत्तम पुरुष।

---

१. दस लकार—लट्, लिट्, लुट्, लेट् लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ्। इनमें लेट् का प्रयोग वेद में ही होता है। लिङ् के दो भेद होते हैं—१. विधिलिङ्, २.आशीर्लिङ्।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्रथम पुरुष—वह होता है, जो स्वयं न हो और न कोई सामने खड़ा हुआ पुरुष हो अर्थात् कोई अन्य हो। इसलिए प्रथम पुरुष को अन्य पुरुष भी कहते हैं। जैसे—सः गच्छति=वह जाता है। रामः गच्छति=राम जाता है।

मध्यम पुरुष—उसके लिए आता है जो सामने खड़ा हो। जैसे—त्वं पश्यसि=तू देखता है, यूयं वदथ=तुम बोलते हो।

उत्तम पुरुष—अपने लिए प्रयुक्त होता है। जैसे—अहं गच्छामि=मैं जाता हूँ। वयं गच्छामः=हम जाते हैं।

प्रत्येक पुरुष के तीन वचन हैं—एकवचन, द्विवचन और बहुवचन। एक के लिए एकवचन, दो के लिए द्विवचन और दो से अधिक के लिए बहुवचन आता है।

धातु तीन प्रकार की हैं—परस्मैपदी, आत्मनेपदी और उभयपदी (परस्मैपदी और आत्मनेपदी दोनों में) परस्मैपदी धातुओं के लिए अलग विभक्तियां हैं और आत्मनेपदी धातुओं के लिए अलग।

यहाँ हम लट्, लृट्, लोट्, लङ् और लिङ् लकारों में परस्मैपदी के प्रत्यय दिखाते हैं—

१. लट् लकार—वर्तमान काल का बोध कराने के लिए लट् लकार का प्रयोग होता है।

परस्मैपद के प्रत्यय[1]

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ति	तः	अन्ति
मध्यम पुरुष	सि	थः	थ
उत्तम पुरुष	मि	वः	मः

२. लृट् लकार—भविष्यत् काल का बोध कराने के लिए लृट् लकार का प्रयोग होता है।

प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्यति	स्यतः	स्यन्ति

१. यहाँ जो परस्मैपद के प्रत्यय दिखाये जाते हैं वे मूल प्रत्ययों के कुछ विकृत रूप हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मध्यम पुरुष	स्यसि	स्यथः	स्यथ
उत्तम पुरुष	स्यामि	स्यावः	स्यामः

३. लोट् लकार—आज्ञा के लिए और आशीर्वाद अर्थ में लोट् लकार का प्रयोग होता है—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तु	ताम्	अन्तु
मध्यम पुरुष	हि	तम्	त
उत्तम पुरुष	आनि	आव	आम

४. लङ् लकार—भूतकाल का बोध कराने के लिए लङ् लकार का प्रयोग होता है।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	त्	ताम्	अन्
मध्यम पुरुष	स् (:)	तम्	त
उत्तम पुरुष	अम्	व	म

५. लिङ् लकार—विधि (आज्ञा देना) और आशीर्वाद अर्थ में लिङ् लकार का प्रयोग होता है।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	इत्	इताम्	इयुः
मध्यम पुरुष	इः	इतम्	इत
उत्तम पुरुष	इयम्	इव	इम

गण विकरण—प्रत्येक गण की धातु के लिए एक चिह्न होता है, जिसे विकरण कहते हैं। यह विकरण धातु और विभक्ति के बीच में लगता है और लट्, लोट् विधिलिङ् और लङ् लकारों में ही आता है और लृट्, लिट् आदि दूसरे लकारों में नहीं आता है।

गण	विकरण	गण	विकरण
१. भ्वादि	अ	२. अदादि	०
३. जुहोत्यादि	०	४. दिवादि	य
५. स्वादि	नु	६. तुदादि	अ
७. रुधादि	न	८. तनादि	उ
९. क्र्यादि	ना	१०. चुरादि	अय

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अब हम पाठ्यक्रम में निर्धारित परस्मैपदी धातुओं के विभिन्न लकारों में प्रयोग दर्शाते हैं—

भ्वादिगण[1] (परस्मैपद)

वद् (बोलना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वदति (वह बोलता है)	वदतः (वे दो बोलते हैं)	वदन्ति (वे सब बोलते हैं)
मध्यम पुरुष	वदसि (तू बोलता है)	वदथः (तुम दो बोलते हो)	वदथ (तुम सब बोलते हो)
उत्तम पुरुष	वदामि (मैं बोलता हूं)	वदावः (हम दो बोलते हैं)	वदामः (हम सब बोलते हैं)

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वदिष्यति (वह बोलेगा)	वदिष्यतः (वे दो बोलेगें)	वदिष्यन्ति (वे सब बोलेंगे)
मध्यम पुरुष	वदिष्यसि (तू बोलेगा)	वदिष्यथः (तुम दोनों बोलोगे)	वदिष्यथ (तुम सब बोलोगे)
उत्तम पुरुष	वदिष्यामि (मैं बोलूंगा)	वदिष्यावः (हम दो बोलेंगे)	वदिष्यामः (हम सब बोलेंगे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वदतु (वह बोले)	वदताम् (वे दो बोलें)	वदन्तु (वे सब बोलें)
मध्यम पुरुष	वद (तू बोले)	वदतम् (तुम दो बोलो)	वदत (तुम सब बोलो)
उत्तम पुरुष	वदानि (मैं बोलूं)	वदाव (हम दो बोलें)	वदाम (हम सब बोलें)

१. भ्वादिगण में धातु, और प्रत्यय के मध्य 'अ' विकरण लगता है—
भू+अ+ति=भवति ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लङ् लकार

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अवदत् (वह बोला)	अवदताम् (वे दो बोले)	अवदन् (वे सब बोले)
मध्यम पुरुष	अवदः (तू बोला)	अवदतम् (तुम दो बोले)	अवदत (तुम सब बोले)
उत्तम पुरुष	अवदम् (मैं बोला)	अवदाव (हम दो बोलें)	अवदाम (हम सब बोलें

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वदेत् (वह बोले)	वदेताम् (वे दो बोलें)	वदेयुः (वे सब बोलें
मध्यम पुरुष	वदेः (तू बोले)	वदेतम् (तुम दो बोलो)	वदेत (तुम सब बोलें
उत्तम तुरुष	वदेयम् (मैं बोलूँ)	वदेव (हम दो बोलें)	वदेम (हम सब बोलें)

दृश् (पश्य) (देखना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पश्यति	पश्यतः	पश्यन्ति
मध्यम पुरुष	पश्यसि	पश्यथः	पश्यथ
उत्तम पुरुष	पश्यामि	पश्यावः	पश्यामः

लृट्

प्रथम पुरुष	द्रक्ष्यति	द्रक्ष्यतः	द्रक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	द्रक्ष्यसि	द्रक्ष्यथः	द्रक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	द्रक्ष्यामि	द्रक्ष्यावः	द्रक्ष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	पश्यतु	पश्यताम्	पश्यन्तु
मध्यम पुरुष	पश्य	पश्यतम्	पश्यत
उत्तम पुरुष	पश्यानि	पश्याव	पश्याम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लङ्

प्रथम पुरुष	अपश्यत्	अपश्यताम्	अपश्यन्
मध्यम पुरुष	अपश्यः	अपश्यतम्	अपश्यत
उत्तम पुरुप	अपश्यम्	अपश्याव	अपश्याम

विधि लिङ्

प्रथम पुरुष	पश्येत्	पश्येताम्	पश्येयुः
मध्यम पुरुष	पश्येः	पश्येतम्	पश्येत
उत्तम पुरुष	पश्येयम्	पश्येव	पश्येम

हस् (हँसना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	हसति	हसतः	हसन्ति
मध्यम पुरुष	हससि	हसथः	हसथ
उत्तम पुरुष	हसामि	हसावः	हसामः

लृट्

प्रथम पुरुष	हसिष्यति	हसिष्यतः	हसिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	हसिष्यसि	हसिष्यथः	हसिष्यथ
उत्तम पुरुष	हसिष्यामि	हसिष्यावः	हसिष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	हसतु	हसताम्	हसन्तु
मध्यम पुरुष	हस	हसतम्	हसत
उत्तम पुरुष	हसानि	हसाव	हसाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अहसत्	अहसताम्	अहसन्
मध्यम पुरुष	अहसः	अहसतम्	अहसत
उत्तम पुरुष	अहसम्	अहसाव	अहसाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	हसेत्	हसेताम्	हसेयुः
मध्यम पुरुष	हसेः	हसेतम्	हसेत
उत्तम पुरुष	हसेयम्	हसेव	हसेम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पा (पिब्) (पीना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पिबति	पिबतः	पिबन्ति
मध्यम पुरुष	पिबसि	पिबथः	पिबथ
उत्तम पुरुष	पिबामि	पिबावः	पिबामः

लृट्

प्रथम पुरुष	पास्यति	पास्यतः	पास्यन्ति
मध्यम पुरुष	पास्यसि	पास्यथः	पास्यथ
उत्तम पुरुष	पास्यामि	पास्यावः	पास्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	पिबतु	पिबताम्	पिबन्तु
मध्यम पुरुष	पिब	पिबतम्	पिबत
उत्तम पुरुष	पिबानि	पिबाव	पिबाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अपिबत्	अपिबताम्	अपिबन्
मध्यम पुरुष	अपिबः	अपिबतम्	अपिबत
उत्तम पुरुष	अपिबम्	अपिबाव	अपिबाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	पिबेत्	पिबेताम्	पिबेयुः
मध्यम पुरुष	पिबेः	पिबेतम्	पिबेत
उत्तम पुरुष	पिबेयम्	पिबेव	पिबेम

खाद् (खाना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	खादति	खादतः	खादन्ति
मध्यम पुरुष	खादसि	खादथः	खादथ
उत्तम पुरुष	खादामि	खादावः	खादामः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लृट्

प्रथमपुरुष	खादिष्यति	खादिष्यतः	खादिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	खादिष्यसि	खादिष्यथः	खादिष्यथ
उत्तम पुरुष	खादिष्यामि	खादिष्यावः	खादिष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	खादतु	खादताम्	खादन्तु
मध्यम पुरुष	खाद	खादतम्	खादत
उत्तम पुरुष	खादानि	खादाव	खादाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अखादत्	अखादताम्	अखादन्
मध्यम पुरुष	अखादः	अखादतम्	अखादत
उत्तम पुरुष	अखादम्	अखादाव	अखादाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	खादेत्	खादेताम्	खादेयुः
मध्यम पुरुष	खादेः	खादेतम्	खादेत
उत्तम पुरुष	खादेयम्	खादेव	खादेम

जि (जय्) जीतना

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जयति	जयतः	जयन्ति
मध्यम पुरुष	जयसि	जयथः	जयथ
उत्तम पुरुष	जयामि	जयावः	जयामः

लृट्

प्रथम पुरुष	जेष्यति	जेष्यतः	जेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	जेष्यसि	जेष्यथः	जेष्यथ
उत्तम पुरुष	जेष्यामि	जेष्यावः	जेष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	जयतु	जयताम्	जयन्तु
मध्यम पुरुष	जय	जयतम्	जयत
उत्तम पुरुष	जयानि	जयाव	जयाम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लङ्

प्रथम पुरुष	अजयत्	अजयताम्	अजयन्
मध्यम पुरुष	अजयः	अजयतम्	अजयत
उत्तम पुरुष	अजयम्	अजयाव	अजयाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	जयेत्	जयेताम्	जयेयुः
मध्यम पुरुष	जयेः	जयेतम्	जयेत
उत्तम पुरुष	जयेयम्	जयेव	जयेम

नी (नय्) (ले जाना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयति	नयतः	नयन्ति
मध्यम पुरुष	नयसि	नयथः	नयथ
उत्तम पुरुष	नयामि	नयावः	नयामः

लृट्

प्रथम पुरुष	नेष्यति	नेष्यतः	नेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	नेष्यसि	नेष्यथः	नेष्यथ
उत्तम पुरुष	नेष्यामि	नेष्यावः	नेष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	नयतु	नयताम्	नयन्तु
मध्यम पुरुष	नय	नयतम्	नयत
उत्तम पुरुष	नयानि	नयाव	नयाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अनयत्	अनयताम्	अनयन्
मध्यम पुरुष	अनयः	अनयतम्	अनयत
उत्तम पुरुष	अनयम्	अनयाव	अनयाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	नयेत्	नयेताम्	नयेयुः
मध्यम पुरुष	नयेः	नयेतम्	नयेत
उत्तम पुरुष	नयेयम्	नयेव	नयेम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अदादिगण (परस्मैपद)

अदादि धातुओं के परस्मैपद में लट्, लृट्, लोट् और लङ् लकार की विभक्तियों के रूप प्रायः वही रहते हैं जो भ्वादिगण की धातुओं के परस्मैपद में होते हैं । किन्तु कुछ परिवर्तन होते हैं, यथा—

१. लोट् लकार का मध्यम पुरुष एकवचन 'हि' होता है ।

२. लङ् लकार के प्रथम पुरुष बहुवचन में 'अन्' के स्थान पर कहीं-कहीं 'उस्' हो जाता है ।

३. विधिलिङ् की विभक्तियाँ बिलकुल भिन्न हैं—

प्रथम पुरुष	यात्	याताम्	युः
मध्यम पुरुष	याः	यातम्	यात
उत्तम पुरुष	याम्	याव	याम

ब्रू (बोलना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ब्रवीति	ब्रूतः	ब्रुवन्ति
मध्यम पुरुष	ब्रवीषि	ब्रूथः	ब्रूथ
उत्तम पुरुष	ब्रवीमि	ब्रूवः	ब्रूमः

लृट्

प्रथम पुरुष	वक्ष्यति	वक्ष्यतः	वक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	वक्ष्यसि	वक्ष्यथः	वक्ष्यथः
उत्तम पुरुष	वक्ष्यामि	वक्ष्यावः	वक्ष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	ब्रवीतु	ब्रूताम्	ब्रुवन्तु
मध्यम पुरुष	ब्रूहि	ब्रूतम्	ब्रूत
उत्तम पुरुष	ब्रवाणि	ब्रवाव	ब्रवाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अब्रवीत्	अब्रूताम्	अब्रूवन्
मध्यम पुरुष	अब्रवीः	अब्रूतम	अब्रूत
उत्तम पुरुष	अब्रवम्	अब्रूव	अब्रूम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	ब्रूयात्	ब्रूयाताम्	ब्रूयुः
मध्यम पुरुष	ब्रूयाः	ब्रूयातम्	ब्रूयात
उत्तम पुरुष	ब्रूयाम्	ब्रूयाव	ब्रूयाम

अस् (होना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अस्ति	स्तः	सन्ति
मध्यम पुरुष	असि	स्थः	स्थ
उत्तम पुरुष	अस्मि	स्वः	स्मः

लृट्

प्रथम पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पुरुष	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	अस्तु	स्ताम्	सन्तु
मध्यम पुरुष	एधि	स्तम्	स्त
उत्तम पुरुष	असानि	असाव	असाम

लङ्

प्रथम पुरुष	आसीत्	आस्ताम्	आसन्
मध्यम पुरुष	आसीः	आस्तम्	आस्त
उत्तम पुरुष	आसम्	आस्व	आस्म

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	स्यात्	स्याताम्	स्युः
मध्यम पुरुष	स्याः	स्यातम्	स्यात
उत्तम पुरुष	स्याम्	स्याव	स्याम

हन्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	हन्ति	हतः	घ्नन्ति
मध्यम पुरुष	हंसि	हथः	हथ
उत्तम पुरुष	हन्मि	हन्वः	हन्मः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लृट्

प्रथम पुरुष	हनिष्यति	हनिष्यतः	हनिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	हनिष्यसि	हनिष्यथः	हनिष्यथ
उत्तम पुरुष	हनिष्यामि	हनिष्यावः	हनिष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	हन्तु	हताम्	घ्नन्तु
मध्यम पुरुष	जहि	हतम्	हत
उत्तम पुरुष	हनानि	हनाव	हनाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अहन्	अहताम्	अघ्नन्
मध्यम पुरुष	अहन्	अहतम्	अहत
उत्तम पुरुष	अहनम्	अहन्व	अहन्म

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	हन्यात्	हन्याताम्	हन्युः
मध्यम पुरुष	हन्याः	हन्यातम्	हन्यात
उत्तम पुरुष	हन्याम्	हन्याव	हन्याम

जुहोत्यादिगण (परस्मैपद)

जुहोत्यादि गण की धातुओं के आगे कोई विकरण नहीं आता। धातु के आगे विभक्ति आने से पूर्व धातु के पहले व्यञ्जन और उसके साथ के स्वर को द्वित्व हो जाता है। द्वित्व के पहले भाग को अभ्यास कहते हैं। जैसे- दा+दा=दादा। अभ्यास के दीर्घ स्वर को ह्रस्व हो जाता है--ददा

जुहोत्यादि गण में अन्ति और अन्तु के स्थान पर अति और अतु, तथा अन् की जगह उस् हो जाता है। उससे पूर्व आकारान्त धातुओं के 'आ' का लोप हो जाता है। यथा—ददा+उस्=अददा+उस्=अददुः।

दा[1] देना

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददाति	दत्तः	ददति

---

१. भ्वादिगण में दा धातु, का रूप 'यच्छ्
यच्छति, यच्छतः यच्छन्ति—इस प्रकार चलते हैं। लृट् लकार में दास्यति, दास्यतः, दास्यन्ति, इस प्रकार चलते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मध्यम पुरुष	ददासि	दत्थः	दत्थ
उत्तम पुरुष	ददामि	दद्वः	दद्मः

लृट्

पथम पुरुष	दास्यति	दास्यतः	दास्यन्ति
मध्यम पुरुष	दास्यसि	दास्यथः	दास्यथ
उत्तम पुरुष	दास्यामि	दास्यावः	दास्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	ददातु	दत्ताम्	ददतु
मध्यम पुरुष	देहि	दत्तम्	दत्त
उत्तम पुरुष	ददानि	ददाव	ददाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अददात्	अदत्ताम्	अददुः
मध्यम पुरुष	अददः	अदत्तम्	अदत्त
उत्तम पुरुष	अददाम्	अदद्व	अदद्म

विधिलिङ्

प्रथमपुरुष	दद्यात्	दद्याताम्	दद्युः
मध्यम पुरुष	दद्याः	दद्यातम्	दद्यात
उत्तम पुरुष	दद्याम्	दद्याव	दद्याम

दिवादिगण (परस्मैपद)

दिवादिगण की धातुओं का विकरण 'य' है। दिव+ति=दीव्+य+ति=दीव्यति।

दिव् (दीव्, चमकना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दीव्यति	दीव्यतः	दीव्यन्ति
मध्यम पुरुष	दीव्यसि	दीव्यथः	दीव्यथ
उत्तम पुरुष	दीव्यामि	दीव्यावः	दीव्यामः

लृट्

प्रथम पुरुष	देविष्यति	देविष्यतः	देविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	देविष्यसि	देविष्यथः	देविष्यथ
उत्तम पुरुष	देविष्यामि	देविष्यावः	देविष्यामः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लोट्

प्रथम पुरुष	दीव्यतु	दीव्यताम्	दीव्यन्तु
मध्यम पुरुष	दीव्य	दीव्यतम्	दीव्यत
उत्तम पुरुष	दीव्यानि	दीव्याव	दीव्याम

लङ्

प्रथम पुरुष	अदीव्यत्	अदीव्यताम्	अदीव्यन्
मध्यम पुरुष	अदीव्यः	अदीव्यतम्	अदीव्यत
उत्तम पुरुष	अदीव्यम्	अदीव्याव	अदीव्याम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	दीव्येत्	दीव्येताम्	दीव्येयुः
मध्यम पुरुष	दीव्येः	दीव्येतम्	दीव्येत
उत्तम पुरुष	दीव्येयम्	दीव्येव	दीव्येम

नृत् (नाचना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नृत्यति	नृत्यतः	नृत्यन्ति
मध्यम पुरुष	नृत्यसि	नृत्यथः	नृत्यथ
उत्तम पुरुष	नृत्यामि	नृत्यावः	नृत्यामः

लृट्

प्रथम पुरुष	नर्तिष्यति-नर्त्स्यति	नर्तिष्यतः-नर्त्स्यतः	नर्तिष्यन्ति-नर्त्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	नर्तिष्यसि-नर्त्स्यसि	नर्तिष्यथः-नर्त्स्यथः	नर्तिष्यथ-नर्त्स्यथ
उत्तम पुरुष	नर्तिष्यामि-नर्त्स्यामि	नर्तिष्यावः-नर्त्स्यावः	नर्तिष्यामः-नर्त्स्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	नृत्यतु	नृत्यताम्	नृत्यन्तु
मध्यम पुरुष	नृत्य	नृत्यतम्	नृत्यत
उत्तम पुरुष	नृत्यानि	नृत्याव	नृत्याम

लङ्

प्रथम पुरुष	अनृत्यत्	अनृत्यताम्	अनृत्यन्
मध्यम पुरुष	अनृत्यः	अनृत्यतम्	अनृत्यत
उत्तम पुरुष	अनृत्यम्	अनृत्याव	अनृत्याम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्वादिगण (परस्मैपद)

स्वादिगण का विकरण 'नु' है। जैसे चि+नु+ति=चिनोति। अजन्त धातु होने पर विभक्ति के व् या म् से पूर्व नु के 'उ' का विकल्प से लोप होकर 'न्' रह जाता है। दूसरे पक्ष में 'नु' ही रहता है। जैसे—चि+नु+व:=चिन्व: चिनुव:।

हलन्त धातु होने पर अजादि विभक्ति से पूर्व 'नु' को नुव् हो जाता है। जैसे—आप्+नु+अन्ति=आप्नुवन्ति।

अजन्त धातुओं से परे हि का लोप हो जाता है। जैसे—चि+नु+हि=चिनु।

चि (चुनना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चिनोति	चिनुत:	चिन्वन्ति
मध्यम पुरुष	चिनोषि	चिनुथ:	चिनुथ
उत्तम पुरुष	चिनोमि	चिनुव:-चिन्व:	चिनुम:-चिन्म:

लृट्

प्रथम पुरुष	चेष्यति	चेष्यत:	चेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	चेष्यसि	चेष्यथ:	चेष्यथ
उत्तम पुरुष	चेष्यामि	चेष्याव:	चेष्याम:

लोट्

प्रथम पुरुष	चिनोतु	चिनुताम्	चिन्वन्तु
मध्यम पुरुष	चिनु	चिनुतम्	चिनुत
उत्तम पुरुष	चिनवानि	चिनवाव	चिनवाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अचिनोत्	अचिनुताम्	अचिन्वन्
मध्यम पुरुष	अचिनो:	अचिनुतम्	अचिनुत
उत्तम पुरुष	अचिनवम्	अचिनुव-अचिन्व	अचिनुम-अचिन्म

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	चिनुयात्	चिनुयाताम्	चिनुयुः
मध्यम पुरुष	चिनुयाः	चिनुयातम्	चिनुयात
उत्तम पुरुष	चिनुयाम्	चिनुयाव	चिनुयाम

तुदादिगण (परस्मैपद)

तुदादिगण की धातुओं का विकरण 'अ' है। भ्वादिगण का भी विकरण 'अ' है। किन्तु दोनों में यह भेद है कि तुदादिगण के विकरण से पूर्व गुण नहीं होता।

मुच् (मुञ्च् छोड़ना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	मुञ्चति	मुञ्चतः	मुञ्चन्ति
मध्यम पुरुष	मुञ्चसि	मुञ्चथः	मुञ्चथ
उत्तम पुरुष	मुञ्चामि	मुञ्चावः	मुञ्चामः

लृट्

प्रथम पुरुष	मोक्ष्यति	मोक्ष्यतः	मोक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	मोक्ष्यसि	मोक्ष्यथः	मोक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	मोक्ष्यामि	मोक्ष्यावः	मोक्ष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	मुञ्चतु	मुञ्चताम्	मुञ्चन्तु
मध्यम पुरुष	मुञ्च	मुञ्चतम्	मुञ्चत
उत्तम पुरुष	मुञ्चानि	मुञ्चाव	मुञ्चाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अमुञ्चत्	अमुञ्चताम्	अमुञ्चन्
मध्यम पुरुष	अमुञ्चः	अमुञ्चतम्	अमुञ्चत
उत्तम पुरुष	अमुञ्चम्	अमुञ्चाव	अमुञ्चाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	मुञ्चेत्	मुञ्चेताम्	मुञ्चेयुः
मध्यम पुरुष	मुञ्चेः	मुञ्चेतम्	मुञ्चेत
उत्तम पुरुष	मुञ्चेयम्	मुञ्चेव	मुञ्चेम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विद् (विन्द्, पाना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	विन्दति	विन्दतः	विन्दन्ति
मध्यम पुरुष	विन्दसि	विन्दथः	विन्दथ
उत्तम पुरुष	विन्दामि	विन्दावः	विन्दामः

लृट्

प्रथम पुरुष	वेदिष्यति-वेत्स्यति	वेदिष्यतः-वेत्स्यतः	वेदिष्यन्ति-वेत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	वेदिष्यसि-वेत्स्यसि	वेत्स्यथः-वेत्स्यथः	वेदिष्यथ-वेत्स्यथ
उत्तम पुरुष	वेदिष्यामि-वेत्स्यामि	वेदिष्यावः-वेत्स्यावः	वेदिष्यामः-वेत्स्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	विन्दतु	विन्दताम्	विन्दन्तु
मध्यम पुरुष	विन्द	विन्दतम्	विन्दत
उत्तम पुरुष	विन्दानि	विन्दाव	विन्दाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अविन्दत्	अविन्दताम्	अविन्दन्
मध्यम पुरुष	अविन्दः	अविन्दतम्	अविन्दत
उत्तम पुरुष	अविन्दम्	अबिन्दाव	अविन्दाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	विन्देत्	विन्देताम्	विन्देयुः
मध्यम पुरुष	विन्देः	विन्देतम्	विन्देत
उत्तम पुरुष	विन्देयम्	विन्देव	विन्देम

सिच् (सिञ्च्, सींचना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सिञ्चति	सिञ्चतः	सिञ्चन्ति
मध्यम पुरुष	सिञ्चसि	सिञ्चथः	सिञ्चथ
उत्तम पुरुष	सिञ्चामि	सिञ्चावः	सिञ्चामः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लृट्

प्रथम पुरुष	सेक्ष्यति	सेक्ष्यतः	सेक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	सेक्ष्यसि	सेक्ष्यथः	सेक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	सेक्ष्यामि	सेक्ष्यावः	सेक्ष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	सिञ्चतु	सिञ्चताम्	सिञ्चन्तु
मध्यम पुरुष	सिञ्च	सिञ्चतम्	सिञ्चत
उत्तम पुरुष	सिञ्चानि	सिञ्चाव	सिञ्चाम

लङ्

प्रथम पुरुष	असिञ्चत्	असिञ्चताम्	असिञ्चन्
मध्यम पुरुष	असिञ्चः	असिञ्चतम्	असिञ्चत
उत्तम पुरुष	असिञ्चम्	असिञ्चाव	असिञ्चाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	सिञ्चेत्	सिञ्चेताम्	सिञ्चेयुः
मध्यम पुरुष	सिञ्चेः	सिञ्चेतम्	सिञ्चेत
उत्तम पुरुष	सिञ्चेयम्	सिञ्चेव	सिञ्चेम

सृज् (उत्पन्न करना, त्यागना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सृजति	सृजतः	सृजन्ति
मध्यम पुरुष	सृजसि	सृजथः	सृजथ
उत्तम पुरुष	सृजामि	सृजावः	सृजामः

लृट्

प्रथम पुरुष	स्रक्ष्यति	स्रक्ष्यतः	स्रक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	स्रक्ष्यसि	स्रक्ष्यथः	स्रक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	स्रक्ष्यामि	स्रक्ष्यावः	स्रक्ष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	सृजतु	सृजताम्	सृजन्तु
मध्यम पुरुष	सृज	सृजतम्	सृजत
उत्तम पुरुष	सृजानि	सृजाव	सृजाम

लङ्

प्रथम पुरुष	असृजत्	असृजताम्	असृजन्
मध्यम पुरुष	असृजः	असृजतम्	असृजत
उत्तम पुरुष	असृजम्	असृजाव	असृजाम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	सृजेत्	सृजेताम्	सृजेयुः
मध्यम पुरुष	सृजेः	सृजेतम्	सृजेत
उत्तम पुरुष	सृजेयम्	सृजेव	सृजेम

रुधादिगण (परस्मैपद)

रुधादिगण की धातुओं का विकरण 'न' है। अन्य गण विकरणों के समान 'न' विकरण धातु के अन्त में नहीं आता। यह धातु के अन्तिम व्यञ्जन से पूर्व जोड़ा जाता है। जैसे—भिद्+ति=भिनद्+ति=भिनत्ति।

भिद् (भेदना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भिनत्ति	भिन्तः	भिन्दन्ति
मध्यम पुरुष	भिनत्सि	भिन्त्थः	भिन्त्थ
उत्तम पुरुष	भिनद्मि	भिन्द्वः	भिन्द्मः

लृट्

प्रथम पुरुष	भेत्स्यति	भेत्स्यतः	भेत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	भेत्स्यसि	भेत्स्यथः	भेत्स्यथ
उत्तम पुरुष	भेत्स्यामि	भेत्स्यावः	भेत्स्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	भिनत्तु	भिन्ताम्	भिन्दन्तु
मध्यम पुरुष	भिन्धि	भिन्तम्	भिन्त
उत्तम पुरुष	भिनदानि	भिनदाव	भिनदाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अभिनत्	अभिन्ताम्	अभिन्दन्
मध्यम पुरुष	अभिनः-अभिनत्	अभिन्तम्	अभिन्त
उत्तम पुरुष	अभिनदम्	अभिन्द्व	अभिन्द्म

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	भिन्द्यात्	भिन्द्याताम्	भिन्द्युः
मध्यम पुरुष	भिन्द्याः	भिन्द्यातम्	भिन्द्यात
उत्तम पुरुष	भिन्द्याम्	भिन्द्याव	भिन्द्याम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

छिद् (काटना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	छिनत्ति	छिन्तः	छिन्दन्ति
मध्यम पुरुष	छिनत्सि	छिन्त्थः	छिन्त्थ
उत्तम पुरुष	छिनद्मि	छिन्द्वः	छिन्द्मः

लृट्

प्रथम पुरुष	छेत्स्यति	छेत्स्यतः	छेत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	छेत्स्यसि	छेत्स्यथः	छेत्स्यथ
उत्तम पुरुष	छेत्स्यामि	छेत्स्यावः	छेत्स्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	छिनत्तु	छिन्ताम्	छिन्दन्तु
मध्यम पुरुष	छिन्द्धि	छिन्त्तम्	छिन्त
उत्तम पुरुष	छिनदानि	छिनदाव	छिनदाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अच्छिदत्	अच्छिदताम्	अच्छिदन्
मध्यम पुरुष	अच्छिदः	अच्छिदतम्	अच्छिदत
उत्तम पुरुष	अच्छिदम्	अच्छिदाव	अच्छिदाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	छिन्द्यात्	छिन्द्याताम्	छिन्द्युः
मध्यम पुरुष	छिन्द्याः	छिन्द्यातम्	छिन्द्यात
उत्तम पुरुष	छिन्द्याम्	छिन्द्याव	छिन्द्याम

तनादिगण परस्मैपद

तनादिगण की धातुओं का विकरण 'उ' है। लोट् लकार मध्यम पुरुष एकवचन के 'हि' प्रत्यय का लोप होता है। तन्+उ+हि=तनु।

कृ (करना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति
मध्यम पुरुष	करोषि	कुरुथः	कुरुथ
उत्तम पुरुष	करोमि	कुर्वः	कुर्मः

लृट्

प्रथम पुरुष	करिष्यति	करिष्यतः	करिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	करिष्यसि	करिष्यथः	करिष्यथ
उत्तम पुरुष	करिष्यामि	करिष्यावः	करिष्यामः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लोट्

प्रथम पुरुष	करोतु	कुरुताम्	कुर्वन्तु
मध्यम पुरुष	कुरु	कुरुतम्	कुरुत
उत्तम पुरुष	करवाणि	करवाव	करवाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अकरोत्	अकुरुताम्	अकुर्वन्
मध्यम पुरुष	अकरोः	अकुरुतम्	अकुरुत
उत्तम पुरुष	अकरवम्	अकुर्व	अकुर्म

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	कुर्यात्	कुर्याताम्	कुर्युः
मध्यम पुरुष	कुर्याः	कुर्यातम्	कुर्यात
उत्तम पुरुष	कुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम

चुरादिगण (परस्मैपद)

चुरादिगण की धातु और लिङ् प्रत्ययों के मध्य 'अय' जोड़ा जाता है। तथा धातु की उपधा के ह्रस्व स्वर (अ के अतिरिक्त) को गुण हो जाता है। जैसे—चुर्+अय+ति=चोर्+अय+ति=चोरयति।

चुर् (चुराना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयति	चोरयतः	चोरयन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयसि	चोरयथः	चोरयथ
उत्तम पुरुष	चोरयामि	चोरयावः	चोरयामः

लृट्

प्रथम पुरुष	चोरयिष्यति	चोरयिष्यतः	चोरयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसि	चोरयिष्यथः	चोरयिष्यथ
उत्तम पुरुष	चोरयिष्यामि	चोरयिष्यावः	चोरयिष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	चोरयतु	चोरयताम्	चोरयन्तु
मध्यम पुरुष	चोरय	चोरयतम्	चोरयत
उत्तम पुरुष	चोरयाणि	चोरयाव	चोरयाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अचोरयत्	अचोरयताम्	अचोरयन्
मध्यम पुरुष	अचोरयः	अचोरयतम्	अचोरयत
उत्तम पुरुष	अचोरयम्	अचोरयाव	अचोरयाम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	चोरयेत्	चोरयेताम्	चोरयेयु:
मध्यम पुरुष	चोरये:	चोरयेतम्	चोरयेत
उत्तम पुरुष	चोरयेयम्	चोरयेव	चोरयेम

कथ् (कहना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कथयति	कथयत:	कथयन्ति
मध्यम पुरुष	कथयसि	कथयथ:	कथयथ
उत्तम पुरुष	कथयामि	कथयाव:	.कथयाम:

लृट्

प्रथम पुरुष	कथयिष्यति	कथयिष्यत:	कथयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	कथयिष्यसि	कथयिष्यथ:	कथयिष्यथ
उत्तम पुरुष	कथयिष्यामि	कथयिष्याव:	कथयिष्याम:

लोट्

प्रथम पुरुष	कथयतु	कथयताम्	कथयन्तु
मध्यम पुरुष	कथय	कथयतम्	कथयत
उत्तम पुरुष	कथयानि	कथयाव	कथयाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अकथयत्	अकथयताम्	अकथयन्
मध्यम पुरुष	अकथय:	अकथयतम्	अकथयत
उत्तम पुरुष	अकथयम्	अकथयाव	अकथयाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	कथयेत्	कथयेताम्	कथयेयु:
मध्यम पुरुष	कथये:	कथयेतम्	कथयेत
उत्तम पुरुष	कथयेयम्	कथयेव	कथयेम

गण् (गिनना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गणयति	गणयत:	गणयन्ति
मध्यम पुरुष	गणयसि	गणयथ:	गणयथ
उत्तम पुरुष	गणयामि	गणयाव:	गणयाम:

लृट्

प्रथम पुरुष	गणयिष्यति	गणयिष्यत:	गणयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	गणयिष्यसि	गणयिष्यथ:	गणयिष्यथ
उत्तम पुरुष	गणयिष्यामि	गणयिष्याव:	गणयिष्याम:

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लोट्

प्रथम पुरुष	गणयतु	गणयताम्	गणयन्तु
मध्यम पुरुष	गणय	गणयतम्	गणयत
उत्तम पुरुष	गणयानि	गणयाव	गणयाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अगणयत्	अगणयताम्	अगणयन्
मध्यम पुरुष	अगणयः	अगणयतम्	अगणयत
उत्तम पुरुष	अगणयम्	अगणयाव	अगणयाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	गणयेत्	गणयेताम्	गणयेयुः
मध्यम पुरुष	गणयेः	गणयेतम्	गणयेत
उत्तम पुरुष	गणयेयम्	गणयेव	गणयेम

भक्ष् (खाना)

लट्

प्रथम पुरुष	भक्षयति	भक्षयतः	भक्षयन्ति
मध्यम पुरुष	भक्षयसि	भक्षयथः	भक्षयथ
उत्तम पुरुष	भक्षयामि	भक्षयावः	भक्षयागः

लृट्

प्रथम पुरुष	भक्षयिष्यति	भक्षयिष्यतः	भक्षयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भक्षयिष्यसि	भक्षयिष्यथः	भक्षयिष्यथ
उत्तम पुरुष	भक्षयिष्यामि	भक्षयिष्यावः	भक्षयिष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	भक्षयतु	भक्षयताम्	भक्षयन्तु
मध्यम पुरुष	भक्षय	भक्षयतम्	भक्षयत
उत्तम पुरुष	भक्षयाणि	भक्षयाव	भक्षयाम

लङ्

प्रथम पुरुष	अभक्षयत्	अभक्षयताम्	अभक्षयन्
मध्यम पुरुष	अभक्षयः	अभक्षयतम्	अभक्षयत
उत्तम पुरुष	अभक्षयम्	अभक्षयाव	अभक्षयाम

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	भक्षयेत्	भक्षयेताम्	भक्षयेयुः
मध्यम पुरुष	भक्षयेः	भक्षयेतम्	भक्षयेत
उत्तम पुरुष	भक्षयेयम्	भक्षयेव	भक्षयेम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आत्मनेपद प्रत्यय

आत्मनेपदी धातुओं के साथ लट्, लृट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् लकारों में भिन्न प्रत्यय लगते हैं—

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ते	इते (आते)	अन्ते (अते)
मध्यम पुरुष	से	इथे (आथे)	ध्वे
उत्तम पुरुष	इ	वहे	महे

लृट्

प्रथम पुरुष	स्यते	स्येते	स्यन्ते
मध्यम पुरुष	स्यसे	स्येथे	स्यध्वे
उत्तम पुरुष	स्ये	स्यावहे	स्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	ताम्	इताम् (आताम्)	अन्ताम् (अताम्)
मध्यम पुरुष	स्व	इथाम् (आथाम्)	ध्वम्
उत्तम पुरुष	ऐ	आवहै	आमहै

लङ्

प्रथम पुरुष	त	इताम् (आताम्)	अन्त (अत)
मध्यम पुरुष	थास्	इथाम् (आथाम्)	ध्वम्
उत्तम पुरुष	इ	वहि	महि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	ईत	ईयाताम्	ईरन्
मध्यम पुरुष	ईथाः	ईयाथाम्	ईध्वम्
उत्तम पुरुष	ईय	ईवहि	ईमहि

भ्वादिगण (आत्मनेपद)
सेव् (सेवा करना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सेवते	सेवेते	सेवन्ते
मध्यम पुरुष	सेवसे	सेवेथे	सेवध्वे
उत्तम पुरुष	सेवे	सेवावहे	सेवामहे

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लृट्

प्रथम पुरुष	सेविष्यते	सेविष्येते	सेविष्यन्ते
मध्यम पुरुष	सेविष्यसे	सेविष्येथे	सेविष्यध्वे
उत्तम पुरुष	सेविष्ये	सेविष्यावहे	सेविष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	सेवताम्	सेवेताम्	सेवन्ताम्
मध्यम पुरुष	सेवस्व	सेवेथाम्	सेवध्वम्
उत्तम पुरुष	सेवै	सेवावहै	सेवामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	असेवत	असेवेताम्	असेवन्त
मध्यम पुरुष	असेवथा:	असेवेथाम्	असेवध्वम्
उत्तम पुरुष	असेवे	असेवावहि	असेवामहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	सेवेत	सेवेयाताम्	सेवेरन्
मध्यम पुरुष	सेवेथा:	सेवेयाथाम्	सेवेध्वम्
उत्तम पुरुष	सेवेय	सेवेवहि	सेवेमहि

लभ् (प्राप्त करना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	लभते	लभेते	लभन्ते
मध्यम पुरुष	लभसे	लभेथे	लभध्वे
उत्तम पुरुष	लभे	लभावहे	लभामहे

लृट्

प्रथम पुरुष	लप्स्यते	लप्स्येते	लप्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	लप्स्यसे	लप्स्येथे	लप्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	लप्स्ये	लप्स्यावहे	लप्स्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	लभताम्	लभेताम्	लभन्ताम्
मध्यम पुरुष	लभस्व	लभेथाम्	लभध्वम्
उत्तम पुरुष	लभै	लभावहै	लभामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अलभत	अलभेताम्	अलभन्त
मध्यम पुरुष	अलभथा:	अलभेथाम्	अलभध्वम्
उत्तम पुरुष	अलभे	अलभावहि	अलभामहि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	लभेत	लभेयाताम्	लभेरन्
मध्यम पुरुष	लभेथाः	लभेयाथाम्	लभेध्वम्
उत्तम पुरुष	लभेय	लभेवहि	लभेवहि

रभ्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रभते	रभेते	रभन्ते
मध्यम पुरुष	रभसे	रभेथे	रभध्वे
उत्तम पुरुष	रभे	रभावहे	रभामहे

लृट्

प्रथम पुरुष	रप्स्यते	रप्स्येते	रप्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	रप्स्यसे	रप्स्येथे	रप्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	रप्स्ये	रप्स्यावहे	रप्स्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	रभताम्	रभेताम्	रभन्ताम्
मध्यम पुरुष	रभस्व	रभेथाम्	रभध्वम्
उत्तम पुरुष	रभै	रभावहै	रभामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अरभत	अरभेताम्	अरभन्त
मध्यम पुरुष	अरभथाः	अरभेथाम्	अरभध्वम्
उत्तम पुरुष	अरभे	अरभावहि	अरभामहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	रभेत	रभेयाताम्	रभेरन्
मध्यम पुरुष	रभेथाः	रभेयाथाम्	रभेध्वम्
उत्तम पुरुष	रभेय	रभेवहि	रभेमहि

दिवादिगण (आत्मनेपद)

जन् (जा, उत्पन्न होना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जायते	जायेते	जायन्ते
मध्यम पुरुष	जायसे	जायेथे	जायध्वे
उत्तम पुरुष	जाये	जायावहे	जायामहे

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लृट्

प्रथम पुरुष	जनिष्यते	जनिष्येते	जनिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	जनिष्यसे	जनिष्येथे	जनिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	जनिष्ये	जनिष्यावहे	जनिष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	जायताम्	जायेताम्	जायन्ताम्
मध्यम पुरुष	जायस्व	जायेथाम्	जायध्वम्
उत्तम पुरुष	जायै	जायावहै	जायामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अजायत	अजायेताम्	अजायन्त
मध्यम पुरुष	अजायथाः	अजायेथाम्	अजायध्वम्
उत्तम पुरुष	अजाये	अजायावहि	अजायामहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	जायेत	जायेयाताम्	जायेरन्
मध्यम पुरुष	जायेथाः	जायेयाथाम्	जायेध्वम्
उत्तम पुरुष	जायेय	जायेवहि	जायेमहि

तुदादिगण (आत्मनेपद)

मृ (मरना)

लट्

प्रथम पुरुष	म्रियते	म्रियेते	म्रियन्ते
मध्यम पुरुष	म्रियसे	म्रियेथे	म्रियध्वे
उत्तम पुरुष	म्रिये	म्रियावहे	म्रियामहे

लृट्[1]

प्रथम पुरुष	मरिष्यति	मरिष्यतः	मरिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	मरिष्यसि	मरिष्यथः	मरिष्यथ
उत्तम पुरुष	मरिष्यामि	मरिष्यावः	मरिष्यामः

लोट्

प्रथम पुरुष	म्रियताम्	म्रियेताम्	म्रियन्ताम्
मध्यम पुरुष	म्रियस्व	म्रियेथाम्	म्रियध्वम्
उत्तम पुरुष	म्रियै	म्रियावहै	म्रियामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अम्रियत	अम्रियेताम्	अम्रियन्त
मध्यम पुरुष	अम्रियथाः	अम्रियेथाम्	अम्रियध्वम्
उत्तम पुरुष	अम्रिये	अम्रियावहि	अम्रियामहि

१. मृ धातु के लृट् लकार में रूप परस्मैपदी धातुओं के अनुसार चलते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	म्रियेत	म्रियेयाताम्	म्रियेरन्
मध्यम पुरुष	म्रियेथा:	म्रियेयाथाम्	म्रियेध्वम्
उत्तम पुरुष	म्रियेय	म्रियेवहि	म्रियेमहि

उभयपद (परस्मैपद, आत्मनेपद)

पाणिनि व्याकरण में कुछ धातुएँ उभयपदी हैं अर्थात् उनके रूप परस्मैपद और आत्मनेपद दोनों में होते हैं। यहाँ हम पाठ्यक्रम में निर्धारित उभयपदी धातुओं के रूप प्रस्तुत करते हैं। उनके परस्मैपद में रूप पहले ही प्रस्तुत किये जा चुके हैं।

भ्वादिगण

नी (नय्, ले जाना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयते	नयेते	नयन्ते
मध्यम पुरुष	नयसे	नयेथे	नयध्वे
उत्तम पुरुष	नये	नयावहे	नयामहे

लृट्

प्रथम पुरुष	नेष्यते	नेष्येते	नेष्यन्ते
मध्यम पुरुष	नेष्यसे	नेष्येथे	नेष्यध्वे
उत्तम पुरुष	नेष्ये	नेष्यावहे	नेष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	नयताम्	नयेताम्	नयन्ताम्
मध्यम पुरुष	नयस्व	नयेथाम्	नयध्वम्
उत्तम पुरुष	नयै	नयावहै	नयामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अनयत	अनयेताम्	अनयन्त
मध्यम पुरुष	अनयथा:	अनयेथाम्	अनयध्वम्
उत्तम पुरुष	अनये	अनयावहि	अनयामहि

अदादिगण

अदादिगण की धातुओं के बाद लट् लोट् और लङ् लकारों में लगने वाले तिङ् प्रत्ययों में कुछ भिन्नता आती है। शेष लृट् और विधिलिङ् लकारों में पूर्ववत् ही प्रत्यय लगते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ते	आते	अते
मध्यम पुरुष	से	आथे	ध्वे
उत्तम पुरुष	ए	वहे	महे

लोट्

प्रथम पुरुष	ताम्	आताम्	अताम्
मध्यम पुरुष	स्व	आथाम्	ध्वम्
उत्तम पुरुष	ऐ	आवहै	आमहै

लङ्

प्रथम पुरुष	त	आताम्	अत
मध्यम पुरुष	थाः	आथाम्	ध्वम्
उत्तम पुरुष	इ	वहि	महि

ब्रु (बोलना, आत्मनेपद)

लट्

प्रथम पुरुष	ब्रूते	ब्रुवाते	ब्रुवते
मध्यम पुरुष	ब्रूषे	ब्रुवाथे	ब्रूध्वे
उत्तम पुरुष	ब्रुवे	ब्रूवहे	ब्रूमहे

लृट्

प्रथम पुरुष	वक्ष्यते	वक्ष्येते	वक्ष्यन्ते
मध्यम पुरुष	वक्ष्यसे	वक्ष्येथे	वक्ष्यध्वे
उत्तम पुरुष	वक्ष्ये	वक्ष्यावहे	वक्ष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	ब्रूताम्	ब्रूवाताम्	ब्रुवताम्
मध्यम पुरुष	ब्रूष्व	ब्रुवाथाम्	ब्रूध्वम्
उत्तम पुरुष	ब्रवै	ब्रवावहै	ब्रवामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अब्रूत	अब्रुवाताम्	अब्रुवत
मध्यम पुरुष	अब्रूथाः	अब्रुवाथाम्	अब्रुध्वम्
उत्तम पुरुष	अब्रुवि	अब्रूवहि	अब्रूमहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	ब्रुवीत	ब्रुवीयाताम्	ब्रुवीरन्
मध्यम पुरुष	ब्रुवीथाः	ब्रुवीयाथाम्	ब्रुवीध्वम्
उत्तम पुरुष	ब्रुवीय	ब्रुवीवहि	ब्रुवीमहि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

जुहोत्यादिगण

दा (देना, आत्मनेपद)

लट

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दत्ते	ददाते	ददते
मध्यम पुरुष	दत्से	ददाथे	दद्ध्वे
उत्तम पुरुष	ददे	दद्वहे	दद्महे

लृट्

प्रथम पुरुष	दास्यते	दास्येते	दास्यन्ते
मध्यम पुरुष	दास्यसे	दास्येथे	दास्यध्वे
उत्तम पुरुष	दास्ये	दास्यावहे	दास्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	दत्ताम्	ददाताम्	ददताम्
मध्यम पुरुष	दत्स्व	ददाथाम्	दद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	ददै	ददावहै	ददामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अदत्त	अददाताम्	अददत
मध्यम पुरुष	अदत्थाः	अददाथाम्	अदद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अददि	अदद्वहि	अदद्महि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	ददीत	ददीयाताम्	ददीरन्
मध्यम पुरुष	ददीथाः	ददीयाथाम्	ददीध्वम्
उत्तम पुरुष	ददीय	ददीवहि	ददीमहि

स्वादिगण

चि (चुनना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चिनुते	चिन्वाते	चिन्वते
मध्यम पुरुष	चिनुषे	चिन्वाथे	चिनुध्वे
उत्तम पुरुष	चिन्वे	चिनुवहे, चिन्वहे	चिनुमहे, चिन्महे

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लृट्

प्रथम पुरुष	चेष्यते	चेष्येते	चेष्यन्ते
मध्यम पुरुष	चेष्यसे	चेष्येथे	चेष्यध्वे
उत्तम पुरुष	चेष्ये	चेष्यावहे	चेष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	चिनुताम्	चिन्वाताम्	चिन्वताम्
मध्यम पुरुष	चिनुष्व	चिन्वाथाम्	चिनुध्वम्
उत्तम पुरुष	चिनवै	चिनवावहै	चिनवामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अचिनुत	अचिन्वाताम्	अचिन्वत
मध्यम पुरुष	अचिनुथाः	अचिन्वाथाम्	अचिनुध्वम्
उत्तम पुरुष	अचिन्वि	अचिनुवहि	अचिनुमहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	चिन्वीत	चिन्वीयाताम्	चिन्वीरन्
मध्यम पुरुष	चिन्वीथाः	चिन्वीयाथाम्	चिन्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	चिन्वीय	चिन्वीवहि	चिन्वीमहि

तुदादिगण

मुच् (छोड़ना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	मुञ्चते	मुञ्चेते	मुञ्चन्ते
मध्यम पुरुष	मुञ्चसे	मुञ्चेथे	मुञ्चध्वे
उत्तम पुरुष	मुञ्चे	मुञ्चावहे	मुञ्चामहे

लृट्

प्रथम पुरुष	मोक्ष्यते	मोक्ष्येते	मोक्ष्यन्ते
मध्यम पुरुष	मोक्ष्यसे	मोक्ष्येथे	मोक्ष्यध्वे
उत्तम पुरुष	मोक्ष्ये	मोक्ष्यावहे	मोक्ष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	मुञ्चताम्	मुञ्चाताम्	मुञ्चन्ताम्
मध्यम पुरुष	मुञ्चस्व	मुञ्चाथाम्	मुञ्चध्वम्
उत्तम पुरुष	मुञ्चै	मुञ्चावहै	मुञ्चामहै

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लङ्

प्रथम पुरुष	अमुञ्चत	अमुञ्चेताम्	अमुञ्चन्त
मध्यम पुरुष	अमुञ्चथाः	अमुञ्चेथाम्	अमुञ्चध्वम्
उत्तम पुरुष	अमुञ्चे	अमुञ्चावहि	अमुञ्चामहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	मुञ्चेत	मुञ्चेयाताम्	मुञ्चेरन्
मध्यम पुरुष	मुञ्चेथाः	मुञ्चेयाथाम्	मुञ्चेध्वम्
उत्तम पुरुष	मुञ्चेय	मुञ्चेवहि	मुञ्चेमहि

विद् (विन्द्, प्राप्त होना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	विन्दते	विन्देते	विन्दन्ते
मध्यम पुरुष	विन्दसे	विन्देथे	विन्दध्वे
उत्तम पुरुष	विन्दे	विन्दावहे	विन्दामहे

लृट्

प्रथम पुरुष	वेदिष्यते-वेत्स्यते	वेदिष्येते-वेत्स्येते	वेदिष्यन्ते-वेत्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	वेदिष्यसे-वेत्स्यसे	वेदिष्येथे-वेत्स्येथे	वेदिष्यध्वे-वेत्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	वेदिष्ये-वेत्स्ये	वेदिष्यावहे-वेत्स्यावहे	वेदिष्यामहे-वेत्स्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	विन्दताम्	विन्देताम्	विन्दन्ताम्
मध्यम पुरुष	विन्दस्व	विन्देथाम्	विन्दध्वम्
उत्तम पुरुष	विन्दै	विन्दावहै	विन्दामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अविन्दत	अविन्देताम्	अविन्दन्त
मध्यम पुरुष	अविन्दथाः	अविन्देथाम्	अविन्दध्वम्
उत्तम पुरुष	अविन्दे	अविन्दावहि	अविन्दामहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	विन्देत	विन्देयाताम्	विन्देरन्
मध्यम पुरुष	विन्देथाः	विन्देयाथाम्	विन्देध्वम्
उत्तम पुरुष	विन्देय	विन्देवहि	विन्देमहि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सिच् (सिञ्च्, सींचना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सिञ्चते	सिञ्चेते	सिञ्चन्ते
मध्यम पुरुष	सिञ्चसे	सिञ्चेथे	सिञ्चध्वे
उत्तम पुरुष	सिञ्चे	सिञ्चावहे	सिञ्चामहे

लृट्

प्रथम पुरुष	सेक्ष्यते	सेक्ष्येते	सेक्ष्यन्ते
मध्यम पुरुष	सेक्ष्यसे	सेक्ष्येथे	सेक्ष्यध्वे
उत्तम पुरुष	सेक्ष्ये	सेक्ष्यावहे	सेक्ष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	सिञ्चताम्	सिञ्चेताम्	सिञ्चन्ताम्
मध्यम पुरुष	सिञ्चस्व	सिञ्चेथाम्	सिञ्चध्वम्
उत्तम पुरुष	सिञ्चै	सिञ्चावहै	सिञ्चामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	असिञ्चत	असिञ्चेताम्	असिञ्चन्त
मध्यम पुरुष	असिञ्चथाः	असिञ्चेथाम्	असिञ्चध्वम्
उत्तम पुरुष	असिञ्चे	असिञ्चावहि	असिञ्चामहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	सिञ्चेत	सिञ्चेयाताम्	सिञ्चेरन्
मध्यम पुरुष	सिञ्चेथाः	सिञ्चेयाथाम्	सिञ्चेध्वम्
उत्तम पुरुष	सिञ्चेय	सिञ्चेवहि	सिञ्चेमहि

रुधादिगण

भिद् (भेदना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भिन्ते	भिन्दाते	भिन्दते
मध्यम पुरुष	भिन्त्से	भिन्दाथे	भिन्ध्वे
उत्तम पुरुष	भिन्दे	भिन्द्वहे	भिन्द्महे

लृट्

प्रथम पुरुष	भेत्स्यते	भेत्स्येते	भेत्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	भेत्स्यसे	भेत्स्येथे	भेत्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	भेत्स्ये	भेत्स्यावहे	भेत्स्यामहे

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लोट्

प्रथम पुरुष	भिन्ताम्	भिन्दाताम्	भिन्दताम्
मध्यम पुरुष	भिन्त्स्व	भिन्दाथाम्	भिन्ध्वम्
उत्तम पुरुष	भिनदै	भिनदावहै	भिनदामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अभिन्त	अभिन्दाताम्	अभिन्दत
मध्यम पुरुष	अभिन्थाः	अभिन्दाथाम्	अभिन्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अभिन्दि	अभिन्द्वहि	अभिन्द्महि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	भिन्दीत	भिन्दीयाताम्	भिन्दीरन्
मध्यम पुरुष	भिन्दीथाः	भिन्दीयाथाम्	भिन्दीध्वम्
उत्तम पुरुष	भिन्दीय	भिन्दीवहि	भिन्दीमहि

छिद् (काटना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	छिन्ते	छिन्दाते	छिन्दते
मध्यम पुरुष	छिन्त्से	छिन्दाथे	छिन्ध्वे
उत्तम पुरुष	छिन्दे	छिन्द्वहे	छिन्द्महे

लृट्

प्रथम पुरुष	छेत्स्यते	छेत्स्येते	छेत्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	छेत्स्यसे	छेत्स्येथे	छेत्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	छेत्स्ये	छेत्स्यावहे	छेत्स्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	छिन्ताम्	छिन्दाताम्	छिन्दताम्
मध्यम पुरुष	छिन्त्स्व	छिन्दाथाम्	छिन्द्ध्वम्
उत्तम पुरुष	छिनदै	छिनदावहै	छिनदामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अच्छिन्त	अच्छिन्दाताम्	अच्छिन्दत
मध्यम पुरुष	अच्छिन्त्थाः	अच्छिन्दाथाम्	अच्छिन्द्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अच्छिन्दि	अच्छिन्द्वहि	अच्छिन्द्महि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	छिन्दीत	छिन्दीयाताम्	छिन्दीरन्
मध्यम पुरुष	छिन्दीथाः	छिन्दीयाथाम्	छिन्दीध्वम्
उत्तम पुरुष	छिन्दीय	छिन्दीवहि	छिन्दीमहि

तनादिगण

कृ (करना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कुरुते	कुर्वाते	कुर्वते
मध्यम पुरुष	कुरुषे	कुर्वाथे	कुरुध्वे
उत्तम पुरुष	कुर्वे	कुर्वहे	कुर्महे

लृट्

प्रथम पुरुष	करिष्यते	करिष्येते	करिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	करिष्यसे	करिष्येथे	करिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	करिष्ये	करिष्यावहे	करिष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	कुरुताम्	कुर्वाताम्	कुर्वताम्
मध्यम पुरुष	कुरुष्व	कुर्वाथाम्	कुरुध्वम्
उत्तम पुरुष	करवै	करवावहै	करवामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अकुरुत	अकुर्वाताम्	अकुर्वत
मध्यम पुरुष	अकुरुथाः	अकुर्वाथाम्	अकुरुध्वम्
उत्तम पुरुष	अकुर्वि	अकुर्वहि	अकुर्महि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	कुर्वीत	कुर्वीयाताम्	कुर्वीरन्
मध्यम पुरुष	कुर्वीथाः	कुर्वीयाथाम्	कुर्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	कुर्वीय	कुर्वीवहि	कुर्वीमहि

चुरादिगण

चुर् (चोरी करना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयते	चोरयेते	चोरयन्ते

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मध्यम पुरुष	चोरयसे	चोरयेथे	चोरयध्वे
उत्तम पुरुष	चोरये	चोरयावहे	चोरयामहे

लृट्

प्रथम पुरुष	चोरयिष्यते	चोरयिष्येते	चोरयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसे	चोरयिष्येथे	चोरयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	चोरयिष्ये	चोरयिष्यावहे	चोरयिष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	चोरयताम्	चोरयेताम्	चोरयन्ताम्
मध्यम पुरुष	चोरयस्व	चोरयेथाम्	चोरयध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयै	चोरयावहै	चोरयामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अचोरयत	अचोरयेताम्	अचोरयन्त
मध्यम पुरुष	अचोरयथाः	अचोरयेथाम्	अचोरयध्वम्
उत्तम पुरुष	अचोरये	अचोरयावहि	अचोरयामहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	चोरयेत	चोरयेयाताम्	चोरयेरन्
मध्यम पुरुष	चोरयेथाः	चोरयेयाथाम्	चोरयेध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयेय	चोरयेवहि	चोरयेमहि

कथ (कहना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कथयते	कथयेते	कथयन्ते
मध्यम पुरुष	कथयसे	कथयेथे	कथयध्वे
उत्तम पुरुष	कथये	कथयावहे	कथयामहे

लृट्

प्रथम पुरुष	कथयिष्यते	कथयिष्येते	कथयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	कथयिष्यसे	कथयिष्येथे	कथयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	कथयिष्ये	कथयिष्यावहे	कथयिष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	कथयताम्	कथयेताम्	कथयन्ताम्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मध्यम पुरुष	कथयस्व	कथयेथाम्	कथयध्वम्
उत्तम पुरुष	कथयै	कथयावहै	कथयामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अकथयत	अकथयेताम्	अकथयन्त
मध्यम पुरुष	अकथयथाः	अकथयेथाम्	अकथयध्वम्
उत्तम पुरुष	अकथये	अकथयावहि	अकथयामहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	कथयेत	कथयेयाताम्	कथयेरन्
मध्यम पुरुष	कथयेथाः	कथयेयाथाम्	कथयेध्वम्
उत्तम पुरुष	कथयेय	कथयेवहि	कथयेमहि

गण् (गिनना, आत्मनेपद)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गणयते	गणयेते	गणयन्ते
मध्यम पुरुष	गणयसे	गणयेथे	गणयध्वे
उत्तम पुरुष	गणये	गणयावहे	गणयामहे

लृट्

प्रथम पुरुष	गणयिष्यते	गणयिष्येते	गणयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	गणयिष्यसे	गणयिष्येथे	गणयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	गणयिष्ये	गणयिष्यावहे	गणयिष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	गणयताम्	गणयेताम्	गणयन्ताम्
मध्यम पुरुष	गणयस्व	गणयेथाम्	गणयध्वम्
उत्तम पुरुष	गणयै	गणयावहै	गणयामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अगणयत	अगणयेताम्	अगणयन्त
मध्यम पुरुष	अगणयथाः	अगणयेथाम्	अगणयध्वम्
उत्तम पुरुष	अगणये	अगणयावहि	अगणयामहि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	गणयेत	गणयेयाताम्	गणयेरन्
मध्यम पुरुष	गणयेथाः	गणयेयाथाम्	गणयेध्वम्
उत्तम पुरुष	गणयेय	गणयेवहि	गणयेमहि

भक्ष् (खाना, आत्मनेपदी)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भक्षयते	भक्षयेते	भक्षयन्ते
मध्यम पुरुष	भक्षयसे	भक्षयेथे	भक्षयध्वे
उत्तम पुरुष	भक्षये	भक्षयावहे	भक्षयामहे

लृट्

प्रथम पुरुष	भक्षयिष्यते	भक्षयिष्येते	भक्षयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	भक्षयिष्यसे	भक्षयिष्येथे	भक्षयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	भक्षयिष्ये	भक्षयिष्यावहे	भक्षयिष्यामहे

लोट्

प्रथम पुरुष	भक्षयताम्	भक्षयेताम्	भक्षयन्ताम्
मध्यम पुरुष	भक्षयस्व	भक्षयेथाम्	भक्षयध्वम्
उत्तम पुरुष	भक्षयै	भक्षयावहै	भक्षयामहै

लङ्

प्रथम पुरुष	अभक्षयत	अभक्षयेताम्	अभक्षयन्त
मध्यम पुरुष	अभक्षयथाः	अभक्षयेथाम्	अभक्षयध्वम्
उत्तम पुरुष	अभक्षये	अभक्षयावहि	अभक्षयामहि

विधिलिङ्

प्रथम पुरुष	भक्षयेत	भक्षयेयाताम्	भक्षयेरन्
मध्यम पुरुष	भक्षयेथाः	भक्षयेयाथाम्	भक्षयेध्वम्
उत्तम पुरुष	भक्षयेय	भक्षयेवहि	भक्षयेमहि

णिच् प्रक्रिया

दसों गणों की प्रत्येक धातु में णिच् प्रत्यय लग सकता है। णिजन्त धातु को प्रेरणार्थक धातु कहते हैं जहां कर्ता स्वयं काम न करके दूसरे से काम करवाता है। यथा—रामः ओदनं पचति—राम भात पकाता है। कृष्णः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

रामेण ओदनं पाचयति—कृष्ण राम से भात पकवाता है। इसी प्रकार करना से करवाना, पढ़ना से पढ़ाना, बनना से बनवाना आदि प्रेरणा के अर्थ हैं।

प्रेरणार्थक क्रिया वह है जो किसी कर्ता की प्रेरणा से की जाए। काम करवाने वाला प्रेरक कर्ता होता है और प्रेरक की क्रिया को प्रेरणार्थक क्रिया कहते हैं।

प्रेरणार्थक क्रिया का कर्ता प्रथमा-विभक्ति में रहता है और जो कारक कर्ता अर्थात् काम करने वाला होता है, वह बहुधा तृतीया में और कभी-कभी द्वितीया में होता है। जैसे—भृत्यः भारं नयति। स्वामी भृत्येन भारं नाययति प्रथम वाक्य में 'भृत्यः' कर्ता और 'नयति' क्रिया है और दूसरे में स्वामी (प्रेरक) कर्ता है, नयति का कर्ता 'भृत्य' तृतीया में बदल गया है। दोनों वाक्यों में भार ले जाने वाला ('भृत्य' (नौकर) ही है। इसी प्रकार—रामः व्याकरणं पठति। आचार्यः रामं व्याकरणं पाठयति। इस वाक्य में पठति का कर्ता रामः (प्रथमान्त) रामं (द्वितीयान्त) में बदल गया है। किन्तु अद्, खाद् और भक्ष् धातु का कर्ता तृतीयान्त में ही रहता है। जैसे माता पुत्रेण ओदनं खादयति (आदयति, भक्षयति)।

जिन धातुओं का अर्थ गति (चलना, जाना), बुद्धि (जानना, समझना), भक्षण (खाना) या शब्द करना (अध्ययन, पठन, वाचन, श्रवण) हो और जो धातु अकर्मक हों उनके साथ कार्य करने वाला कर्ता तृतीयान्त नहीं, द्वितीयान्त में बदलता है। जैसे कैकेयी रामम् अरण्यम् अगमयत्। आचार्यः छात्रं शास्त्रस्य तत्त्वं वेदयति, स रामं जलं पाययति, गुरुः शिष्यान् पाठं पाठयति।

अकर्मक क्रिया यदि प्रेरणा से युक्त हो तो वह सकर्मक हो जाती है अर्थात् उसका कर्ता प्रेरणार्थक क्रिया का कर्म बन जाता है। जैसे—शिशुः शेते (अकर्मक)। माता शिशुं शाययति (सकर्मक)।

धातु की प्रेरणार्थक क्रिया बनाने के लिए शुद्ध धातु के अन्त में णिच्= अय्[1] होता है। जैसे—पच्+अय्+अ+ति=पाचयति।

प्रेरणार्थक धातु के रूप चुरादिगण की धातुओं के समान और परस्मैपद और आत्मनेपद दोनों में चलते हैं।

---

१. 'णिच्' के ण् और 'च्' का लोप हो जाता है। शेष 'इ' रह जाती है। इसके बाद 'अ' (विकरण) रखा जाता है। फिर 'इ' को गुण (ए) और 'ए' को 'अय' होता है। 'अय्' के साथ 'अ' जोड़ने से 'अय' बन जाता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विशेष नियम

(क) णिच् से पूर्व धातु की उपधा में 'अ' को 'आ', 'इ' को 'ए', 'उ' को 'ओ', 'ऋ' को 'अर्' हो जाता है। जैसे—पठ्-पाठयति, विद्-वेदयति, कुप्-कोपयति, नृत्-नर्तयति।

(ख) धातु के अन्त में आए ह्रस्व अथवा दीर्घ इ, उ और ऋ को वृद्धि अर्थात् क्रमशः आय्, आव् और आर् हो जाता है। जैसे—नी-नाययति, चि-चाययति, हृ-दारयति, भू-भावयति, दु-दावयति, तृ—तारयति।

(ग) हन् के न् को त् और ह् को घ् हो जाता है। हन्-घातयति।

(घ) आकारान्त धातुओं के अन्त में अय से पूर्व 'प्' जोड़ा जाता है। जैसे दा+प्+अय+ति=दापयति। किन्तु पा (पीना) के बाद 'य' और पा (पालना) के बाद 'ल' जोड़ा जाता है। जैसे=पा+य्+अय+ति=पाययति। पा+ल्+अय+ति=पालयति।

(ङ) जि, क्री और अधि+इ के अन्तिम स्वर को आ हो जाता है। जैसे—जि=जा+प्+अय+ति=जापयति। क्रापयति, अध्यापयति।

(च) रभ् और लभ् धातुओं में णिच् परे होने पर उपधा में 'म्' जोड़ा जाता है। रभ्=रम् भ+अय्+अ+ति=रम्भयति। लम्भयति।

पाठ्यक्रम में निर्धारित धातुओं के णिजन्त रूप।

वद्—वादयति, वादयते
दृश्—दर्शयति, दर्शयते
पा—पाययति, पाययते
खाद्—खादयति, खादयते
जि—जापयति, जापयते
नी—नाययति, नाययते
सेव्—सेवयति, सेवयते
लभ्—लम्भयति, लम्भयते
रभ्—रम्भयति, रम्भयते
ब्रू—वाचयति, वाचयते
अस्—भावयति, भावयते
हन्—घातयति, घातयते
दा—दापयति, दापयते
दिव्—देवयति, देवयते
नृत्—नर्तयति, नर्तयते
जन्—जनयति, जनयते

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चि—चाययति, चाययते
मृ—मारयति, मारयते
मुच्—मोचयति, मोचयते
विद्—वेदयदि, वेदयते
सिच्—सेचयति, सेचयते
सृज्—सर्जयति, सर्जयते
भिद्—भेदयति, भेदयते
छिद्—छेदयति, छेदयते
कृञ्—कारयति, कारयते
चुर्—चोरयति, चोरयते
कथ्—कथयति, कथयते
गण—गणयति, गणयते
भक्ष्—भक्षयति, भक्षयते

कृत् प्रत्यय

धातुओं के अन्त में लगाकर जो प्रत्यय संज्ञा, विशेषण और अव्यय के वाचक शब्दों को बनाते हैं वे कृत् प्रदयय कहे जाते हैं और उनके योग से बने शब्द कृदन्त कहे जाते हैं। यथा—कृ+क्त=कृतः। यहाँ 'क्त' कृत् प्रत्यय है और 'कृतः' कृदन्त पद है, कृ+तृच्=कर्तृ। यहाँ 'तृच्' कृत् प्रत्यय है एवं 'कर्तृ' कृदन्त है। संज्ञा होने के कारण इसके रूप अन्य संज्ञाओं के समान चलते हैं।

तिङ् प्रत्यय सदैव क्रिया में ही होते हैं किन्तु कृदन्त संज्ञा, विशेषण अथवा अव्यय होते हैं। जो कृदन्त अव्यय होते हैं, वे एक रूप रहते हैं। यथा क्त्वा प्रत्यय लगाकर 'गत्वा' वनाने पर यह सदा एक रूप रहेगा।

क्त-क्तवतु

क्त (त) और क्तवतु (तवत्) प्रत्ययों को निष्ठा कहते हैं। ये दोनों प्रत्यय किसी कार्य की समाप्ति का बोध कराते हैं, इसी कारण इन्हें 'निष्ठा' कहा जाता है। ये भूतकाल का बोध कराते हैं यथा—तेन गतः—वह गया। इसी प्रकार सः भुक्तवान्—उसने भोजन कर लिया।

क्त प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंल्लिङ्ग में 'राम' के समान, स्त्रीलिङ्ग में आ लगाकर 'लता' के समान और नपुंसकलिङ्ग में 'फल' के समान चलते हैं।

क्तवतु (तवत्) प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग में 'गुणवत्' के समान और स्त्रीलिङ्ग में 'नदी' के समान चलते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विशेष नियम

(क) 'द्' अन्त धातुओं के 'द्' को 'न्' और 'त' अथवा 'तवत्' के 'त' को भी 'न' होता है, किन्तु क्त्वा (त्वा) प्रत्यय के त को न नहीं होता। यथा—छिद्+त=छिन्=छिन्नः। भिद्+त=भिन्+न=भिन्नः।

(ख) न्-अन्त अथवा म्-अन्त धातुओं के न् और म् का लोप हो जाता है त, तवत् अथवा त्वा प्रत्यय आने पर। यथा —मन्+तः मतः। हन्+तः हतः।

किन्तु 'जन्' और श्रम् आदि कुछ धातुओं की उपधा के 'अ' को दीर्घ होकर यह रूप बनते हैं यथा—श्रम्—श्रान्तः, भ्रम्—भ्रान्तः, जन्—जातः, शम्—शान्तः, क्षम्=क्षान्तः।

(ग) च्—अन्त और ज्—अन्त धातुओं के च् अथवा ज् को 'क्' हो जाता है। मुच्+त=मुक्+त=मुक्तः। सिच्+त=सिक्+त=सिक्तः। भज्+त=भक्+त=भक्तः।

(श्+अन्त धातु के श् को ष् और क्त (त) के 'त्' को ट् हो जाता है। दृश्+तः=दृष्टः, नश्+तः=नष्टः।

(ङ) यदि किसी धातु के अन्त में किसी वर्ग का चौथा वर्ण हो तो उसे उसी वर्ग का तीसरा वर्ण और क्त के 'त' को 'ध' हो जाता है।
जैसे—रम्+त=रब्+ध=रब्धः। वृध्+त=वृद्+ध=वृद्धः।

(च) कुछ धातुओं के व को उ, य को इ और र को ऋ हो जाता है यदि क्त, क्तवत् और क्त्वा प्रत्यय हों। जैसे—वच्+त=उच्+त=उक्तः। बद्+त वद्+इ+त=उदितः।

क्तवत् प्रत्यय से पूर्व धातु में वे ही विकार होते हैं, जो क्त प्रत्यय से पूर्व होते हैं। किसी धातु के क्तान्त रूप के साथ यदि 'वत्' लगा दें तो वह उसका क्तवत् अन्त रूप बन जाता है। जैसे—भू—भूत (क्तान्त), भूतवत् (क्तवत्-अन्त)। वच्—उक्त, उक्तवत्। दृश—दृष्ट, दृष्टवत्।

पाठ्य क्रम में निर्धारित धातुओं के क्तान्त एवं क्तवत्—अन्त रूप—

धातु	क्त	क्तवत्
वद् (बोलना)	उदित	उदितवत्
दृश् (देखना)	दृष्ट	दृष्टवत्
हस् (हँसना	हसित	हसितवत्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पा (पीना)	पीत	पीतवत्
खाद् (खाना)	खादित	खादितवत्
जि (जीतना	जित	जितवत्
नी (ले जाना)	नीत	नीतवत्
सेव् (सेवा करना)	सेवित	सेवितवत्
लभ् (प्राप्त करना)	लब्ध	लब्धवत्
रभ्	रब्ध	रब्धवत्
ब्रू (बोलना)	उक्त	उक्तवत्
अस् (होना)	भूत	भूतवत्
हन् (मारना)	हत	हतवत्
दा (देना)	दत्त	दत्तवत्
दिव् (चमकना)	द्यूत	द्यूतवत्
नृत् (नाचना)	नृत्त	नृत्तवत्
जन् (उत्पन्न होना)	जात	जातवत्
चि (चुनना)	चित	चितवत्
मृ (मरना)	मृत	मृतवत्
विद् (लाभ होना)	विन्न,	विन्नवत्
सिच् (सींचना)	सिक्त	सिक्तवत्
सृज् (उत्पन्न करना)	सृष्ट	सृष्टवत्
भिद् (भेदना)	भिन्न	भिन्नवत्
छिद् (काटना)	छिन्न	छिन्नवत्
कृ (करना)	कृत	कृतवत्
चुर् (चोरी करना)	चोरित	चोरितवत्
कथ् (कहना)	कथित	कथितवत्
गण (गिनना)	गणित	गणितवत्
भक्ष (खाना	भक्षित	भक्षितवत्

क्त्वा और ल्यप् प्रत्यय

जब एक ही कर्त्ता कई क्रियाओं का सम्पादन करता है और जब एक क्रिया के पश्चात् कर्त्ता दूसरी क्रिया करता है तो पहली क्रिया के वाचक धातु के साथ क्त्वा अथवा ल्यप् प्रत्यय लगता है। यथा—स भोजनं भुक्त्वा विद्यालयम् अगच्छत्—वह भोजन खाकर विद्यालय गया। यहाँ दो क्रियाएँ हैं—खाना और जाना। किन्तु पूर्वकालिक क्रिया के साथ क्त्वा प्रत्यय का प्रयोग हुआ है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

जिस धातु के पूर्व उपसर्ग हो अथवा उपसर्ग स्थानिक कोई पद हो, उस धातु से ल्यप् प्रत्यय होता है। अनु+भू=ल्यप् (य) अनुभूय।

क्त्वा और ल्यप् प्रत्ययों के योग से बने शब्द अव्यय होते हैं। अतः इनके रूप नहीं चलते।

क्त्वा (त्वा) प्रत्ययान्त रूपों में से अन्तिम 'त' या 'न' को हटाकर 'त्वा' लगा देने से त्वा प्रत्ययान्त रूप बन जाता है जैसे कृ कृतः—कृत्वा।

ल्यप् का 'य' शेष रहता है ल्यप् के पूर्व यदि धातु का ह्रस्व स्वर हो तो धातु और ल्यप् 'य' के बीच में 'त्' जुड़ जाता है। यथा—निस्+चि+य= निश्चित्य। अव य, विजित्य।

प्राय: नकारान्त धातुओं के न् का लोप करके 'त्यप्' जोड़ा जाता है। जैसे—अवमत्य, प्रहृत्य, वितत्य।

णिजन्त और चुरादिगण की धातुओं की उपधा में यदि ह्रस्व स्वर हो तो उनमें ल्यप् के पूर्व 'अय् जोड़ा जाता है, अन्यथा नहीं। यथा—वि+गण्+ल्यप्=विगण+अय्+य=विगणय्य।

पाठ्यक्रम में निर्धारित धातुओं के क्त्वा और ल्यप् प्रत्ययों के रूप—

धातु	क्त्वान्त	ल्यबन्त
वद्	उदित्वा	प्रोच्य
दृश्	दृष्ट्वा	संदर्श्य
हस्	हसित्वा	विहस्य
पा	पीत्वा	निपीय
खाद्	खादित्वा	विखाद्य
जि	जित्वा	विजित्य
नी	नीत्वा	आनीय
सेव्	सेवित्वा	निषेव्य
लभ्	लब्ध्वा	संलभ्य
रभ्	रब्ध्वा	संरभ्य
ब्रू	उक्त्वा	प्रोच्य
अस्	भूत्वा	सम्भूय
हन्	हत्वा	संहत्य
दा	दत्त्वा	आदाय

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दिव्	देवित्वा	संदीव्य
नृत्	नर्तित्वा	प्रणृत्य
जन्	जनित्वा	सञ्जन्य
चि	चित्वा	सञ्चित्य
मृ	मृत्वा	सम्मृत्य
मुच्	मुक्त्वा	विमुच्य
विद्	वित्त्वा	संवेद्य
सिच्	सिक्त्वा	परिषिच्य
सृज्	सृष्ट्वा	विसृज्य
भिद्	भित्त्वा	संभेद्य
छिद्	छित्त्वा	उच्छिद्य
कृ	कृत्वा	विकृत्य
चुर	चोरयित्वा	प्रचोर्य
कथ	कथयित्वा	प्रकथय्य
गण	गणयित्वा	विगणय्य
भक्ष	भक्षयित्वा	संभक्ष्य

तव्यत् और अनीयर् प्रत्यय

धातुओं से 'योग्य या होना चाहिए' अर्थ में तव्य और अनीयर् प्रत्यय होते हैं। इन प्रत्ययों के आने पर धातु के अन्तिम स्वर और उपधा के ह्रस्व स्वरों को गुण हो जाता है। जैसे—दा+तव्य=दातव्य। दा+अनीय=दानीय। चि+तव्य=चेतव्य, मुच्+तव्य=मोक्तव्य।

पाठ्यक्रम में निर्धारित धातुओं के तव्य और अनीय प्रत्ययान्त धातुओं के रूप—

धातु	तव्य-अन्त	अनीय-अन्त
वद्	वदितव्य	वदनीय
दृश्	दर्शितव्य	दर्शनीय
हस्	हसितव्य	हसनीय
पा	पातव्य	पानीय
खाद्	खादितव्य	खादनीय
जि	जेतव्य	जयनीय
नी	नेतव्य	नयनीय

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सेव्	सेवितव्य	सेवनीय
लभ्	लब्धव्य	लम्भनीय
रभ्	रब्धव्य	रम्भणीय
ब्रू	वक्तव्य	वचनीय
अस्	भवितव्य	भवनीय
हन्	हन्तव्य	हननीय
दा	दातव्य	दानीय
दिव्	देवितव्य	देवनीय
नृत्	नर्तितव्य	नर्तनीय
जन्	जनितव्य	जननीय
चि	चेतव्य	चयनीय
मृ	मर्तव्य	मरणीय
मुच्	मोक्तव्य	मोचनीय
विद्	वेदितव्य	वेदनीय
सिच्	सेक्तव्य	सेचनीय
सृज्	स्रष्टव्य	सर्जनीय
भिद्	भेत्तव्य	भेदनीय
छिद्	छेत्तव्य	छेदनीय
कृ	कर्तव्य	करणीय
चुर्	चोरितव्य	चोरणीय
कथ	कथितव्य	कथनीय
गण	गणितव्य	गणनीय
भक्ष	भक्षितव्य	भक्षणीय

यत् प्रत्यय

अजन्त धातुओं से 'योग्य अथवा होना चाहिए' अर्थ में यत् (य) प्रत्यय होता है। इससे पूर्व धातु के स्वर को गुण हो जाता है। धातु के अन्त 'आ' को ई, पुनः ई को गुण 'ए' होता है। दा+यत्=द्+ई+य=द्+ए+य=देय। प्रत्यय से पूर्व धातु के 'उ' को गुण 'ओ' होकर 'अव्' होता है। श्रु+य=श्र् ओ+य=श्र् अव्+य=श्रव्य।

जिन धातुओं की उपधा में 'अ' है और अन्त में पवर्ग का कोई वर्ण है, उनसे 'यत्' (य) प्रत्यय होता है। रभ्+य=रभ्य। लभ्य।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तक् (हंसी उड़ाना), शस् (हिंसा करना), चत् (पूछना), यत् (प्रयत्न करना), जन्, शक् और सह्, धातुओं से 'य' प्रत्यय होता है। यत् प्रत्यय होने पर हन् को वध आदेश होता है। हन्+य=वध्य।

पाठ्यक्रम में निर्धारित कुछ धातुओं के यत् प्रत्ययान्त रूप—

धातु	यत्-अन्त	धातु	यत्-रूप
पा	पेय	चि	चेय
जि	जेय	मृ	मर्त्य
नी	नेय	कृ	कृत्य
लभ्	लभ्य		
रभ्	रभ्य		
हन्	वध्य		
दा	देय		
जन्	जन्य		

तुमुन्

जिस क्रिया के लिए कोई क्रिया की जाती है, उसकी धातु में भविष्यत् अर्थ प्रकट करने के लिए तुमुन् प्रत्यय लगता है। जैसे—रामः द्रष्टुं गच्छति राम देखने के लिए जाता है। यहाँ देखना, जाना, दो क्रियायें हैं, जाने की क्रिया देखने के निमित्त होती है अत एव 'दृश्' में तुमुन् प्रत्यय लगाकर द्रष्टुम् रूप बनाया है।

तुमुन् प्रत्यय 'के लिए' अर्थ का सूचक है। तुमुन् प्रत्यय का 'तुम्' शेष रहता है।

पाठ्यक्रम में निर्धारित धातुओं के तुमुन् प्रत्ययान्त रूप—

धातु	तुमुन्-अन्त	धातु	तुमुन्-अन्त
वद्	वदितुम्	अस्	भवितुम्
		हन्	हन्तुम्
दृश्	द्रष्टुम्	दा	दातुम्
हस्	हसितुम्	दिव्	देवितुम्
पा	पातुम्	नृत्	नर्तितुम्
खाद्	खादितुम्	जन्	जनितुम्
जि	जेतुम्	चि	चेतुम्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नी	नेतुम्	मृ	मर्तुम्
सेव्	सेवितुम्	मुच्	मोक्तुम्
लभ्	लब्धुम्	विद्	वेत्तुम्-वेदितुम्
रभ्	रब्धुम्	सिच्	सेक्तुम्
ब्रू	वक्तुम्	सृज्	स्रष्टुम्
गण्	गणयितुम्	भिद्	भेत्तुम्
भक्ष्	भक्षयितुम्	छिद्	छेत्तुम्
कृ	कर्तुम्	चुर्	चोरयितुम्
कथ	कथयितुम्		

—०००—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection